भाषा ज्ञान एवं रचना बोध

राजस्थान विश्वविद्यालय की त्रिवर्षीय बी० ए०
कक्षाओं की अनिवार्य हिन्दी के पाठ्यक्रमानुसार

विद्या भवन - जयपुर

भाषा ज्ञान

एवं

रचना बोध

राजस्थान विश्व-विद्यालय की त्रिवर्षीय बी. ए.
कक्षाओं की अनिवार्य हिन्दी के लिए

भाषा ज्ञान
एवं
रचना बोध

लेखक

सत्येन्द्र चतुर्वेदी एम. ए.

हिन्दी प्राध्यापक, महाराजा कालेज, जयपुर

तथा

चांदमल जैन एम. ए., बी. टी.

हिन्दी प्राध्यापक

एस. एस. जैन सुबोध कालेज, जयपुर

विद्या भवन

पुस्तक-प्रकाशक, जयपुर

विद्या भवन चौड़ा रास्ता जयपुर द्वारा प्रकाशित

प्रथम संस्करण १९६०
द्वितीय संस्करण १९६२

मातृभूमि प्रिंटिंग प्रेस, चौड़ा रास्ता, जयपुर द्वारा मुद्रित

परिचय

प्रस्तुत पुस्तक राजस्थान विश्वविद्यालय की त्रिवर्षीय बी. ए. कक्षाओं के प्रथम वर्ष के विद्यार्थियों के लाभार्थ लिखी गई है। राजस्थान विश्वविद्यालय ने इन कक्षाओं के पाठ्यक्रम में भाषा-ज्ञान तथा निवन्ध एवं पत्र रचना आदि को विशेष स्थान दिया है। वार्षिक परीक्षा के प्रश्न पत्र के सम्पूर्ण अंकों में से लगभग आधे उक्त परीक्षाओं में इस भाग के लिए नियत है। इस दृष्टि से इस अंश का महत्वपूर्ण स्थान असंदिग्ध है।

पुस्तक का प्रणयन करते समय इस बात का पूरा प्रयास किया गया है कि इसमें सभी आवश्यक और उपयोगी विषयों का समावेश हो जाय ताकि विद्यार्थीगण समुचित रूप में हिन्दी भाषा और उसके व्यवहारिक स्वरूप की जानकारी प्राप्त कर सकें। पुस्तक के प्रस्तुत संस्करण मे काफी परिवर्तन कर दिया गया है। पाठ्यक्रमानुसार पुस्तक में अंग्रेजी भाषा एवं संस्कृत भाषा से हिन्दी में अनुवाद को भी स्थान दिया गया है। कुछ नये परीक्षापयोगी निवन्ध भी जोड़ दिए गये है तथा पुस्तक के अन्त में विश्वविद्यालय के प्रश्न पत्र भी दे दिये गये हैं।

इस पुस्तक का क्षेत्र इतना व्यापक और वितृस्त है कि हिन्दी भाषा और उसका रूप विघान समझने-सीखने के इच्छुक सामान्य व्यक्ति भी इसका समयक् अध्ययन कर पर्याप्त मात्रा में लाभान्वित हो सकते हैं। इस नाते भी प्रस्तुत कृति की उपादेयता उल्लेखनीय है।

अन्त में सभी विद्वज्जनों से अनुरोध है कि वह पुस्तक में कोई किसी प्रकार की भूल या अभाव अनुभव करें तो हमें अवश्य अपना रचनात्मक सुझाव दें, हम उनके अतीव आभारी होंगे और भविष्य में यथा सम्भव उनका निराकरण करेंगे।

लेखकद्वय

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

शब्द-बोध

विषय-प्रवेश

अपने विचार दूसरों पर प्रकट करने के लिए या दूसरों के भावों और विचारों को भली प्रकार समझने के लिए मनुष्य वाणी, लिपि और इंगितों को काम में लाता है।

जब मनुष्य वाणी के द्वारा बोल कर दूसरों को समझाता है, तब उस बोल कर समझाने की प्रणाली को भाषा कहते हैं। इसी भाषा को जब लिखित संकेतों द्वारा प्रकट किया जाता है, तब वह लिपि कहलाती है। वास्तव में लिपि कुछ नहीं है, वह केवल मुख से निर्गत ध्वनियों का संकेत मात्र है। जब मनुष्य न बोल कर और न लिख कर, प्रत्युत केवल इशारों द्वारा अपने विचारों एवं भावों को प्रकट करता है, तब उसे इंगित या सांकेतिक भाषा कहते हैं।

भाषा वाक्यों से मिलकर बनती है और वाक्य शब्दों से। शब्दों का ऐसा समूह जिसका पूरा-पूरा अर्थ निकले वाक्य कहलाता है। वह ध्वनि अथवा ध्वनि समूह जो मुंह से बोला जाय या कान से सुना जाय, शब्द कहलाता है। शब्द सार्थक भी हो सकते हैं और निरर्थक भी।

सबसे छोटी ध्वनि को जिसका कोई खंड न हो सके, वर्ण या अक्षर कहते हैं। वर्णों का वह समूह जिसका कुछ अर्थ निकले, शब्द कहलाता है। वर्ण दो प्रकार के होते हैं—स्वर और व्यंजन। स्वर और व्यंजन के समुदाय को वर्णमाला कहते हैं।

उत्तम रचना ही ज्ञान-वृद्धि और विचाराभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है। उत्तम रचना के लिए रचयिता को चाहिए कि उसकी रचना में भाषा

शुद्ध, परिमार्जित और मुहावरेदार हो, वाक्य-विन्यास सरल और सार-गर्भित हो, वाक्यों में शब्दों का समुचित प्रयोग हो, विषय और भाव के अनुसार अनुच्छेद-परिवर्तन हो, व्याकरण-सम्बन्धी कोई त्रुटि न हो और विराम चिन्हों का यथास्थान प्रयोग हो।

सुन्दर वाक्य--रचना शब्दों के समुचित प्रयोग पर निर्भर है, अतः सर्व-प्रथम शब्द-ज्ञान पर ही विचार किया जायगा। शब्द की शक्ति महान् है। एक शब्द के कई अर्थ हैं और एक ही अर्थ वाले कई शब्द हैं, परन्तु प्रत्येक शब्द की अपनी निजी विशेषता है और अपना पृथक् अर्थ है। उदाहरण के लिए मेघ, घन, जलद, बादल, जलधर आदि समानार्थक हैं और सब बादल के पर्याय-वाची हैं, किन्तु इनमें से प्रत्येक शब्द अपना निजी सौन्दर्य रखता है, जहां जलधर शब्द की अपेक्षा है, वहां मेघ शब्द का प्रयोग ठीक नहीं कहा जा सकता। शब्दों के अर्थ-भेद की यह सूक्ष्मता धीरे-धीरे अभ्यास एवं अनुभव से समझ में आती है। समानार्थक, एकार्थक, नानार्थक आदि शब्दों का प्रयोग वाक्य-रचना में बड़ी सावधानी से करना चाहिए।

(१) शुद्ध-लेखन

शुद्ध और सुन्दर लिखना बहुत महत्व रखता है। लिखा हुआ चाहे सुन्दर न हो, परन्तु वह शुद्ध अवश्य होना चाहिए। लिखने में अशुद्धियाँ कई प्रकार की होती हैं—वर्तनी की, शब्दों के गलत प्रयोग की, दूषित वाक्य-रचना की, विराम-चिन्हों के अभाव की आदि-आदि। यहां केवल वर्तनी की अशुद्धियों के विषय में ही विचार किया जायगा। छात्र यदि ह्रस्व, दीर्घ मात्राए, अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु, विसर्ग और संयुक्ताक्षरों का थोड़ा ध्यान रखें और लिखते समय यदि वे अपने मन में उनका उच्चारण भी करते जाँय, तो वे वर्तनी की अशुद्धियां नहीं करेंगे। लिखते समय शब्द की ध्वनि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। यहाँ कुछ साधारण और प्रचलित शब्द, जिनके लिखने में छात्र प्रायः गलती करते हैं शुद्ध-अशुद्ध दोनों रूपों में दिये जाते हैं—

(१)

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अती	अति	अत्योक्ति	अत्युक्ति

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
आधीन	अधीन	दुख	दुःख
आवश्यकीय	आवश्यक	दृष्य	दृश्य
इस्त्री	स्त्री	धई	दही
ईर्षा	ईर्ष्या	धन	धन्य
उत्तर	उत्तर	धुँआ	धुआँ
उपरोक्त	उपर्युक्त	धेय	ध्येय
उपर	ऊपर	धोका	धोखा
एश्वर्य	ऐश्वर्य	नहिं	नहीं
ऐक्यता	ऐक्य	परिक्षा	परीक्षा
कहा के	कहा कि	परीश्रम	परिश्रम
कवी	कवि	पधांश	पद्यांश
कोतुहल	कौतूहल	पर्म	परम
क्यों के	क्योंकि	पुन्य	पुण्य
खडा	खड़ा	पूज्यनीय	पूज्य, पूजनीय
खंवा	खंभा	पैत्रिक	पैतृक
गधांश	गद्यांश	प्रगट	प्रकट
गुरु	गुरू	प्रयक	पृथक्
गुन	गुण	प्रत्तयुत	प्रत्युत
गंधा	गंदा	वनिता	वनिता
ग्यान	ज्ञान	व्रज	ब्रज
चिन्ता	चिन्ता	विध्या	विद्या
चवर	चँवर	सन्मुख	सम्मुख
चांद	चाँद	हंसना	हँसना
तांता	ताँता	मान्सिक	मानसिक
तत्तकाल	तत्काल	द्रढता	दृढ़ता
दाक्षिन्य	दाक्षिण्य	करर्व्य	कर्तव्य
दुरावस्था	दुरवस्था	उत्कष्ट	उत्कृष्ट

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
द्रष्ट्व्य	द्रष्टव्य	स्वभाविक	स्वाभाविक
महत्व	महत्त्व	व्यवहारिक	व्यावहारिक
विषेश	विशेष	प्रसंशा	प्रशंसा
अधिकारणी	अधिकारिणी	धैर्यता	धैर्य
शत्रुघन	शत्रुघ्न	सीतल	शीतल
सहस्त्र	सहस्र	दांत	दाँत
संसोधन	संशोधन		

अब यहां कुछ ऐसे शब्दों का केवल शुद्ध रूप दिया जाता है जिनको लिखते समय छात्र झिझका करते हैं और सन्देह में पढ़ जाते हैं कि वे क्या रूप लिखें।

(२)

उन्नति	उपाधि	ग्रहण	टुटपुंजिया
उद्देश्य	ऋण	गार्हस्थ्य	ठुड्डी
उद्योग	ऋषि	गँदला	ठुंठ
उपर्युक्त	ऋद्धि	गँवार	डमरु
अभ्युदय	ऋतु	घृणा	ड्योढ़ी
आह्लाद	ऐक्य	घुँघरू	ढिंढोरा
आह्वान	ऐश्वर्य	चिह्न	ढीठ
अश्लील	औषध	जन्माष्टमी	तीव्र
अत्युक्ति	कृत्रिम	जिज्ञासा	तात्पर्य
अन्तर्धान	कृपा	जाग्रत	त्रैमासिक
ईर्ष्या	कृष्ण	जागृति	द्विधा
अनुग्रह	कुटुम्ब	ज्योतिष	द्वितीय
अध्ययन	कैकेयी	ज्येष्ठ	नरक
आविष्कार	क्षितिज	झँगुला	निष्ठा
इन्द्रिय	क्षण	झेंप	नृशंस
अर्वाचीन	गृहस्थ	टाँकना	नृसिंह

नीरोग	मातृभूमि	वृक्ष	श्रेष्ठ
निःसंकोच	मुहूर्त	व्यापार	श्रान्त
निर्दोष	मैथिली	व्रत	सदृश
परिष्कृत	युधिष्ठिर	व्यवहार	सम्मुख
पूर्ति	योद्धा	विष	सम्मान
पूजनीय	राजर्षि	विघ्न	साधु
पृथिवि	रुपया	शाप	सान्त्वना
पृथ्वी	रत्न	शिथिल	समिति
पृथक्	लक्ष्य	शिष्ट	स्थायी
प्रयत्न	वक्तृता	शीर्षक	स्थिति
पर्याप्त	बृहस्पति	शुश्रूषा	स्वयंवर
प्रत्यक्ष	व्रज	शृंखला	स्वास्थ्य
प्रशंसा	वज्र	शृंगार	हृदय
भ्रकुटि	वाल्मीकि	शृगाल	ह्रस्व
महर्षि	विप्लव	श्मशान	हृष्ट-पुष्ट

अभ्यास

नीचे लिखे शब्दों के शुद्ध रूप लिखिये :—

उद्गार, प्रशंसा, कवीता, तांगा, सरीर, वो, स्वयम, रिन, रिसी, प्रतिग्या, दक्षिन, कहां, प्रेरना, मरम, प्रातकाल, निरोग, पाहड़, विपति, स्वप्न, दुखद, ध्रष्ट, जिव्हा, गेहू, दांत, कलेश, कुश्रा, माधुर्यता, पतनी ।

(२) समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द

कुछ शब्द ऐसे है जो उच्चारण में तो मिलते-जुलते हैं, परन्तु अर्थ में भिन्न होते है। ऐसे शब्दों के अर्थों पर अच्छी तरह ध्यान रखते हुए बड़ी सावधानी से उनका प्रयोग करना चाहिए। कुछ शब्दों का प्रयोग नीचे दिया जाता है —

१. अविराम=लगातार।

प्रयोग—वह आठ घंटे से अविराम परिश्रम कर रहा है।

अभिराम=सुन्दर।

प्रयोग—काश्मीर के अभिराम दृश्यों को देखकर इन्द्र-कानन लजाता है।

२. तरणि=सूर्य

प्रयोग—यमुना तरणि-तनुजा कहलाती है।

तरणी=नौका।

प्रयोग—बिना राम-नाम रूपी तरणी के भव-सागर पार करना कठिन है

३. गृह=घर।

प्रयोग—गृह की शोभा गृहिणी से ही है।

ग्रह=नक्षत्र (सूर्य, चन्द्र आदि)।

प्रयोग—वैज्ञानिक मंगल-ग्रह तक पहुँचने का प्रयत्न कर रहे हैं।

४. जलद=बादल।

प्रयोग—चातक की पुकार सुन कर जलद जल वर्षण करते हैं।

जलधि=समुद्र।

प्रयोग—थोड़ा जल पाकर नदियाँ उफनाने लगती हैं, परन्तु जलधि अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता।

५. अपेक्षा=इच्छा, बनिस्पत।

प्रयोग—राम को अब किस बात की अपेक्षा है, उसके पास सब कुछ है

हरि की अपेक्षा मोहन अधिक समझदार है।

उपेक्षा=तिरस्कार, लापरवाही।

प्रयोग—जो अपने कर्त्तव्य-कर्म की उपेक्षा करता है, वह उठाता है।

६. ओर=तरफ।

प्रयोग—वह मेरी ओर घूर-घूर कर देखता है।

और=अन्य, दूसरा।

प्रयोग—राम और हरि परस्पर मिल रहे है।

७. उद्धत=उद्दण्ड।

प्रयोग—राम बड़ा ही उद्धत लड़का है। वह सदा ही दूसरों से छेड़छाड़ किया करता है।

उद्यत=तैयार।

प्रयोग—मैं सब कुछ करने को उद्यत हूँ बशर्ते कि मैं पास हो जाऊं।

८. कुल=वंश।

प्रयोग—राजपूत अपने कुल की मर्यादा का सदा ध्यान रखते थे।

कूल=तट, किनारा।

प्रयोग—बाढ़ के कारण इस नदी के दोनों कूल दूर तक कट गये हैं।

९. उद्यम=प्रयत्न।

प्रयोग—बिना उद्यम कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता।

उधम=उपद्रव।

प्रयोग—मोहन आजकल बहुत उधम मचाने लगा है।

१०. शर=बाण।

प्रयोग—तीक्ष्ण शरों से विद्ध होकर वह रण-क्षेत्र में गिर पड़ा।

सर=सरोवर, तालाब।

प्रयोग—सब सरों में मानसरोवर पवित्र मानी जाती है।

११. शुल्क=फीस, चन्दा।

प्रयोग—इस पत्रिका का वार्षिक शुल्क क्या है?

शुक्ल=स्वच्छ, सफ़ेद।

प्रयोग—मेरा जन्म शुक्ल पक्ष में हुआ था। हंस के पंख शुक्ल होते हैं।

१२. प्रसाद=कृपा, देवता का भोग।

प्रयोग—गुरुजनों के प्रसाद से मेरा कार्य सफल हो गया। उत्तीर्ण होने पर उसने गणेशजी के प्रसाद चढ़ाया।

प्रासाद=महल।

प्रयोग—भव्य प्रासादों में निवास करने वाले उन दीन-दुखियों के कष्ट को क्या जाने जो सड़क पर सोकर रात गुजारते हैं।

१३. अंस=कन्धा

अंश=हिस्सा, भाग

१४. अनल=अग्नि
अनिल=हवा

१५. अनिष्ट=बुरा
अनिष्ठ=निष्ठाहीन

१६. अनु=एक उपसर्ग जो पीछे के अर्थ में प्रयुक्त होती है, जैसे अनुज, अनुगमन, अनुशरण
अणु=पदार्थ का सबसे छोटा विभाग

१७. अन्य=दूसरा
अन्न=अनाज

१८. अपकार=बुराई
उपकार=भलाई

१९. अवलंब=आश्रय, सहारा
अविलंब=शीघ्र, तुरन्त

२०. अपमान=निरादर
उपमान=वह वस्तु जिससे किसी की तुलना की जाय

२१. अशक्त=शक्तिहीन, कमजोर
असक्त=आसक्ति रहित, उदासीन

२२. अभिज्ञ=जानकार
अनभिज्ञ=न जानने वाला

२३. आकर=खान
आकार=रूप, आकृति

२४. आदि=प्रारंभ
आधि=मानसिक पीड़ा

२५. आशंका=भय
शंका=सन्देह

२६. कटक=सेना
कंटक=काँटा

२७. कृत=किया हुआ
कृत्य=काम

२८. कान=सुनने की इन्द्रिय
कानि=मर्यादा

२९. कोर=किनारा, छोर
कौर=ग्रास

३०. गर्व=घमन्ड
गर्भ=भीतर का, पेट का बच्चा

३१. चिर=दीर्घकाल-स्थायी
चीर=वस्त्र

३२. छत्र=छत्ता
क्षत्र=योद्धा, राज्य

३३. छात्र=विद्यार्थी
क्षात्र=क्षत्रियोचित

३४. जलद=बादल
जलज=कमल

३५. तरणी=नौका
तरुणी=युवती

३६. तर्क=युक्ति, दलील
तक्र=छाछ, मठ्ठा

३७. तरंग=लहर
तुरंग=घड़ा

३८. दिन=दिवस
दीन=गरीब, दुखी

३९. द्वीप=टापू

द्विप=हाथी
दीप=दीपक
४०. दूत=संदेश-वाहक
द्यूत=जुआ
४१. धन=स्त्री, माल
धन्य=वाह-वाह
४२. धनी=मालदार
धणी=पति, स्वामी
४३ नर्क=नाक
नक्र=घड़ियाल, मगर
४४. नाक=स्वर्ग, मर्यादा, घ्राणेन्द्रिय
नाग=सर्प, हाथी
नग=पहाड़
४५. निर्धन=धनहीन
निधन=मृत्यु
४६. पानी=जल, चमक, प्रतिष्ठा
पाणि=हाथ
४७. पिक=कोयल
पीक=पान का थूक
४८. प्रकार=ढंग, रीति
प्राकार=परकोटा
४९. परुष=कठोर
पुरुष=नर
५०. प्राच्य=प्राचीन
प्राची=पूर्व दिशा
५१. प्रथा=रीति, रिवाज
पृथा=कुन्ती
५२. प्रणाम=नमस्का
प्रमाण=सबूत
५३. परिमाण=मात्रा
परिणाम=फल, नतीजा
५४. प्रकृत=वास्तविक, यथार्थ
प्राकृत=भाषा विशेष,नीच,साधारण
५५. प्रवाह=बहाव
प्रभाव=असर
५६. पावस=वर्षा ऋतु
पायस=खीर
५७. बलाक=बगुला
बलाहक=बादल
५८. बलि=भेंट, बलिदान
बली=बलवान
५९. भान=प्रकाश, ज्ञान
भानु=सूर्य
६०. भुवन=लोक
भवन=घर
६१. मानस=मन
मानुष=मनुष्य
६२. मधुकरी=भौंरी
मधूकरी=रोटी (भिक्षा)
६३. मूल=जड़
मूल्य=कीमत
६४. मात्र=केवल
मातृ=माता
६५. मनोज=कामदेव
मनोज्ञ=सुन्दर
६६. युक्ति=तरकीब

उक्ति=कथन
६७. रंबा=जुलाहे का एक औजार
रंभा=केला
६८. लक्ष=लाख
लक्ष्य=निशाना
६६. वारिद=बादल
वारिधि=समुद्र
७०. वाद=तर्क, बहस
बाद=वायु, घोड़ा
७१. वात=वायु, हवा
बात=कथन, बातचीत
७२. वृन्त=डंठल
वृन्द=समूह
७३. वसन=कपड़ा
व्यसन=कुटेव
७४. वसुदेव=श्री कृष्ण के पिता
वासुदेव=वसुदेव के पुत्र, श्रीकृष्ण
७५. व्याध=शिकारी
व्याधि=बीमारी
७६. सर्वदा=सदा
सर्वथा=सब प्रकार से
७७. स्रोत=धारा, सोता
श्रोत्र=कान
७८. सर=तालाब
शर=बाण
७६. साला=पत्नी का भाई
शाला=स्थान
८०. साल=वर्ष, जल्म, धान
शाल=वस्त्र (चादर), एक पेड़
८१. सुत=पुत्र, बेटा
सूत=रथवाहक
८२. संकर=मिश्रण
शंकर=महादेव
८३. सूर=सूर्य
शूर=वीर
८४. सकल=सब
शकल=टुकड़ा
८५. सारंग=इन्द्र, मयूर, बादल
सारंगी=एक वाद्य यन्त्र
८६. सूचि=सुई
सूची=भेदिया
८७. सम=समान, समता
शम=शांति
८८. सील=नमी, मोहर, ठप्पा
शील=शुद्ध, चरित्र, सद्वृत्ति
८६. सुवन=पुत्र
सुमन=फूल
६०. सर्ग=अध्याय, सृष्टि, भाग
स्वर्ग=देवलोक
६१. ह्रद=सरोवर
हृद=हृदय
६२. हाल=दशा, कमरा
हाला=मदिरा
६३. आवरण=ढक्कन, पर्दा
आभरण=आभूषण

९४. चर्म=चमड़ा
चरम=अन्तिम
९५. गेय=गाने योग्य
ज्ञेय=जानने योग्य
९६. स्वगत=अपने आप
स्वागत=सम्मान
९७. हरिण=जंगल का एक पशु
हिरण्य=सोना
९८. प्रवाद=किंवदन्ती
प्रमाद=गफलत, भूल-चूक
९९. सुवर्ण=सोना
सवर्ण=समान रंग वा जाति का
१००. नियत=निश्चित
नियति=भाग्य
१०१. जलद=बादल
जलधि=समुद्र
१०२. वृत्त=समाचार, जीविका
वित्त=धन
१०३. नीर=जल
नीड़=घोंसला
१०४. अर्घ=पूजा का जल
अर्घ्य=बहुमूल्य
१०५. अलि=भौंरा
आलि=निकम्मा, सुस्त
१०६. नाग=साँप, हाथी
नग=पहाड़, रत्न आदि
१०७. कृतज्ञ=उपकार मानने वाला
कृतघ्न=उपकार को भूल जाने वाला
१०८. निर्माण=बनाना
निर्वाण=समाप्ति
१०९. भित्ति=दीवार
भीति=भय, डर
११०. पावस=वर्षा ऋतु
पायस=खीर
१११. दर्प=अभिमान के कारण दूसरों की अवज्ञा करना
दर्पण=काँच, शीशा

अभ्यास

नीचे लिखे शब्द-युग्मों का अर्थ लिख कर स्व-रचित वाक्यों में प्रयोग करिए:—

सर—शर, स्तोत्र—श्रोत, ह्रद—हृद, शुक्ल—शुल्क, भवन—भुवन, सूर—शूर, प्रकार—प्राकार, आय—आयु, नाक—नाग, मूल—मूल्य, वलि—बली, पावस—पायस, वसन—व्यसन, आकार—आकर, उद्यम—उधम, चिर—चीर।

(३) एकार्थक शब्द

कुछ शब्द ऐसे हैं जो देखने पर तो एक सा ही अर्थ देते हैं, परन्तु उनमें

अर्थ-भेद होता है। ऐसे शब्दों के अर्थ में बहुत ही सूक्ष्म अन्तर होता है, अतः ऐसे शब्दों का प्रयोग उनके उचित अर्थ में ही किया जाना चाहिए।

१. अस्त्र—वे हथियार जो दूर से फेंके जायं, जैसे—बाण, गोली।
   शस्त्र—वे हथियार जो हाथ में रख कर ही काम में लिये जायं, जैसे—तलवार, लाठी।
   प्रयोग—शस्त्रों का युग तो गया, अब तो स्वयं-चालित अस्त्रों का युग है।

२. अहंकार—अपनी सत्ता का बोध होना, जितना हो उससे अपने को अधिक समझना। जैसे—राम को अपनी योग्यता का बड़ा अहंकार है।
   अभिमान—वास्तविक बात पर घमंड करना। जैसे—उसको धन का अभिमान है। अपने देश-नेताओं पर कौन अभिमान नहीं करता।

३. मद—किसी बात का नशा हो जाना। जैसे—यह सेठ धन के मद में चूर हो रहा है, अपने आगे किसी को समझता ही नहीं।
   मान—आत्म-सम्मान अथवा अपनी प्रतिष्ठा के अर्थ में मान का प्रयोग होता है। जैसे—चाहे सर्वस्व चला जाय, परन्तु मनुष्य का मान नहीं जाना चाहिए। मान का तो पान ही भला।

४. गौरव—अपने बड़प्पन का यथार्थ ज्ञान होना। जैसे—राजपूतों ने अपने गौरव की रक्षा के लिए हँसते-हँसते प्राण दिये हैं।
   घमंड—शेखी; झूंठा अभिमान। अपने सामने किसी को कुछ न समझना।
   जैसे—भैया, घमंड मत करो; घमंडी का सिर सदा नीचा होता है। श्री हरि को अपनी विद्वत्ता का बड़ा घमंड था, किन्तु श्री मनु के प्रश्नों का वे एक का भी उत्तर नहीं दे सके।

५. दर्प—चित्त का वह भाव जिसके कारण मनुष्य दूसरों की अवज्ञा करे और दूसरों को कुछ न समझे। जैसे—तुमको अपनी शक्ति पर इतना दर्प है कि तुम राजाज्ञा का भी उल्लंघन करते हो।
   दंभ—पाखंड, ढकोसला, आडम्बर, स्वार्थ-वश दूसरों को धोखा देने के लिए प्रदर्शन करना। जैसे—तुम भोले हो, समझते नहीं, यह सब

उसका दंभ है, तुम से रुपया ऐंठने के लिए ही उसने यह ठाठ खड़ा किया है।

६. गर्व—घमंड, गरूर, धन, विद्या, रूप आदि में अपने को दूसरों से बढ़कर और दूसरों को अपने सामने छोटा समझने का भाव। जैसे—भगवान किसी का गर्व नहीं रखते। धन का गर्व मत करो, इसको जाते देर नहीं लगती।

गौरव—आत्म-मर्यादा या बड़प्पन की भावना का यथार्थ ज्ञान। जैसे—राष्ट्र का गौरव ही हमारा गौरव है।

७. प्रयत्न—किसी कार्य या उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया श्रम अथवा व्यापार। यह मानसिक भी हो सकता है और शारीरिक भी। जैसे—लोमड़ी ने बहुतेरा प्रयत्न किया, किन्तु वह अंगूरों के गुच्छे तक न पहुँच सकी।

प्रयास—बौद्धिक या मानसिक प्रयत्न। जैसे—गणित के विद्यार्थियों को दूसरों की अपेक्षा अधिक बौद्धिक प्रयास करना पड़ता है।

८. अमूल्य—वह वस्तु जिसका कोई मूल्य ही न आंका जा सके। जैसे—चरित्र एक अमूल्य निधि है। विद्या एक अमूल्य पदार्थ है।

बहुमूल्य—जिसका मूल्य बहुत अधिक हो। जैसे—हीरा एक बहुमूल्य वस्तु है।

९. कृपा—छोटों के प्रति सहायता का भाव। जैसे—सब कुछ आपकी कृपा पर निर्भर है।

दया—दूसरे के दुःख को देख कर उसे दूर करने की इच्छा उत्पन्न होना। जैसे—दीनों पर दया करना सज्जनों का काम है। उसकी हीनावस्था देख कर मुझे दया आती है।

१०. करुणा—दूसरे को दुखी देख कर दया उत्पन्न होना। जैसे—इन अपंगों को देख कर जिनके हृदय में करुणा न उमड़ी, वे सचमुच वज्र के बने है।

अनुकम्पा—दया। जैसे—भगवान की अनुकम्पा से सब कुछ ठीक हो गया।

११. सेवा—देवता अथवा पूज्य पुरुषों को सन्तुष्ट करने के लिए कार्य करना। जैसे—बिना गुरु सेवा के ज्ञान नहीं मिलता।

शुश्रूषा—रोगी या दुखी की सेवा करना। जैसे—पिताजी के रुग्ण होने पर मैंने ही इस बार उनकी शुश्रूषा की थी।

१२. लज्जा—स्त्रियों का स्वाभाविक गुण, अनुचित कार्य हो जाने पर दूसरों से मुंह छिपाना। जैसे—शीला नवविवाहिता है, अभी लज्जा के कारण वह अधिक नहीं बोलती है। ऐसे कुकर्म पर तुमको लज्जा आनी चाहिए।

ग्लानि—किसी बुरे कार्य के हो जाने पर हृदय में पछताना या एकान्त में लजाना। जैसे—जब भरत को ज्ञात हुआ कि उन्हीं के कारण रामचन्द्र जी को वनोवास दिया गया है तो वे ग्लानि से गड़ गये।

१३. संकोच—द्विधाजनक स्थिति; हिचकिचाहट; अनावश्यक दबाव। जैसे—क्यों संकोच कर रहे हो? जो कुछ कहना है, स्पष्ट कहो।

व्रीड़ा—अकारण दोष लगाये जाने पर लज्जित होना। जैसे—उसने उस समय अत्यधिक व्रीड़ा का अनुभव किया जब उसके मित्र हरि राम ने ही उस पर चोरी का झूठा आरोप लगाया।

१४. भक्ति—देवता, ईश्वर या गुरू के प्रति अनुराग। जैसे—तुलसीदासजी की राम के प्रति अनन्य भक्ति थी। गुरू भक्ति ही अज्ञानांधकार को दूर करती है।

श्रद्धा—बड़ों के प्रति अनुराग। जैसे—कौन भारतवासी ऐसा होगा जिसकी श्री नेहरू के प्रति श्रद्धा न हो?

१५. मित्र—जो प्रीति-पात्र और सहायक हो, वह मित्र कहलाता है। जैसे—राम सुग्रीव का मित्र था। मित्र वही है जो विपत्ति में साथ दे।

सुहृत्—स्नेह युक्त हृदय वाला, सदा अनुकूल रहने वाला साथी जैसे—संसार में सच्चा सुहृत् मिलना बड़ा कठिन है।

१६. सखा—जो सुख-दुःख में साथ दे। जैसे—सुदामा श्री कृष्ण के बाल सखा थे। सूरदास जी श्री कृष्ण को अपना सखा समझते थे।

सहचर—साथ चलने या रहने वाला व्यक्ति, मित्र, सम्बन्धी, सेवक

आदि कोई भी हो सकता है। जैसे—हनुमान राम के सच्चे सहचर थे। जो सदा साथ दे, साथ रहे, वही सहचर है।

१७. **स्त्री**—कोई भी औरत। जैसे शीला एक स्त्री है।

पत्नी—व्यक्ति विशेष की विवाहिता स्त्री। जैसे—राम की पत्नी सीता थी।

१८. **महिला**—भले घर की या संभ्रान्त कुल की कोई भी स्त्री, चाहे वह विवाहिता हो या कँवारी। जैसे—यह महिला कक्ष है, तुम्हें यहां नहीं ठहरना चाहिए। पुरुषों के साथ महिलाएं भी आयेंगी, बैठाने का ठीक प्रबन्ध करलो।

नारी—नर का स्त्रीलिंग नारी है। जैसे—अपमानित होकर नारी चुप नहीं बैठ सकती। नारी-निन्दा मत करो।

१६. **मंत्रणा**—गुप्त रूप से सलाह की जाय। जैसे—राजा ने मंत्रियों से मंत्रणा करने के अनन्तर आदेश निकाला। जब तक मैं अपने मित्र से मंत्रणा न करलूं तब तक मैं आपको कोई उत्तर नहीं दे सकता।

परामर्श—सलाह। जैसे—मैंने उसको परामर्श दिया कि वह स्वयं इस स्थान को छोड़े। इस सम्बन्ध में यदि आप चाहें तो अपने पिता जी से परामर्श कर लीजिए।

२०. **प्रेम**—किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति स्वाभाविक अनुराग। जैसे—मुझे संगीत से प्रेम है। भाई साहब का मुझ से बड़ा प्रेम है।

स्नेह—बड़ों का छोटों के प्रति प्रेम। जैसे—पिताजी मुझ पर बहुत स्नेह रखते हैं।

२१. **आलस्य**—काम करने की अनिच्छा, सुस्ती, ढिलाई। जैसे—तुम कैसे आदमी हो, हर काम में आलस्य करते हो।

प्रमाद—जान-बूझ कर आवेश में आकर भूल करना। जैसे—क्षमा कीजिए श्रीमान्, प्रमाद-वश मुझ से यह अपराध हो गया।

२२. **भ्रम**—भूल, चक्कर, मिथ्या ज्ञान (एक वस्तु को दूसरी वस्तु समझ लेना) जैसे—तुम किस भ्रम में पड़े हो? वहां क्यों नहीं चले जाते। उसने भ्रम-वश रस्सी को सर्प समझ लिया।

सन्देह—अनिश्चय; द्विविधा। जैसे—पुलिस ने उसको सन्देह मे गिरफ्तार कर लिया। वह ठीक समय पर रुपया चुका देगा, मुझे सन्देह है।

२३. वात्सल्य—माता-पिता का अपनी सन्तान के प्रति और गुरू का अपने शिष्य के प्रति जो प्रेम होता है, वह वात्सल्य कहलाता है। जैसे—सूर का वात्सल्य-वर्णन उच्च कोटि का है।

प्रणय—प्रेम; दाम्पत्य-प्रेम। जैसे—पति-पत्नि मे प्रायः प्रणय-कलह उत्पन्न हो जाया करती है।

२४. शम—अन्तः करण और मन का संयम; मन को सांसारिक वस्तुओं से हटाना; मन की स्थिरता। जैसे—योग-साधना मे शम का बड़ा महत्व है।

दम—इन्द्रियों को अपने वश में करना जैसे—विषयों से इन्द्रियों को हटाना ही दम है।

२५. स्पर्द्धा—दूसरे की उन्नति देख कर स्वयं भी उन्नति करने की चेष्टा करना। *जैसे—हरि और मोहन मे स्पर्द्धा चल रही है, देखें, कौन प्रथम* आता है।

डाह—दूसरे की उन्नति या बढती देख कर दिल मे कुढ़ना या जलना। जैसे—राम ने तीन वार पारितोपिक प्राप्त किया, हरि को एक वार भी न मिला। इसी कारण हरि राम से डाह रखता है।

२६. निवेदन—नम्रता-पूर्वक साधारणतया कहना। जैसे—उपस्थित सज्जनों मे निवेदन है कि वे यथास्थान बैठ जांय।

प्रार्थना—छोटों द्वारा बड़ों के प्रति कार्य-विशेष के लिए कहना। जैसे—मैंने माता जी से प्रार्थना की कि वे मुझे भी यात्रा में साथ ले चले। क्या इस सेवक की प्रार्थना पर आपने कोई ध्यान नही दिया ?

२७. आधि—मानसिक कष्ट। जैसे—चिन्ता; शोक; व्यापार आदि मे हानि उठाना; धन, पुत्र, स्त्री आदि का अभाव महसूस करना।

व्याधि—शारीरिक कष्ट। जैसे—ज्वर, पीड़ा आदि।

२८. ईति—प्राकृतिक उपद्रव। जैसे—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकंप, संक्रामक रोग का फैलना आदि।

भीति—डर, भय। जैसे—राज्य का आधार प्रीति होना चाहिए न कि भीति। 'ईति-भीति व्यापे नहिं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे'।

२६. नमस्ते—छोटे-बड़े किसी के भी प्रति विनय सूचित करने के लिए सिर झुकाना या हाथ जोड़ना। जैसे—गुरूजी, नमस्ते। नमस्ते, हरि! आज इधर कैसे आये?

नमस्कार—केवल बराबर वालों के प्रति विनय-सूचक। जैसे—लालाजी! नमस्कार, आज तो कितने ही दिनों में आपने दर्शन दिये हैं।

३०. प्रणाम—केवल अपने से बड़ों के प्रति विनय-सूचक। जैसे—पाठशाला पहुंच कर राम ने गुरूजी को प्रणाम किया।

अभिवादन—आदरणीय व्यक्ति के प्रति खड़े होकर और मुख से कुछ कहकर विनय प्रकट करना और प्रणाम करना। जैसे—मुख्य अतिथि के आने पर हम सबने खड़े होकर उनका अभिवादन किया।

३१. खेद—साधारण भूल या अपराध होने पर अपनी अप्रसन्नता प्रकट करना जैसे—रामू! मुझे खेद है कि मैं आज वहां नहीं जा सका।

क्षोभ—अनिष्ट या किसी कार्य में असफलता होने पर रोष और झुंझलाहट जैसे—दो बार प्रयत्न किया, दो बार ही असफता मिली। अब उसका हृदय क्षोभ से भर गया, वह इस सम्बन्ध में किसी से बात नहीं करता।

३२. अवसाद—खिन्नता, उदासी, हार। जैसे—जो कुछ होना था, हो चुका। अब अवसाद त्याग कर साहस के साथ आगे बढ़ो, विजय-श्री तुम्हारी है।

विषाद—उत्साह-हीनता, निराशा, मन का उचट जाना जैसे—मुगल-सेना से निरन्तर छब्बीस वर्ष तक संघर्ष करते-करते जब राणा प्रताप सब कुछ खो चुके तो उन्हें विषाद ने आ घेरा और वे मेवाड़ त्याग कर अन्यत्र जाने का विचार करने लगे।

[illegible]. यंत्रणा—बन्धन, पीड़ा, का अनुभव। जैसे—जो छात्र माता-पिता की यंत्रणा में नहीं रहते हैं, वे उच्छृङ्खल बन जाते हैं। पुलिस की यंत्रणा बड़ी कठोर होती है।

यातना—कठोर पीड़ा। पाप कर्म करने पर नरक-यातनाएं भोगनी पड़ती हैं। कुकर्मियों को कठोर कारा-यातना सहन करनी पड़ी है।

३४. वेदना—दुःख से उत्पन्न टीस जो कुछ काल तक बनी रहे। जैसे—काँटा निकल गया, किन्तु पैर में अभी तक वेदना बनी हुई है। कुछ ही समय पूर्व उसके पति की मृत्यु हुई है, इसलिए अभी तक उसका हृदय वेदना-विह्वल है।

व्यथा—किसी आघात से उत्पन्न पीड़ा। जैसे—वह दिन-रात विरह-व्यथा में तड़फती रहती है। सहसा व्यापार ठप्प हो जाने के कारण उसे बड़ी व्यथा हुई।

३५. ईर्ष्या—विना कारण किसी से शत्रुता रखना। जैसे—हमने उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ा, फिर भी वह हम से ईर्ष्या रखता है।

द्वेष—किसी कारण-वश किसी से शत्रुता रखना। जैसे—जो वीतराग है, वह किसी से द्वेष नही रखता। राम ने हरि की बुराई की थी, इसलिए वह उससे द्वेष रखता है।

३६. दुःख—किसी भी प्रकार के कष्ट का अनुभव जिससे छुटकारा पाने की प्रवल इच्छा हो। जैसे—संसार मे दुःख कोई नहीं चाहता, सब सुख चाहते हैं। यह सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ कि आपकी ग्यारह वर्ष की पाली-पोषी लड़की चल बसी।

शोक—किसी प्रिय या आत्मीय जन के निधन होने पर उत्पन्न दुःख। जैसे—गांधी जी की मृत्यु का समाचार सुनकर नगर में सर्वत्र शोक छा गया।

३७. भय—कारण-वश किसी अनिष्ट की आशंका से डरना। जैसे—आज कल चोरों का बहुत भय है।

त्रास—किसी के द्वारा दिये जाने वाले कष्ट की कल्पना। जैसे—वालि के त्रास से सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत पर रहता था।

३८. आतंक—शरीर और मन पर भय छाया रहना। जैसे—उस प्रान्त में सदा ही डाकुओं का आतंक छाया रहता है।

आशंका—भविष्य में होने वाले किसी अनिष्ट की संभावना से उत्पन्न डर।

जैसे—मुझे पहले से आशंका थी कि परीक्षा में असफल होकर यह कहीं भाग न जाय। व्यर्थ आशंका क्यों करते हो, जो होना होगा, होकर रहेगा।

३९. आचार—सामाजिक या नैतिक आचरण। जैसे—जिस मनुष्य का आचार शुद्ध है, वह सब जगह सम्मान प्राप्त करता है। कुलीन व्यक्तियों का आचार-विचार सदा ही श्रेष्ठ होता है।

व्यवहार—किसी व्यक्ति-विशेष के प्रति किया गया वर्ताव। जैसे—उसने अपने मृदु व्यवहार से सबको वश में कर लिया। जैसा तुम दूसरों के प्रति व्यवहार करोगे, वैसा ही वे तुम्हारे प्रति करेंगे।

४०. स्वानुभूति—स्वयं का अनुभव। जैसे—किसी भी विषय में जब तक स्वानुभूति न हो, यथार्थ ज्ञान की उपलब्धि नहीं होती।

सहानुभूति—किसी के दुःख आदि से दुखी होना, हमदर्दी। जैसे—भाई! इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुम दुखी हो, मुझे तुम्हारे साथ पूरी सहानुभूति है।

४१. उत्साह—किसी कार्य-विशेष के करने की उमंग। जैसे—आपने उसको ऐसा उत्साह दिलाया कि वह अब आठ-आठ घन्टे परिश्रम करने लगा है।

साहस—साधन के अभाव में भी कार्य करने की लगन। जैसे—कठिनाइयों का साहस के साथ मुकाबला करो। शत्रु के निरन्तर आक्रमणों से भी उसने साहस नहीं छोड़ा।

४२. उद्यम—किसी कार्य में डटकर मन लगाना। जैसे—पेट भरने के लिए तुम्हें उद्यम करना ही होगा। उद्यम करने पर ही सब कार्य सिद्ध होते है।

उद्योग—किसी कार्य को हिम्मत से करते रहना। जैसे—विना उद्योग व्यापार फलीभूत नही होता। जो निरन्तर उद्योग करता रहता है, वह अवश्य सफल होता है।

४३. यत्न—मानसिक और शारीरिक श्रम जो किसी कार्य-सिद्धि के लिए

किया जाय। जैसे—यह कार्य यों ही नहीं हो जायगा, इसके लिए पूरा यत्न करना पड़ेगा।

चेष्टा—शारीरिक व्यापार या श्रम। जैसे—उसकी चेष्टाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि वह अब उस काम को नही करेगा। उत्तीर्ण होने के लिए उसने किंचित् भी चेष्टा नहीं की।

४४. कष्ट—मानसिक या शारीरिक असुविधा। जैसे—यहां ठहरने में कुछ कष्ट तो नहीं है। जो जीवन में थोड़ा सा भी कष्ट नहीं झेल सकता, वह क्या उन्नति कर सकता है?

क्लेश—शारीरिक कष्ट, आपस का झगड़ा। जैसे—दिन रात का क्लेश अच्छा नही क्योंकि इसका अन्त बुरा ही होगा। आजकल कोई पानी भरने वाला नहीं, इसलिए जल भरने का क्लेश उठाना ही पड़ता है।

४५. तर्क—हेतु द्वारा किसी युक्ति की जाँच करना। जैसे—उसके तर्क अकाट्य हैं। उसने तर्क द्वारा प्रमाणित कर दिया कि आत्मा कभी नही मरती।

युक्ति—कार्य की पुष्टि के लिए कोई हेतु देना। जैसे—तर्क के सामने कोरी युक्ति काम नहीं करती। प्रतिवादी की युक्तियों को सुनकर वादी को हार माननी पड़ी।

४६. नीति—लोक-हित के लिए समाज द्वारा बनाये हुए नियम। जैसे—अनीति को त्याग कर नीति पर चलो, तभी कल्याण होगा। यह कोई नीति नहीं कि बड़ा छोटे को सताये।

रीति—अपने कुल या वंश में प्रचलित प्रथा। जैसे—रघु-कुल रीति सदा चलि आई, प्राण जाँय पर वचन न जाई।"

४७. पाप—धर्म-सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन। जैसे—हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील आदि। चोरी करना पाप भी है और अपराध भी।

अपराध—सामाजिक व राजनैतिक नियमों का उल्लंघन। जैसे—वह चार सौ-बीसी के अपराध में पकड़ा गया। मुझसे ऐसा कौनसा अपराध बन पड़ा जिससे आप नाराज रहते हैं।

४८. मूर्ख—जो समझाने पर भी न समझे। जैसे—राजकुमार जैसा मूर्ख मैंने कोई नही देखा। मूर्ख लड़कों को बृहस्पति भी नही पढ़ा सकता।

अज्ञ—समझदार तो हो, किन्तु विषय-विशेष से अपरिचित हो। जैसे—मुझ जैसे अज्ञ के सामने अस्त्र-शस्त्रों की चर्चा करना व्यर्थ है, क्योंकि तलवार तो दूर मैंने कभी लाठी ही हाथ में नहीं ली।

४६. सरल—किसी कार्य में स्वतः कठिनाई का न होना। जैसे—यह पुस्तक इतनी सरल है कि कोई भी छात्र इसको पढ़कर समझ सकता है। इस वर्ष गणित का प्रश्न-पत्र इतना सरल आया कि किसी भी परीक्षार्थी के ३० से कम अङ्क नहीं आयेंगे।

सुगम—कठिनाई के होते हुए भी किसी कार्य का सरल हो जाना। जैसे—साहसी कठिन मार्ग को भी सुगम बना लेते हैं। मनोहर के थोड़ा हस्तक्षेप करते ही वह कार्य कितना सुगम हो गया।

५०. अवस्था—जीवन की एक दशा व भाग। जैसे—युवावस्था में सभी गलती करते हैं। इस समय उसकी अवस्था कोई अठारह वर्ष की होगी।

आयु—सम्पूर्ण जीवन। जैसे—उसने यों ही आयु बिताई, कुछ भी नहीं किया। उसकी ७८ वर्ष की आयु में मृत्यु हुई।

अभ्यास

नीचे लिखे शब्द युग्मों में अर्थ-भेद बताकर वाक्यों में प्रयोग कीजिये :—

प्रेम और स्नेह, अज्ञ और मूर्ख, कृपा और दया, वेदना और व्यथा, पाप और अपराध, गर्व और गौरव, मद और मान, भय और त्रास, यातना और यंत्रणा, प्रयत्न और चेष्टा, साहस और उत्साह, आधि और व्याधि, बुद्धि और मन, सेवा और शुश्रूषा।

(४) विलोम-शब्द

भाषा में चमत्कार लाने के लिए और शब्दों का उपयुक्त प्रयोग करने के लिए विलोम शब्दों की भी ठीक-ठीक जानकारी अपेक्षित है। विलोम शब्दों को विपरीतार्थक शब्द भी कहते हैं। इनके प्रयोग से भाषा में सौन्दर्य आता है और भावाभिव्यक्ति में भी सहायता मिलती है। उदाहरण के लिए देखिए—मेरे और आपके विचारों में आकाश-पाताल का अन्तर है। वे अपना कर्म करते हैं, उन्हें निंदा-स्तुति से कोई प्रयोजन नहीं। बिना विचारों के आदान-प्रदान

के ज्ञान की वृद्धि नही होती। आय-व्यय का हिसाब रखने से बड़ा लाभ होता है। विलोम शब्दों का प्रयोग वाक्य में अन्तर-प्रदर्शन (Contrast) के लिए भी किया जाता है। जैसे—जिसका उदय होता है, उसका अस्त भी अवश्यंभावी है। जो चढ़ता है, वह गिरता भी है। संसार में सुख के साथ दु:ख भी है। हर्ष के साथ शोक मिला हुआ है। संयोग का ही दूसरा नाम वियोग है।

(अ)

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
अच्छा	बुरा	अन्धकार	प्रकाश
अनुराग	विराग	अपना	पराया
अनुरक्ति	विरक्ति	अनुकूल	प्रतिकूल
अपकार	उपकार	अभिमान	निरभिमान
अतिवृष्टि	अनावृष्टि	अम्ल	मधुर
अधम	उत्तम	अग्रज	अनुज

(आ)

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
आयात	निर्यात	आदि	अनादि
आदान	प्रदान	आतप	अनातप
आशा	निराशा	आदर	निरादर, अनादर
आदि	अन्त	आकाश	पाताल
आरम्भ	अन्त, इति	आचार	अनाचार
आय	व्यय	आवाहन	विसर्जन
आलसी	परिश्रमी	आहार	अनाहार

(इ, उ)

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
इच्छा	अनिच्छा	ईश	अनीश
उपकार	अपकार	उत्कृष्ट	अपकृष्ट, निकृष्ट
उचित	अनुचित	उच्च	नीच
उत्थान	पतन	उत्कर्ष	अपकर्ष
उदय	अस्त	उन्नति	अवनति

उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	उग्र	सौम्य
उष्ण	शीतल	उद्दंड	सरल

(ऋ, ए, ऐ)

ऋत	अनृत	एक	अनेक
ऐश्वर्य	अनैश्वर्य	एकान्त	अनेकान्त
ऐक्य	अनैक्य	एकार्थक	अनेकार्थक

(क)

कोमल	कठोर	कनिष्ठ	ज्येष्ठ
क्रम	व्यतिक्रम	कटु	मधुर
क्रय	विक्रय	कल्याण	अकल्याण
कृतज्ञ	कृतघ्न	कीर्ति	अपकीर्ति

(ख, ग, घ)

खोटा	खरा	गुरुत्व	लघुत्व
गुण	अवगुण	गुरु	लघु
गुण	दोष	ग्रहस्थ	सन्यासी
गुरू	शिष्य	गरमी	सरदी
घात	प्रतिघात	घृणा	प्रेम

(च, ज, ज्ञ)

चर	अचर	चौर्य	अचौर्य
जाग्रत	सुप्त	जय	पराजय
ज्येष्ठ	कनिष्ठ	जड़	चेतन
जीवन	मरण	जीत	हार
जन्म	मृत्यु	ज्ञानी	मूर्ख
ज्ञात	अज्ञात	ज्ञान	अज्ञान

(द, ध, न)

दिन	रात	दुर्गन्ध	सुगन्ध
देव	दनुज, दानव	द्रुत	मन्द

(द, ध, न)

दुर्जन	सज्जन	द्वैत	अद्वैत
दिवस	निशि	धर्म	अधर्म
दाता	सूम	धनी	निर्धन, दरिद्री
न्याय	अन्याय	निद्रा	जागरण
निन्दा	स्तुति	निराकार	साकार
निरर्थक	सार्थक	निर्गुण	सगुण
नया	पुराना	नूतन	पुरातन
न्यून	अधिक	नत	उन्नत

(प, ब, म)

पाप	पुन्य	प्रत्यक्ष	परोक्ष
पंडित	मूर्ख	परकीय	स्वकीय
पक्ष	विपक्ष	पूरा	अधूरा
प्रेम	घृणा	प्राचीन	अर्वाचीन, नवीन
बन्धन	मोक्ष	वृद्धि	ह्रास
बुराई	भलाई	बद्ध	मुक्त
भला	बुरा	मान	अपमान
भूत	भविष्य	मूक	वाचाल
मंगल	अमंगल	मलिन	निर्मल

(य, र, ल, व)

यश	अपयश	योगी	भोगी
राग	विराग	राग	द्वेष
लाभ	हानि	विरोध	समर्थन
वैर	प्रीति	विधि	निषेध
विनीत	उद्दण्ड	विष	अमृत
विरोध	समर्थन	विद्या	अविद्या

(श)

शत्रु	मित्र	शोक	हर्ष
शीत	उष्ण	श्रद्धा	घृणा
शान्ति	अशान्ति	श्वास	उच्छ्वास
शुभ	अशुभ	शेष	अशेष

(स)

स्वतंत्र	परतन्त्र	सम	विषम
सूक्ष्म	स्थूल	सच	झूँठ
स्थावर	जंगम	स्वच्छ	अस्वच्छ
स्तुति	निन्दा	स्वदेश	परदेश
सन्धि	विग्रह	सन्तोष	लोभ
सृष्टि	प्रलय	हानि	लाभ
सजीव	निर्जीव	हित	अनहित, अहित
सृजन	विनाश	हार	जीत
संयोग	वियोग	सुकर	दुष्कर
संश्लेषण	विश्लेषण	सरस	नीरस
सुलभ	दुर्लभ	सुशील	दुःशील
सार्थक	निरर्थक	सरल	कठिन
स्वार्थ	परमार्थ	स्वाधीन	पराधीन
संक्षिप्त	विस्तृत	सुगम	दुर्गम
स्वर्ग	नरक	सज्जन	दुर्जन
स्मरण	विस्मरण	सफल	विफल
सुख	दुःख	सौभाग्य	दुर्भाग्य
सम्पत्ति	विपत्ति	सुमति	कुमति
सपूत	कपूत	साकार	निराकार
सुजान	अजान	सधवा	विधवा
साधारण	विशेष	सदाचार	दुराचार
संकीर्ण	विस्तीर्ण, विशाल	सत्य	असत्य, मिथ्या
		सत्	असत्

(स)

संगठन	विघटन	सन्त	असन्त

(ह)

हानि	लाभ	ह्रस्व	दीर्घ
हित	अनहित, अहित	हर्ष	शोक, विषाद
हार	जीत	ह्रास	वृद्धि

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों के विलोम शब्द लिखिए:—

नवीन, उन्नत, निन्दा, स्थूल, घृणा, प्रकाश, दुर्जन, जय, व्यय, खरा, युवा, स्थावर, पंडित, उपकार, अनाचार, निकृष्ट, सरल, प्रलय, नाश निर्जीव, मुक्त, जागरण, मन्द, स्वस्थ, आलस्य, विसर्जन, गति, ज्ञान।

२—नीचे लिखे शब्द युग्मों का निम्न प्रकार एक ही वाक्य में प्रयोग करिये

जैसे—अन्धेरे-उजाले में संभल कर चलना चाहिए।

आय-व्यय, उदय-अस्त, जीवन-मरण, संयोग-वियोग, चर-अचर, गुण-दोष हानि-लाभ, हर्ष-विषाद, आदि-अन्त, आदान-प्रदान, लेन-देन, हित-अनहित संधि-विग्रह, साकार-निराकार, यश-अपयश, खरा-खोटा, धर्म-अधर्म, पाप पुण्य, देव-दानव, राग-विराग, जय-पराजय।

(५) पर्यायवाची शब्द

एक ही अर्थ को प्रकट करने वाले शब्द पर्यायवाची कहलाते हैं। इनको नार्थक शब्द भी कहते हैं। एक ही शब्द का बार-बार प्रयोग रचना में नहीं लगता, अतः समानार्थक शब्दों का ज्ञान अपेक्षित है।

शब्द — पर्याय

अंग—शरीर, अवयव, वपु, गात्र।

अग्नि—पावक, अनल, वह्नि, कृशानु, हुताशन।

अध्यापक—गुरु, उपदेशक, उपाध्याय, शिक्षक।

अमृत—सुधा, अमी, पीयूष, अमृतक, सुरभोग, सोम।

अश्व—हय, वाजि, तुरंग, घोटक, घोड़ा।

आंख—लोचन, नयन, चक्षु, नेत्र, दृग, अक्षि।
आकाश—अम्बर, व्योम, नभ, गगन, अन्तरिक्ष, शून्य।
आनन्द—प्रमोद, हर्ष, प्रसन्नता, आह्लाद, मोद।
इच्छा—आकांक्षा, अभिलाषा, मनोरथ, वांछा, कामना, स्पृहा।
इन्द्र—शक्र, मघवा, पुरन्दर, सुरपति, महेन्द्र, देवराज।
इन्द्राणी—शची, इन्द्रवधू, पुलोमजा, शतावरी।
कमल—पंकज, जलज, सरोज, पद्म, नलिन, राजीव, वारिज, कंज, अम्भोज, अरविन्द, इन्दीवर, शत-पत्र।
कल्प-वृक्ष—सुरतरु, पारिजात, मन्दार, देव-वृक्ष।
कामदेव—मदन, मनमथ, मनसिज, कंदर्प, रतिपति, अनंग, स्मर, मीनकेतु, पुष्पशर, मार, मनोभव।
किरण—रश्मि, अंशु, मयूख, मरीचि, कर।
कव्वा—काक, वायस, बलिपुष्ट।
क्रोध—रोष, कोप, अमर्ष।
कपड़ा—वस्त्र, पट, चीर, वसन, अम्बर, दुकूल।
गणेश—विनायक, लम्बोदर, गजानन, एकदन्त, गणपति।
गंगा—भागीरथी, सुरसरि, जाह्नवी, त्रिपथगा, देवनदी, विष्णुपदी, मन्दाकिनी।
घर—गृह, भवन, सदन, मन्दिर, धाम, निकेत, आवास, सद्म, आगार, आलय, ओक, आयतन, अयन।
चकवा—कोक, चक्र, चक्रवाक।
चन्द्रमा—चन्द्र, राकापति, शशि, मयंक, सुधाकर, इन्दु, सोम, विधु, सुधांशु, हिमांशु, अब्ज, द्विजराज, मृगांक, राकेश।
चांदनी—चन्द्रिका, ज्योत्सना, कौमुदी, चन्द्रमरीचि।
चरण—पद, पाद, पैर, पाँव।
जल—सलिल, नीर, तोय, वारि, पय, उदक, जीवन।
तम—अन्धकार, तिमिर, अन्धेरा, तमस।
तालाब—सर, तड़ाग, सरोवर, जलाशय, पुष्कर।

तलवार—कृपाण, असि, खड्ग, करवाल, चन्द्रहास, सिरोही।
दिन—दिवस, वासर, दिवा, अहन्।
दूध—दुग्ध, पयस, पय, क्षीर।
दुःख—पीड़ा, व्यथा, कष्ट, क्लेश, यातना, संकट।
देवता—सुर, अमर, विबुध, देव, निर्जर, त्रिदश।
दैत्य—दनुज, दानव, असुर, सुरारि, राक्षस।
धनुष—चाप, शरासन, कोदन्ड, कमान।
धन—वैभव, सम्पत्ति, वित्त, अर्थ, द्रव्य।
नदी—नद, सरिता, सरि, तटिनी, तरंगिणी, आपगा।
नाव—नौका, तरणी, जलयान, पोत।
पर्वत—नग, पहाड़, भूधर, शैल, अचल, गिरि, अद्रि, महीधर।
पंडित—कोविद, बुध, विद्वान्, सुधी, विचक्षण, प्रज्ञ।
पति—भर्त्ता, वल्लभ, भरतार, स्वामी, अधिपति, आर्य-पुत्र, प्राणेश।
पत्नी—सहगामिनी, सहचरी, प्राण-प्रिया, गृहिणी, वल्लभा।
पवन—समीर, हवा, बयार, मारुत, अनिल, प्रभंजन, वात।
पुत्र—आत्मज, औरस, तनय, बेटा, सुत, सुवन, तनुज।
पृथ्वी—धरा, भू, भूमि, धरित्री, मही, वसुन्धरा, धरणी, मेदिनी, रसा।
पार्वती—शिवा, भवानी, उमा, गौरी, सती, गिरजा, शैल-सुता।
पुत्री—तनया, तनुजा, नन्दिनी, सुता, आत्मजा, दुहिता, बेटी।
पक्षी—खग, विहंग, खेचर, पतंग, शकुनि, द्विज।
पुष्प—फूल, सुमन, कुसुम, प्रसून, पुहुप।
प्रेम—प्रणय, प्यार, स्नेह, अनुराग, प्रीति, राग।
पेड़—वृक्ष, पादप, विटप, तरु, महीरुह, द्रुम।
बन्दर—वानर, कपि, मर्कट, शाखामृग, कीश, हरि।
बादल—मेघ, घन, पयोधर, जलद, जलधर, पयोद, वारिद, बलाहक।
बाण—शर, नाराच, तीर, विशिख, शिलीमुख, शायक।
बिजली—विद्युत, चंचला, चपला, दामिनी, सौदामिनी, तड़ित्।
बैर—शत्रुता, द्वेष, वैमनस्य, विरोध, मनोमालिन्य।

ब्रह्मा—अज, स्वयंभू, चतुरानन, विरंचि, विधि, कमलासन, पितामह ।
भौंरा—भ्रमर, अलि, मधुप, भृंग, षट्पद, मधुकर ।
भगवान—ईश्वर, जगदीश, प्रभु, जगन्नाथ, विश्वंभर, परमात्मा ।
मदिरा—वारुणी, सुरा, मद्य, हाला ।
मनुष्य—मानुष, मनुज, मानव, नर ।
महादेव—शिव, हर, शंकर, शंभु, भूतेश, त्रिशूली, पिनाकी, रुद्र ।
मछली—मत्स्य, मीन, मकर, झष, शफरी ।
माता—जननी, अम्बा, प्रसू, मा, जन्मदात्री ।
मुर्गा—कुक्कुट, कुकड़ा, ताम्रचूड़, तमचुर ।
मित्र—सखा, सुहृत्, सहचर, साथी ।
मोर—मयूर, केकी, शिखी ।
यमुना—सूर्य-सुता, कालिन्दी, रवि-तनया, अर्कजा ।
रात्रि—निशा, रजनी, रात, यामिनी, विभावरी, शर्वरी ।
राजा—महिपति, महीप, नृप, नृपति, भूपति, नरेश ।
राक्षस—निशाचर, निशिचर, जातुधान, दानव, दैत्य, तमोचर ।
लक्ष्मी—मा, कमला, रमा, पद्मा, चंचला, इन्दिरा, श्री, कमलासना ।
वन—उपवन, कानन, कान्तार अरण्य, जंगल ।
वस्त्र—पट, चीर, वसन, अंशुक ।
वैरी—अरि, शत्रु, विरोधी, विपक्षी ।
विद्यार्थी—छात्र, शिक्षार्थी, अंतेवासी, शिष्य ।
विष्णु—जनार्दन, चक्रपाणि, अच्युत, केशव, कमलापति, माधव ।
विष—गरल, माहुर, हलाहल, जहर ।
शरीर—कलेवर, काया, वपु, विग्रह, गात, तनु ।
सांप—सर्प, अहि, भुजंग, व्याल, नाग, उरग, विषधर, पन्नग, फणी ।
समुद्र—सिन्धु, सागर, जलधि, रत्नाकर, उदधि, नदीश, पारावार, पयोधि
अर्णव, पयोनिधि, वारीश, नीरनिधि ।
सिंह—मृगराज, केहरि, केशरी, हरि, मृगारि, पञ्चानन ।
सेना—अनी, चमू, कटक, सैन्य, दल ।
सूर्य—रवि, अर्क, दिनकर, मार्तण्ड, भानु, आदित्य, तरणि, प्रभाकर, पतंग ।

संसार—जग, जगती, विश्व, लोक, भव, जगत् ।
सोना—स्वर्ण, कनक, कंचन, हाटक, हेम, हिरण्य, जातरूप ।
स्त्री—नारी, अबला, वनिता, कलत्र, भामिनी, अंगना, महिला, रमणी, दारा ।
स्वर्ग—वैकुंठ, देवलोक, अमरपुरी, परलोक, नाक, सुरलोक, द्यौ ।
सरस्वती—भारती, गिरा, वाणी, वीणापाणि, शारदा, वरदा, विधात्री ।
हरिण—मृग, कुरंग, सारंग, कृष्णसार ।
हवा—वायु, पवन, मारुत, अनिल, समीर ।
हाथी—करि, गज, कुंजर, मतंग, दन्ती, द्विरद, हस्ती, नाग, गयन्द, वारण ।
हंस—मराल, कारंडव, पतत्री, कलहंस ।

अभ्यास

निम्नलिखित शब्दों के चार-चार पर्यायवाची शब्द लिखो :–

बादल, बिजली, विष, पुष्प, वन, दूध, गंगा, कमल, आकाश, सिंह, जल, अग्नि, रात्रि, चन्द्रमा, बाण, धन, किरण, नदी, मदिरा, पुत्र, पक्षी ।

(६) अनेकार्थक शब्द

कुछ शब्द ऐसे होते है जिनके एक से अधिक अर्थ होते हैं । ऐसे शब्दों को, जो अनेक अर्थों के वाचक होते हैं, अनेकार्थक वा नानार्थक शब्द कहते है । प्रकरण और प्रसंग से स्वतः पता लग जाता है कि अमुक शब्द का अमुक अर्थ में प्रयोग किया गया है । उदाहरण के लिए 'पद' शब्द को ही लीजिए । यह एक नानार्थक शब्द है । इसके अर्थ है–पैर, अधिकार, स्थान, छन्द का चरण, विभक्तियुक्त शब्द आदि । जैसे–इस छन्द के अन्तिम पद में गति-भंग है । उच्च पद पर आसीन होकर अभिमान मत करो । इन गरीबों पर क्यों पद-प्रहार कर रहे हो ? यह पद आपके ही योग्य है । वाक्य के संज्ञा-पदों को छांटो और उनका पदान्वय करो । अब यहाँ कुछ चुने हुए अनेकार्थक शब्द दिये जाते है ।

शब्द अर्थ
अंक—चिह्न, गोदी, संख्या के अंक, नाटक का एक भाग (अंक), परिच्छेद ।

अर्क—सूर्य, मंदारवृक्ष, स्फटिक, ज्योति, भभके से खींचा हुआ रस।
अर्थ—अभिप्राय, धन, हेतु, कारण, निमित्त।
अम्बर—वस्त्र, आकाश।
अज—बकरा, ब्रह्मा, शिव, दशरथ के पिता।
अघ—पाप, शिकार, जुआ।
अरुण—लाल, सूर्य, सूर्य का सारथी।
कनक—सोना, धतूरा।
कर—हाथ, सूँड़, किरण, टैक्स।
कल—यंत्र, मशीन, चैन, गया हुआ या आने वाला दिन।
खल—दुष्ट, नीच, खलियान, खरल, तलछट।
खर—तीक्ष्ण, निष्ठुर, गधा, तृण, एक राक्षस का नाम।
गुण—गुण, रस्सी, रज-तम-सत गुण, प्रसाद-माधुर्य-ओज-गुण, अच्छाई, धनुष की प्रत्यंचा, विशेषता।
गो—गाय, पृथ्वी, इन्द्रियाँ।
गुरु—बड़ा, भारी, पूज्य, शिक्षक, कोई कला, दीर्घ मात्रा वाला वर्ण।
घन—बादल, घना, ठोस, लुहार का बड़ा हथोड़ा, लम्बाई×चौड़ाई×मोटाई।
चित्र—तस्वीर, विचित्र।
जीवन—जिन्दगी, जल, प्राण।
जलज—कमल, मोती, चन्द्रमा, शंख, मछली।
तात—पिता, पुत्र, छोटा भाई, ताऊ, गुरु, शिष्य, मित्र, प्यारा।
द्विज—ब्राह्मण, पक्षी, चन्द्रमा, दाँत, पक्ष।
दल—पार्टी, पत्ता, सेना, समूह, पक्ष।
दंड—डंडा, सजा, जुर्माना, एक घड़ी (२४ मिनट), कमल की नाल।
नाग—हाथी, सर्प, नाग, केशर।
नग—पहाड़, नगीना, संख्या, अचल।
नाक—नासिका, स्वर्ग, आकाश।
पय—पानी, दूध, अमृत।
पद—स्थान, चरण, ओहदा, अधिकार, चतुर्थभाग, गाने का गीत।

४० भाषा ज्ञान एवं रचना बोध

पत्र—पत्ता, चिट्ठी, पंख, पुस्तक का एक पन्ना ।
पतंग—सूर्य, पक्षी, कीट, उड़ाने का पतंग ।
पक्ष—महिने का आधा भाग, तरफ, पंख, दल, बाण के लगा हुआ पर ।
पात्र—भाजन, बर्तन, उपयुक्त व्यक्ति ।
पृष्ठ—पीठ, पुस्तक के पत्र के एक ओर का भाग, किसी वस्तु का पिछला भाग ।
फल—परिणाम, बदला, नतीजा, तलवार आदि की धार, फल ।
भव—संसार, शिव, उत्पत्ति, जन्म, अग्नि, होना ।
भूत—अतीत, उत्पन्न, तत्व, प्राणी, प्रेत, पिशाच ।
मधु—शहद, शराब, चैत्रमास, मकरन्द ।
मंत्र—सलाह, जप का मंत्र ।
मान—सम्मान, नायिका का नायक से रूठना, परिमाण, नाप, तौल ।
मित्र—सूर्य, दोस्त ।
मुद्रा—सिक्का, मोहर, भाव-भंगी, शारीरिक अंगों की एक विशेष स्थिति ।
रस—जल, आनन्द, सार, निंबु आदि का रस, खट्टा-मीठा आदि रस, काव्य-रस ।
रश्मि—किरण, रस्सी, डोरी, घोड़े की लगाम ।
राग—प्रेम, रंग, संगीत की राग, लाल रंग ।
राशि—सूर्य की १२ राशि, ढेर, समूह ।
लगन—लौ, प्रेम, मुहुर्त, धुन, मन का किसी एक ओर झुकना ।
वर—श्रेष्ठ, वरदान, दूल्हा ।
विधि—ब्रह्मा, नियम, ढंग, रीति, भाग्य ।
वेला—समय, एक फूल, समुद्र-तट, कटोरा ।
विग्रह—शरीर, लड़ाई ।
विधु—चन्द्रमा, कपूर, राक्षस ।
वर्ण—अक्षर, रंग, ब्राह्मण आदि चार वर्ण ।
वंश—कुल, कुटुम्ब, बांस ।
सारंग—बादल, कमल, मोर, सांप, हरिण, एक राग, कामदेव, हाथी ।
सैन्धव—नमक, घोड़ा ।

दूसरा अध्याय

शब्द-निर्माण

भाषा का निर्माण शब्दों द्वारा होता है। जिस भाषा का शब्द-कोश जितना वृहद् होता है, उतनी ही वह सम्पन्न समझी जाती है। अपने विचारों और भावों को उपयुक्त शब्दों द्वारा ही मूर्तरूप देकर हम दूसरों के सामने प्रकट करते है। भाषा का विकास धीरे-धीरे होता है। जैसे-जैसे उसमे भाव और विचार-प्रकाशन के योग्य शब्द बढ़ते जाते है, भाषा उन्नति करती जाती है। यह शब्द बनते कैसे हैं और कहाँ से आते है—यही विचारणीय है। एक शब्द से अनेक शब्दों का निर्माण कर लिया जाता है, जैसे एक शब्द है पठ, अब देखिए पठ शब्द से पाठ, पाठक, पठन, पाठन, कुपाठक, सुपाठक, पठनीय, पाठशाला, पठक, पठित, पाठान्तर, पाठच्छेद, पाठित, पाठनीय आदि शब्दों का निर्माण कर लिया गया है। इसी पठ शब्द से हिन्दी में पढ़ना, पढ़ाने वाला, पढ़वाना, पढ़ाई, पढ़ाना, पढंता आदि शब्द बना लिये गये है। हिन्दी भाषा का जन्म अन्तिम बोलचाल की प्राकृत से हुआ है जिसको हम अपभ्रंश कहते है। इसलिए हिन्दी-भाषा के शब्द-भंडार मे जो शब्द है, वे संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं से आये है। विदेशी भाषाओं के शब्द भी तत्सम और तद्भव रूपों मे प्रचुरता से काम में लाये गये और लाये जा रहे है। भाषा का कलेवर संकीर्णता से नही बढ़ता, उदारता से ही बढ़ता है। हिन्दी जीवित भाषा है, इसमें दूसरी भाषाओ से शब्द लेकर पचा लेने की शक्ति है। इस प्रकार हिन्दी ने सहस्त्रो शब्दो को जो विदेशी भाषाओं के हैं, पचाकर अपना बना लिया है।

ऊपर आपको एक छोटासा उदाहरण देकर समझाया गया था कि मूल

शब्द एक होता है और उससे बीसियों अन्य शब्द बना लिये जाये जाते हैं। इस प्रकार नये-नये शब्दों के बनाने को शब्द-निर्माण कहते हैं। अब हमें यह देखना है कि हिन्दी में किन-किन तरीकों से शब्द-निर्माण किया जाता है। शब्द-निर्माण के मुख्य-मुख्य साधन निम्नांकित हैं :—

(१) सन्धि द्वारा
(२) समास द्वारा
(३) उपसर्ग द्वारा
(४) प्रत्यय द्वारा
(५) पुनरुक्ति, अनुकरण आदि उपायों द्वारा।

इस अध्याय में अब इन्हीं सब बातों का विवेचन किया जायगा। सर्व-प्रथम इस बात पर विचार किया जायगा कि शब्द के कितने भेद हैं। छात्र जब तक प्रयोग, अर्थ, शक्ति, व्युत्पत्ति आदि की दृष्टि से शब्द-भेद न समझ लेंगे, तब तक उनका शब्द-ज्ञान अधूरा ही रहेगा। इसलिए सर्व प्रथम शब्द-भेद पर ही प्रकाश डाला गया है।

(१) शब्द–भेद

शब्द दो प्रकार के होते हैं—(१) सार्थक–जिनका कुछ अर्थ हो, जैसे–कुत्ता, बालक, पुस्तक, विद्यालय आदि। (२) निरर्थक–जिनका कुछ अर्थ न निकले, जैसे–धप्, खट खट, टन टन, वाँ, आँय, चीचीं। व्याकरण में केवल सार्थक शब्दों का ही विचार किया जाता है, निरर्थक शब्दों का नहीं।

(अ) व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द-भेद

व्युत्पत्ति या बनावट के अनुसार शब्द तीन तरह के होते हैं :–

(१) रूढ़ शब्द—वह शब्द जिसके खंड करने पर कुछ अर्थ न निकले अर्थात् जो अन्य शब्दों के योग से न बना हो, रूढ़ कहलाता है, जैसे–पुस्तक, पत्थर, कमल, दूध, ऊँट आदि।

(२) यौगिक शब्द—वह शब्द जो अन्य शब्दों के योग से बना हो, यौगिक कहलाता है, जैसे—दिन कर, (दिन और कर दो शब्दों के योग से बना

है जिसका अर्थ होता है सूर्य), पाठशाला (पाठ+शाला), कठघरा (काठ+घर)। इसी प्रकार निशाकर, भूपति, शिक्षाप्रद, महाराज, घुड़शाला आदि यौगिक शब्द हैं।

(३) योगरूढ़ शब्द—वह शब्द जो बना तो हो अन्य शब्दों के योग से, किन्तु प्रयोग में वह रूढ़िवत् हो। योगरूढ़ शब्द का प्रयोग विशेष अर्थ में ही होता है, जैसे—जलद (जल+द) का अर्थ है जल देने वाला। जल देने वाले हैं कूप, सरोवर, रामझारा, बादल, किन्तु जलद शब्द का प्रयोग केवल बादल के अर्थ में ही रूढ़ हो गया है। इसी प्रकार जलज (कमल के अर्थ में), पीताम्बर (श्री कृष्ण के अर्थ मे) , लम्बोदर (गणेश जी के अर्थ में) और दशानन (रावण के अर्थ में) रूढ़ हो गये हैं।

सूचना—यौगिक और योगरूढ़ शब्दों में अन्तर यह है कि यौगिक शब्द जिन शब्दों के योग से बनता है, उनके अर्थ का लोप नही होता, उनका अर्थ वैसे का वैसा बना रहता है, जैसे भूपति शब्द भू और पति दो शब्दों के योग से बना है। भू का अर्थ पृथ्वी और पति का अर्थ है स्वामी, अतः भूपति का अर्थ हुआ पृथ्वी का स्वामी अर्थात् राजा। किन्तु योगरूढ़ शब्द जिन शब्दों के योग से बनता है, उनका अर्थ लुप्त हो जाता है, वे अपना अर्थ सर्वथा छोड़ देते हैं और योगरूढ़ शब्द एक ऐसा अर्थ देता है जो उन शब्दों के अर्थ से सर्वथा भिन्न होता है। जैसे—पीताम्बर में पीत (पीला) और अम्बर (वस्त्र) दो शब्द हैं, किन्तु अर्थ निकलता है श्री कृष्ण। यहाँ न पीत का अर्थ लगता है और न अम्बर का, प्रत्युत दोनों शब्द मिलकर एक विशेष अर्थ (श्री कृष्ण) का बोध कराते हैं।

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों में रूढ़, यौगिक और योगरूढ़ शब्द छाँटिए :—

ताला, कलश, गजानन, नभचर, अंगरखा, चारपाई, हिमालय, पंजाब, छात्रावास, महादेव, वारिज, जलधर, वदन, देवकीनन्दन, गाड़ीवान, रात्रि, ताम्रचूड़, भूधर, पञ्चानन।

२—यौगिक और योगरूढ़ शब्दों में क्या अन्तर है? उदाहरण द्वारा स्पष्ट करिए।

(आ) उत्पत्ति के अनुसार शब्द-भेद

उत्पत्ति के अनुसार शब्द के पाँच भेद होते हैं :—

(१) तत्सम—जिन शब्दों का जो रूप संस्कृत में है, वैसा ही हिन्दी में भी हो, उनको तत्सम शब्द कहते है, जैसे—मन, धन, ज्ञान, स्त्री, पुत्र, नभ, सर्प, पुस्तक, वालक, केश।

(२) तद्भव—संस्कृत शब्दों के विकृत रूप या बिगड़े हुए रूप तद्भव कहलाते हैं, जैसे—दूध (दुग्ध), साँप (सर्प), सुहाग (सौभाग्य), दही (दधि), हाथ (हस्त)।

सूचना—तत्सम और तद्भव दोनों ही संस्कृत के शब्द है। संस्कृत के शब्द जब बिना किसी परिवर्तन के ज्यों के त्यों हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं, तत्सम कहलाते है और जब उनमे परिवर्तन कर दिया जाता है तब वे तद्भव कहलाते हैं। जैसे—'क्षेत्र' तत्सम शब्द है और 'खेत' तद्भव शब्द है।

(३) विदेशी—अंग्रेजी, फ़ारसी आदि विदेशी भाषाओं के वे शब्द जिनका प्रयोग हिन्दी भाषा मे होता है, विदेशी शब्द कहलाते हैं। ये तत्सम और तद्भव दोनों ही रूपों में व्यवहृत होते हैं, जैसे—

(अ) तत्सम—बैंच, पैन, बटन, ग़रीब, चाकू, बाग, नावल, पिन, स्टेशन।

(आ) तद्भव—माचिस, लालटैन, दरोगा, थेटर, जखीरा, जोर, अर्दली।

(४) देशज—वे शब्द जो आवश्यकता के अनुसार गढ़ लिये जाते हैं अथवा ध्वनि के आधार पर बना लिये जाते हैं। 'देशज' कहलाते हैं, जैसे—पेट, गाड़ी, खिड़की टनाटन, रोड़ा, टमटम, पगड़ी आदि।

(५) प्रान्तीय—वे शब्द जो प्रान्तीय भाषाओं से हिन्दी में लिये गये हैं, प्रान्तीय शब्द कहलाते हैं, जैसे—लागू, चालू (मराठी) गल्प, उपन्यास (बंगाली) लाडी (पंजाबी) पिल्ला, छोकरा (राजस्थानी)।

हिन्दी भाषा में संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का ही व्यवहार अधिक होता है, अतः विद्यार्थियों की जानकारी के लिए अधिक प्रयोग में आने

वाले कुछ शब्दों के दोनों रूप नीचे दिये जाते है। इनका अध्ययन भाषाज्ञान में वृद्धि करेगा।

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
आग	अग्नि	जीभ	जिह्वा
आज	अद्य	जौ	यव
असीस	आशी	दीठि	दृष्टि
आठ	अष्ट	ताता	तप्त
उछाह	उत्साह	तुरत, तुरन्त	त्वरित
उच्छव	उत्सव	तीस	त्रिंशत
कोयल	कोकिल	थिर	स्थिर
कान	कर्ण	थन	स्तन
कौआ	काक	अँगूठा	अंगुष्ठ
गीध (गिद्ध)	गृध्र	अजान	अज्ञान
गाँव	ग्राम	आक	अर्क
गेह, घर	गृह	आँख	अक्षि
घरनी	गृहिणी	आम	आम्र
घड़ा	घट	आँसू	अश्रु
चमड़ा, चाम	चर्म	काठ	काष्ठ
चाँद	चन्द्र	काँटा	कंटक
चून, चूरण	चूर्ण	काम	कर्म
चोंच	चंचु	गधा, गदहा	गर्दभ
चौमासा	चतुर्मास	गाँठ	ग्रन्थि
छिति	क्षिति	गाहक	ग्राहक
छिन, छन	क्षण	गेहूँ	गोधूम
छोह	क्षोभ	घी	घृत
जतन	यत्न	चना	चणक
जदपि	यद्यपि	चमार	चर्मकार
जोती	ज्योति	चोर	चौर
		चौपाया	चतुष्पाद

चौदह	चतुर्दश
क्षमा	क्षमा
छाता	छत्र
छेद	छिद्र
जमुना	यमुना
जाँघ	जंघा
जेठ	ज्येष्ठ
जुग	युग
जँवाई	जामातृ
ढीठ	धृष्ट
तीखा	तीक्ष्ण
तिनका	तृण
तेल	तैल
ठाँव, थान	स्थान
थाली	स्थाली
दही	दधि
धाय, दाई	धातृ
दिया	दीपक
दिवाली	दीपावली
दूध	दुग्ध
दई	दैव
धरती	धरित्री
धान	धान्य
धूल	धूलि
नया	नव, नवल
नवाँ	नवम
नौ	नव
नीम	निंब

नींद	निद्रा
निठुर	निष्ठुर
नाच	नृत्य
नाव	नौका, नौ
पकवान	पक्वान्न
पत्थर	प्रस्तर
पाँच	पञ्च
पत्ता	पत्र
पाँव	पाद
पूँछ	पुच्छ
पोथी	पुस्तक
पछतावा	पश्चात्ताप
पोखर	पुष्कर
पीर, पीरा	पीड़ा
पुहुप	पुष्प
फुर्ती	स्फूर्ति
बूंद	बिन्दु
बिल्ली	बिडाली
बाँका	वक्र
बहू	वधू
बच्चा	वत्स
दामाद	जामाता
दर, दरवाजा	द्वार
दाँत	दन्त
दाहिना	दक्षिण
देसी	देशीय
दूब	दूर्वा
धुनि, धुन	ध्वनि

धीरज	धैर्य
धुआँ	धूम्र, धूम
नित	नित्य
नोन	लवण
नैन	नयन
नेह	स्नेह
नाक	नासिका
नाई	नापित
नारियल	नारिकेल
न्यौता	निमंत्रण
पलंग	पर्यङ्क
पहर	प्रहर
पांख	पक्ष
पास, पंख	पार्श्व
पीठ	पृष्ठ
पूत	पुत्र
पोता	पौत्र
पंछी	पक्षी
परिच्छा	परीक्षा
परेवा, (कबूतर)	पारावत
फूल	पुष्प
फन (सांप का)	फण
बहरा	बधिर
बहिन	भगिनी
बिजली	विद्युत्
बरात	वरयात्रा
बिसराम	विश्राम
भौंह	भ्रू, भृकुटि

भीख	भिक्षा
भतीजा	भ्रातृज
भाई	भ्राता
मछली, मच्छ	
मिर्च	मरिच
मूंड	मुण्ड
मुट्ठी	मुष्टि
मूंछ	श्मश्रु
मौसी	मातृष्वसृ
मेह	मेघ
यदपि	यद्यपि
रात	रात्रि
रोना	रोदन
लाख	लाक्ष
लगन	लग्न
लोहार, लुहार	लोहकार
बिराग	वैराग्य
सपना	स्वप्न
सपूत	सुपुत्र
सकुच	संकोच
सदी	शती
शक्कर	शर्करा
सात	सप्त
सिर	शिर
सेठ	श्रेष्ठ
सोना	स्वर्ण
सुनार	स्वर्णकार
सौत	सपत्नी

सौ	शत	लौंग	लवंग
सींग	शृंग	लूण	लवण
साग	शाक	वीभत्स	वीभत्स
हाथ	हस्त	सूरज	सूर्य
हाथी	हस्ती	सूना	शून्य
भौंरा	भ्रमर	सब	सर्व
भालू	भल्लूक	सकड़ा	संकीर्ण
भिखारी	भिक्षुक	साँझ	संध्या
मुँह	मुख	साँई	स्वामी
भौजाई	भ्रातृजाया	सुई	सूची
मक्खी	मक्षिका	सूत	सूत्र
माथा	मस्तक	ससुराल	श्वशुरालय
मिट्टी	मृत्तिका	साँकल	शृंखला
मोर	मयूर	साँप	सर्प
मौत	मृत्यु	साँस	श्वास
मीठा	मिष्ठ	सिल	शिला
रीता	रिक्त	सूखा	शुष्क
रीछ	ऋक्ष	हड्डी	अस्थि
रातीजगा	रात्रिजागरण	होठ	ओष्ठ
लाज	लज्जा		

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों में तत्सम, तद्भव और विदेशी शब्दों को छाँटिए:—

अस्पताल, चरखा, बोली, तोप, कृपाण, कमीशन, गोदाम, भाई, मन, घी, घर, चूर्ण, होल्डर, जनाब, साइकिल, वधू, सात, लंगड़ा, पत्थर, अलमारी, बिल्ली, आठ, टोपी, चिकना, कोयल, सौत, संध्या, सुई।

२—नीचे लिखे तद्भव शब्दों के तत्सम रूप लिखिए :—

सिर, लाख, होठ, सूरज, मीठा, मुँह, भौंरा, रौना, भाई, दूध, पूत,

पँछी, बाँका, पत्थर, दिया, दही, फूल, बहू, पाँव, निठुर, पीठ, नित, जँवाई, जीभ, गाँव, कान, तीखा, घी, चना, काँटा, आम, आठ।

(इ) शक्ति के अनुसार शब्द-भेद

शक्ति के अनुसार शब्द तीन तरह के होते हैं--वाचक, लक्षक और व्यंजक। इसी प्रकार अर्थ भी तीन प्रकार के है और शब्द-शक्ति भी तीन प्रकार की है जिन्हें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए :--

शब्द	अर्थ	शक्ति
वाचक	वाच्यार्थ	अभिधा
लक्षक	लक्ष्यार्थ	लक्षणा
व्यंजक	व्यंग्यार्थ	व्यंजना

(१)--वाचक--जहां शब्द का वाच्यार्थ (मुख्यार्थ) ग्रहण किया जाय अर्थात् शब्द का जो वास्तविक अर्थ है उसी में वह प्रयोग किया जाय, वहाँ अभिधा-शक्ति होती है और उस शब्द को वाचक शब्द कहते है। जैसे-तुम्हारी गाय खेत में चर रही है। यहाँ गाय पशु-विशेष के लिए प्रयुक्त हुआ है। किन्तु 'इस बुढ़िया को क्यों सताते हो, यह तो गाय है' इस में गाय अपने मुख्य अर्थ पशु-विशेष में प्रयुक्त न होकर उससे सम्बन्धित कोई दूसरा ही अर्थ देती है, अतःयहाँ गाय शब्द में न हो तो अभिधा शक्ति है और न यह वाचक शब्द ही है। इसी प्रकार 'गधा खेत में चर रहा है' और 'राम गधा है' में अन्तर समझिए। खेत में चरने वाला गधा पशु-विशेष का द्योतक है और अपने मुख्य अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, अतः वाचक शब्द है, परन्तु 'राम गधा है' में गधा राम को बताया गया है। इसमें गधा अपने मुख्य अर्थ (पूंछ, कान, चार टांग, वाला और घास खाने वाला पशु) में प्रयुक्त नहीं हुआ है, यहाँ 'गधा' शब्द 'गधे जैसे गुण वाला' अर्थ देता है। इसलिए न तो यह वाचक शब्द ही है और न यहाँ अभिधा-शक्ति ही। मोर नाच रहे हैं, बालक खेल रहे हैं, माता पाठ कर रही है, सोहन लिख रहा है आदि वाक्यों में मोर, बालक, माता आदि शब्द वाचक शब्द हैं क्योंकि वे अपने मुख्य अर्थ में ही प्रयुक्त हुए हैं।

(२) लक्षक या लाक्षणिक—जब शब्द अपने सामान्य और प्रचलित (मुख्य) अर्थ को छोड़कर तत्सम्बन्धी विशेष अर्थ का बोध कराये, तब वह शब्द 'लक्षक' शब्द कहलाता है और उसकी शक्ति 'लक्षणा-शक्ति' कहलाती है। जैसे—यह स्त्री तो गाय है। यहाँ गाय शब्द का अर्थ पशु विशेष नही है, अपितु गाय के सदृश भोली-भाली, निरीह या सीधी-सादी है। इसी प्रकार 'वह तो निरा बैल है' में 'बैल' शब्द का अर्थ अत्यन्त मूर्ख है। 'राजस्थान जाग उठा' में राजस्थान जड़ है, वह क्या जगेगा, अतः यहाँ राजस्थान का अर्थ राजस्थान के निवासियों से लिया जायगा, क्योंकि उसके निवासी ही जग सकते हैं। इसी प्रकार 'तलवारें चल रही है, लाल पगड़ी आगई, पंजाब वीर है, गिरधारी गधा है' में लक्षणा-शक्ति काम कर रही है और तलवारें, लाल पगड़ी, पंजाब, और गधा शब्द लाक्षणिक हैं, क्योंकि यहाँ उनके प्रचलित अर्थ को ग्रहण न करके उनके तत्सम्बन्धी विशेष अर्थ को ग्रहण किया गया है।

(३) व्यंजक—जब शब्द न अपने सामान्य प्रचलित अर्थ में प्रयुक्त हो और न तत्सम्बन्धी विशेष अर्थ में, प्रत्युत एक गूढ़ अर्थ में प्रयुक्त हो, तब वह 'व्यंजक' शब्द कहलाता है और उसकी शक्ति 'व्यंजना-शक्ति'। जहाँ न वाच्यार्थ लगे और न लक्ष्यार्थ, वहाँ व्यंजना-शक्ति से व्यंग्यार्थ लिया जाता है। जैसे—आप तो गुरू है। यहाँ 'गुरू' शब्द का अर्थ महाधूर्त है। यह अर्थ न वाच्यार्थ है और न लक्ष्यार्थ, यह एक गूढ़ अर्थ है जो व्यंग्यार्थ कहलाता है। इसी प्रकार 'आपके मित्र तो बड़े सज्जन निकले' में 'सज्जन' शब्द का व्यंग्यार्थ दुष्ट है।

अभ्यास

१—शक्ति के अनुसार शब्द के कितने भेद हैं? उदाहरण सहित समझाइए।
२—निम्नांकित वाक्यों में मोटे टाईप के शब्दों का शब्द-शक्ति के अनुसार वर्गीकरण करिए :—

(१) विपत्ति के समय मित्र भी **आँख फेर लेते** हैं। (२) आप तो बड़े **विद्वान्** हैं। (३) उसकी **मांग का सिन्दूर मिट गया**। (४) मोहन **गेन्द**

४. त्रिलोचन भगवान शंकर ने काम-देव को भस्म कर दिया।	बहुव्रीहि	तीन हैं लोचन जिसके ऐसे अर्थात् शिव
५. मोहन एक सच्चरित्र छात्र है।	बहुव्रीहि	अच्छा है चरित्र जिसका ऐसा
६. मोहन के सच्चरित्र से मैं प्रसन्न हूँ।	कर्मधारय	अच्छा है चरित्र जो

सूचना—[२] जब समस्त शब्द दो शब्दों से अधिक का बना हो तब उनका विग्रह दो-दो शब्द बना कर किया जाता है और प्रायः अन्त में मुख्य समास बता दिया जाता है, जैसे—

समस्त शब्द	विग्रह	मुख्य समास
त्रिभुवन नाथ	तीन भुवनों का समुह=त्रिभुवन (द्विगु), त्रिभुवन का नाथ=त्रिभुवन-नाथ (संबन्ध तत्पुरुष)	तत्पुरुष
सुपुत्रजन्मोत्सव	सु+पुत्र (कर्म धारय), जन्म का उत्सव=जन्मोत्सव (सम्बन्ध तत्पुरुष), सुपुत्र का जन्मोत्सव=सुपुत्र-जन्मोत्सव (सम्बन्ध तत्पुरुष)	तत्पुरुष
करिवर वदन	करियों में वर=करिवर (अधिकरण तत्पुरुष) करिवर के सदृश है वदन (मुख) जिसका ऐसे (गणेशजी)=बहुव्रीहि समास	बहुव्रीहि

अभ्यास

१. नीचे लिखे समस्त शब्दों (पदों) में स-विग्रह समास बताओ :—

दुसेरी, स्वर्णकार, सरसिज, हानिलाभ, क्रोधाग्नि, कुबुद्धि, सत्सई, बलहीन, प्राणदा, जीवन-मरण, जीवन-साथी, अकारण, शरणागत, विद्या-निधान, जय-पराजय, सुख-दुःख, यावज्जीवन, आमरण,

घनश्याम, चतुर्भुज, यथाबुद्धि, राज-कन्या, चौराहा; चन्द्रमुख, बारहसींगा, बाहु-बल, त्रिलोकी, नवधान, कुपूत, पंचामृत, नवग्रह।

२. नीचे लिखे शब्द-समूह से समस्त शब्द बनाओ और समास का नाम भी लिखो :—

अल्प है बुद्धि जो, जप और तप, दिन-दिन, नहीं है अन्त जिसका, महान् है पुरुष जो, पुत्र से हीन, क्रम के अनुसार, उत्तम है पुरुष जो, कटी है नाक जिसकी, आकाश से पतित, पीत है अम्बर जो, घोड़े का सवार, लम्बा है उदर जिसका, जाति का उपकार, कला का प्रेमी, सत् है चरित्र जो, अल्प है बुद्धि जिसकी, पांच सेर का एक समूह।

३. निम्नलिखित समास-युग्मों में क्या अन्तर है ? प्रत्येक का उदाहरण देकर भेद स्पष्ट करिए :—

(क) कर्मधारय और द्विगु

(ख) द्विगु और बहुव्रीहि

(ग) कर्मधारय और बहुव्रीहि

. निम्नलिखित समस्त शब्दों में कौन से समास हैं ? विग्रह सहित बताइए। यदि एक ही शब्द में दो प्रकार के समास हों तो विग्रह पृथक्-पृथक् लिखिए :—

लम्बोदर, चक्रपाणि, चरणकमल, त्रिलोचन, अल्पबुद्धि, कमलनयन, पीताम्बर, हनुमान, दशानन, सच्चरित्र, घनश्याम।

५. नीचे लिखे मोटे टाइप के शब्दों का सविग्रह समास बताइए :—

(१) यह मनुष्य **दुश्चरित्र** है। (२) ऐसा कौन है जो **प्राप्त धन** छोड़ दे। (३) वह **दरदर** भीख माँगता है। (४) राम **पुरुषोत्तम** थे। (५) **दानवीरों** को चाहिए कि **धन-हीनों** को **यथा-शक्ति अन्न-दान** दें। (६) **माता-पिता** का कहना मानना **सुपुत्र** का कर्त्तव्य है। (७) **कुसंगति** में पड़कर **गली-गली** क्यों भटकते हो ? (८) **भक्तवत्सल** भगवान **शरणागतों** की सदैव रक्षा करते हैं। (९) उसने मुझे **अभय-दान** दिया। (१०) **अधर्म** और अन्याय का कभी आश्रय नहीं लेना चाहिए। (११) उसके **शुभागमन** पर सब ने हर्ष

प्रकट किया। (१२) मुझे पद-व्याख्या और पदान्वय नहीं आते। (१३) जीवन में सुख-दुःख के अतिरिक्त और है ही क्या ?

(४) उपसर्ग

उपसर्ग न तो स्वतंत्र शब्द हैं और न अक्षर और न इनका स्वतंत्र रूप से प्रयोग ही होता है। उपसर्ग वास्तव में वे शब्दांश हैं जो किसी शब्द के पूर्व लग कर उसके अर्थ में विशेषता उत्पन्न कर देते हैं वा उसके अर्थ को ही बदल देते हैं। कभी-कभी एक ही उपसर्ग पृथक-पृथक शब्दों के पूर्व लग कर पृथक्-पृथक् अर्थ देता है। उदाहरण के लिए 'वि' उपसर्ग को ही लीजिए—

वि+ज्ञान=विज्ञान (विशेष वा विशिष्ट ज्ञान)
वि+देश=विदेश (परदेश, अपने देश से भिन्न देश)
वि+मल=विमल (मल रहित)

इसी प्रकार उपसर्ग कभी-कभी शब्द के मूल अर्थ को ही सर्वथा बदल देता है। उदाहरण के लिए 'हार' शब्द को ही लीजिए। 'हार' का अर्थ है हरण करने वाला, चुराने वाला या पराजय, किन्तु 'हार' के पूर्व विभिन्न उपसर्ग लग कर किस प्रकार उसके अर्थ को बदल देते हैं, यही द्रष्टव्य है—

उपसर्ग	मूलशब्द		व्युत्पन्न शब्द	अर्थ
आ	+ हार	=	आहार	(भोजन)
वि	+ हार	=	विहार	(गमन)
प्र	+ हार	=	प्रहार	(चोट)
सं	+ हार	=	संहार	(नाश)
वि + अव	+ हार	=	व्यवहार	(वर्ताव)
सं + आ	+ हार	=	समाहार	(संक्षेप, योग)
उप + सं	+ हार	=	उपसंहार	(समाप्ति)
वि + आ	+ हार	=	व्याहार	(ध्वनि, वार्त्तालाप)
परि	+ हार	=	परिहार	(छोड़ना)
उप	+ हार	=	उपहार	(भेंट)

शब्द के पूर्व उपसर्ग एक ही नहीं, आवश्यकता के अनुसार दो, तीन और चार तक लग सकते हैं, जैसे—सं+अभि+वि+आ+हार=समभिव्याहार, जिसका अर्थ है साथ वा संगति। उपसर्ग हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू आदि सभी भाषाओं में होते हैं। हिन्दी भाषा में संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी आदि भाषाओं के शब्द भी काम में लाये जाते हैं, अतः उन भाषाओं के उपसर्ग भी उन भाषाओं के शब्दों के पूर्व लगाये जाते है। जो उपसर्ग जिस भाषा का है, उसका उसी भाषा के साथ प्रयोग करना चाहिए।

संस्कृत के उपसर्ग

प्र + कार = प्रकार
आ + जीवन = आजीवन
अन् + अन्त = अनन्त
अव + नति = अवनति
उत् + नति = उन्नति
अधः + पतन = अधःपतन
सत् + जन = सज्जन
सह + वास = सहवास
अनु + चर = अनुचर
उत् + कर्ष = उत्कर्ष
अ + पक्व = अपक्व
अप + कार = अपकार
सत् + आचार = सदाचार
परा + जय = पराजय
सम् + तोष = संतोष
वि + ज्ञान = विज्ञान
प्रति + कूल = प्रतिकूल
उप + कार = उपकार

कु + पुत्र = कुपुत्र
परा + काष्ठा = पराकाष्ठा
सम् + आ + चार = समाचार
सह + योग = सहयोग
वि + कार = विकार
सं + चार = संचार
अ + ज्ञान = अज्ञान
वि + अव + हार = व्यवहार
दुः + गम = दुर्गम
अभि + आ + गत = अभ्यागत
परि + ताप = परिताप
सु + पुत्र = सुपुत्र
सम् + भव = संभव
निः + अप + राध = निरपराध
प्र + आ + रंभ = प्रारंभ
प्र + माण = प्रमाण
अव + गुण = अवगुण
अभि + इष्ट = अभिष्ट

हिन्दी के उपसर्ग

अन + पढ़ = अनपढ़	नि + डर = निडर
अन + जान = अनजान	भर + पेट = भरपेट
अ + चेत = अचेत	नि + कम्मा = निकम्मा
सु + डौल =सुडोल	अप + सगुन = अपसगुन
अध + खिला = अधखिला	भर + पूर = भरपूर
कु + ठौर = कुठौर	औ + गुन = औगुन
कु + ढंग कुढंग	अन +होनी = अनहोनी
क + पूत = कपूत	अ + छूता = अछूता
स + पूत =सपूत	अध +मरा = अधमरा

उर्दू के उपसर्ग

ना+पाक=नापाक	ला + जवाब = लाजवाब
ना + लायक=नालायक	दर + असल = दरअसल
बे + कार=बेकार	खुश + बू = खुशबू
बे + चारा=बेचारा	गैर +हाजिर = गैरहाजिर
बा + कायदा=बाकायदा	हर + दम = हरदम
कम + जोर=कमजोर	खुश + हाल = खुशहाल
बद + नाम=बदनाम	ला + सानी = लासानी
बे+वकूफ=बेवकूफ	बे + लगाम = बेलगाम

अभ्यास

१. नीचे लिखे शब्दों मे उपसर्ग और शब्द अलग-अलग करो :—

अलग, उपवन, दुराचार, परिक्रमा, प्रदक्षिणा, पराजय, सपूत, निडर, प्रख्यात, बेईमान, बाकायदा, विदेश, भरपेट, अवनती, उन्नत, लाचार बेहया, खुशहाल, उपकार, अछूता, विधवा, सगुण, निराकार, दुर्दशा निराहार, विज्ञान, प्रारम्भ, अभीष्ट, औगुन, कुठोर, अधखिला ।

२. नीचे लिखे उपसर्ग लगा कर शब्द-रचना करिए :—

अधि, अनु, आ, दुर, प्र, परा, उत्, बा, अभि, सह, वि, अन, और, अप ।

३. नीचे लिखे शब्दों के पूर्व विभिन्न उपसर्ग लगाकर शब्द-रचना करिए, जैसे भाव शब्द के पूर्व उपसर्ग लगाकर प्रभाव, अभाव स्वभाव, विभाव, अनुभाव आदि बनाये गये हैं :—

हार, भव, गम, कार, पत्ति, देश और गति ।

(५) प्रत्यय

वे शब्दांश जो अन्य शब्दों के अन्त में लग कर उनके अर्थ में विशेषता उत्पन्न कर देते हैं, 'प्रत्यय' कहलाते हैं, जैसे—लड़का+पन=लड़कपन, कमाना+ऊ=कमाऊ, चाहना+वाला=चाहनेवाला, जीमना+अक्कड़=जिमक्कड़ ।

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं—[१] कृत् प्रत्यय और [२] तद्धित प्रत्यय ।

(क) कृत् प्रत्यय

वे प्रत्यय जो केवल क्रियापदों के अन्त में लग कर नये शब्द बनाते हैं, 'कृत् प्रत्यय' कहलाते है । कृत् प्रत्यय से बने हुए शब्द 'कृदन्त' कहलाते हैं, जैसे—

क्रिया	प्रत्यय	कृदन्त
गाना	वाला	गानेवाला
खाना	ऐया	खवैया
ऊड़ाना	ऊ	ऊड़ाऊ
जड़ना	इया	जड़िया
बिछाना	औना	बिछौना
सूँघना	नी	सूँघनी
रेतना	ई	रेती
चढ़ना	आव	चढ़ाव
झगड़ना	आलू	झगड़ालू
बुलाना	आवा	बुलावा

घबराना	आहट	घबराहट
झूलना	आ	झूला
झाड़ना	ऊ	झाड़ू
मारना	अ	मार
बचना	ते	बचत
सिलना	आई	सिलाई
बोलना	ई	बोली
ऊड़ना	आन	ऊड़ान
मरना	इयल	मरियल
तैरना	आक	तैराक
खेलना	ड़ी	खिलाड़ी
लूटना	एरा	लुटेरा

सूचना—गाना, खाना, पीना, ऊड़ना आदि क्रियाओं में 'ना' केवल क्रिया का चिह्न-मात्र है। इनमें मूल क्रियाएं गा, खा, पी, ऊठ आदि ही हैं। प्रत्यय इन मूल क्रियाओं के आगे ही लगाये जाते है।

अन्य उदाहरण

अड़ना	इयल	अड़ियल
चाटना	ओरा	चटोरा
पालना	क	पालक
कमाना	एरा	कमेरा
भागना	ओड़ा	भगोड़ा
भरना	हुआ	भराहुआ
सुनना	हुई	सुनीहुई
झूलना	आ	झूला
हँसना	आई	हँसाई
लड़ना	आई	लड़ाई
चढ़ाना	आवा	चढ़ावा

सजाना	वट	सजावट
ऊड़ना	आन	ऊड़ान
घुड़कना	ई	घुड़की
खपना	त	खपत
धोंकना	नी	धोंकनी

(ख) तद्धित प्रत्यय

वे प्रत्यय जो क्रिया को छोड़ कर अन्य शब्दों के अन्त में लग कर उन नये शब्द बनाते हैं, 'तद्धित प्रत्यय' कहलाते हैं। तद्धित प्रत्यय से बने हुए शब्द 'तद्धितान्त' कहलाते है जैसे—

शब्द	प्रत्यय	तद्धितान्त
गाड़ी	वाला	गाड़ीवाला
तबल	ची	तबलची
खेल	ड़ी	खिलाड़ी
चाचा	एरा	चचेरा
तेल	ई	तेली
भूख	आ	भूखा
रग	ईला	रंगीला
धन	वान	धनवान
बुड्ढा	पा	बुढापा
बहुत	आयत	बहुतायत
साप	एरा	सँपेरा
सोना	आर	सुनार
युवा	ती	युवती
ग्राम	य	ग्राम्य
चटक	ईला	चटकीला
खाक	सार	खाकसार
गुरु	ता	गुरुता
गुरु	त्व	गुरुत्व

लड़का	पन	लड़कपन
लघु	त्व	लघुत्व
लाठी	इया	लठिया
टाँग	ड़ी	टँगड़ी
कृपा	लु	कृपालु
दुकान	दार	दुकानदार
आनन्द	इत	आनन्दित
श्री	मान	श्रीमान
बेटा	इया	बिटिया
जुआ	री	जुआरी
चौड़ा	आई	चौड़ाई
दलाल	ई	दलाली

संस्कृत के तद्धित प्रत्यय कठिन है, अतः संस्कृत-प्रत्ययों का ज्ञान न कराकर, उन प्रत्ययों से बने हुए कुछ अधिक प्रचलित शब्दो का ज्ञान करा देना ही पर्याप्त होगा।

शब्द	तद्धितान्त	शब्द	तद्धितान्त
शिशु	शैशव, शिशुकता	गुरु	गौरव, गुरुता
कुल	कुलीन	सुन्दर	सुन्दरता, सौंदर्य
मैल	मलिन	धीर	धैर्य
मधुर	माधुर्य, मधुरता	दनु	दानव
पूर्ण	पूर्णिमा	मनु	मानव
कुरु	कौरव	पुत्र	पौत्र
पांडु	पांडव	द्रुपद	द्रौपदी
जनक	जानकी	मास	मासिक
वसुदेव	वासुदेव	धर्म	धार्मिक
हिम	हैम	संसार	सांसारिक
दिन	दैनिक	अणु	आणविक
लोक	लौकिक	संस्कृति	सांस्कृतिक

अर्थ	आर्थिक	इतिहास	ऐतिहासिक
व्यवहार	व्यावहारिक	आत्मा	आत्मीय, आत्मिक
अन्त	अन्तिम	ग्राम	ग्रामीण, ग्राम्य
राष्ट्र	राष्ट्रीय	पति	पत्नी
मेधा	मेधावी	विद्वान्	विदुषी
श्रीमान	श्रीमती	तपः	तपस्वी
यदु	यादव	रघु	राघव

अभ्यास

१—उपसर्ग और प्रत्यय में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर समझाइए ।

२—कृत् प्रत्यय और तद्धित प्रत्यय में क्या अन्तर है ? उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करिए ।

३—नीचे लिखे शब्द कृदन्त हैं वा तद्धितान्त ? बताइये—

झाड़न, ठंडक, वैष्णव, लघुता, खटास, छलिया, तरुणाई, वासुदेव, कृपालु, वनैला, गमन, चाल, वार्षिक, कमाऊ, शिवा, झपट, बहाव, दिखावा, कतरनी, बौद्धिक, मार, लक्कड़हारा, बचत ।

४—नीचे लिखे शब्दों से तद्धितान्त शब्द बनाओ :-

सवार, कागज, बुड्ढा, धर्म, सांप, खार, लम्बा, शरीर, सुमित्रा, बाप, पंख सोना, टोकरी, पाठशाला, गुरु, नायक, मुख, भूत, नीति, नगर ।

(६) अन्य प्रकार से शब्द निर्माण

(क) कुछ जुड़े हुए शब्द हिन्दी में ऐसे प्रयोग में आ रहे हैं कि जिनमें एक शब्द तो सार्थक होता है और दूसरा निरर्थक जैसे—

बात-चीत	काम-धाम	मेला-ठेला	माल-ताल
चाल-ढाल	झाड़-फूँक	नोक-झोंक	पान-वान
ठीक-ठाक	टाल-टूल	दौड़-धूप	सौदा-वोदा
जोड़-तोड़	गोल-माल	देख-भाल	हल्ला-गुल्ला

(ख) कुछ जुड़े हुए शब्द ऐसे हैं कि जिनमें दोनों ही शब्द सार्थक हैं और प्रायः एक सा ही अर्थ रखते हैं, जैसे—

तन-मन	मार-पीट	जीव-जन्तु	आव-भगत
रोक-थाम	खाये-पीये	घास-पात	अनुनय-विनय
छान-बीन	हरा-भरा	कपड़े-लत्ते	जांच-पड़ताल
चीर-फाड़	हृष्ट-पुष्ट	खेल-कूद	डांट-फटकार
काट-छांट	नाच-कूद	बाल-बच्चे	किस्सा-कहानी
चमक-दमक	घर-द्वार	धन-धान्य	ठोक-पीट

(ग) कभी कभी अर्थ में दृढ़ता लाने के लिये शब्द की आवृत्ति कर दी जाती है, जैसे—

गांव-गांव	दिन-दिन	होते-होते	हाथों-हाथ
गली-गली	बार-बार	आगे-आगे	बातों-बात
घर-घर	कुछ-कुछ	साथ-साथ	कानों-कान
एक-एक	कोड़ी-कोड़ी	मारा-मारी	नीचे-नीचे

(घ) कुछ शब्द ऐसे हैं जो आवश्यकता के अनुसार पदार्थ की यथार्थ वा कल्पित ध्वनि को ध्यान में रख कर बना लिये जाते हैं ऐसे शब्द अनुकरण मूलक होते है, जैसे——

धड़ाम	धड़ाम—से	सनसन	सनसनाना
चट	चट-से	फड़कन	फड़फड़ाना
खटखट	खटखटाना	छपछप	छपछपाना

अन्य उदाहरण

सर—सर, धड़-धड़, टन-टन, टप-टप, म्याऊँ, टेंटें, टर्र-टर्र, घुर-घुर, पी—पी, कांव—कांव, चूँ—चूँ, चीं—चीं, ख—खों, हुआ—हुआ, गुटरगूँ, बाँ—बाँ, कुंकड़ूकूँ भनभिन।

तीसरा अध्याय

व्याकरण-बोध

जिसके द्वारा भाषा के शुद्ध बोलने तथा लिखने का ज्ञान प्राप्त होता है, उसे 'व्याकरण' (Grammar) कहते है। व्याकरण के द्वारा भाषा के वाक्यों शब्दों, वर्णों आदि के भेद-प्रभेद अथवा बनावट आदि के पूरे-पूरे नियमों का ज्ञान हो जाता है; अतः व्याकरण का बोध अनिवार्य है।

(१) वर्ण-विचार

जिस ध्वनि के टुकड़े नहीं हो सकते, उसे वर्ण या अक्षर कहते हैं। वर्ण दो प्रकार के हैं—(१) स्वर और (२) व्यंजन। जिसका उच्चारण बिना किसी अन्य वर्ण की सहायता के हो सके, वह स्वर कहलाता है, जैसे—अ, ई, ऊ आदि। जिसका उच्चारण स्वर की सहायता के बिना न हो वह व्यंजन कहलाता है, जैसे क, हे, मो आदि। यहां 'क' में अ, 'हे' में ए और 'मो' में ओ मिले है। इसी को अच्छी तरह समझने के लिए हम यों लिख सकते हैं :—

क्+अ=क; ह्+ए=हे; म्+ओ=मो।

(१) स्वर (Vowel)

हिन्दी में कुल स्वर ११ हैं :—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ और औ। इनमें अ, इ, उ और ऋ—ये चार स्वर ह्रस्व तथा शेष दीर्घ कहलाते हैं अ और आ, इ, और ई, उ और ऊ इसी प्रकार ऋ और ॠ परस्पर सवर्ण या सजातीय स्वर कहलाते हैं, क्योंकि अ—आ का उच्चारण स्थान एक है, इसी प्रकार इ—ई, उ—ऊ आदि का भी। अ, इ, उ, ऋ आदि परस्पर असवर्ण व विजातीय स्वर हैं, क्योंकि इनके उच्चारण-स्थान भिन्न-भिन्न हैं। ए, ऐ, ओ औ, ये चार स्वर संयुक्त स्वर कहलाते हैं, क्योंकि ये निम्न प्रकार असवर्ण स्वर के मेल से बने हैं।

अ+इ=ए; अ+ए=ऐ; अ+उ=ओ; अ+ओ=औ।

ह्रस्व स्वर एक मात्रिक और दीर्घ स्वर द्विमात्रिक कहलाते हैं।

(२) व्यंजन (Consonant)

हिन्दी में क से ह तक कुल ३३ व्यंजन हैं, जो निम्न प्रकार विभक्त हैं:—

(१) स्पर्श व्यंजन :—

क, ख, ग, घ, ङ — कवर्ग
च, छ, ज, झ, ञ — चवर्ग
ट, ठ, ड, ढ, ण — टवर्ग
त, थ, द, ध, न — तवर्ग
प, फ, ब, भ, म — पवर्ग

(२) अन्तःस्थ व्यंजनः—य, र, ल, व।

(३) ऊष्म व्यंजनः—श, ष, स, ह।

सूचनाः—(१) दो या दो से अधिक मिले हुए व्यंजनों को संयुक्त व्यंजन कहते है, जैसे—क्+ष=क्ष, त्+र=त्र, ज्+ञ=ज्ञ, त्+म्+य=त्म्य, क्+व=क्व, श्+र=श्र, प्+त=प्त [illegible] इत्यादि।

सूचनाः—(२) क्, ख्, ग्, आदि स्वर-रहित व्यंजन हल कहलाते हैं और हल का यह (्) चिह्न है।

सूचनाः—(३) स्वर और व्यंजनों के अतिरिक्त तीन अर्द्ध व्यंजन भी हैं जिनका उच्चारण स्वर की सहायता से होता है। वे निम्नलिखित हैं:—

(क) विसर्ग (:), जैसे—प्रातः, दुःख, निःसंदेह, अतः।
(ख) अनुस्वार (ं), जैसे—संगति, वंश, हंम, हिंसा।
(ग) चन्द्र-बिन्दु (ँ), जैसे—हँसी, गँवार, धुआँ, कहाँ।

सूचनाः—(४) स्वर और व्यंजन दोनों समुदाय वर्णमाला (Alphabet) कहलाता है।

सूचनाः—(५) अनुस्वार का प्रयोग जब स्पर्श व्यंजनों के साथ किया जाता है तो अनुस्वार अपने वर्ग के पञ्चम अक्षर में बदल जाता है, जैसे—पंक और पङ्क, चंचु और चञ्चु, ठंडा और ठण्डा, कांत और कान्त, पंप

और पम्प। हिन्दी में दोनों ही रूप मान्य हैं। किन्तु स्पर्श व्यंजनों के अतिरिक्त अनुस्वार सदा अनुस्वार ही रहता है और वह कभी अर्द्ध न (न्) में नहीं बदलता है, जैसे—अंश को अन्श या हिंसा को हिन्सा लिखना अशुद्ध माना जाता है।

वर्णों का उच्चारण-स्थान

उच्चारण स्थान	व्यंजन			स्वर	
	स्पर्श	अन्तःस्थ	ऊष्म	ह्रस्व	दीर्घ
कण्ठ	क, ख, ग, घ, ङ	—	ह	अ	आ
तालु	च, छ, ज, झ, ञ	य	श	इ	ई
मूर्द्धा	ट, ठ, ड, ढ, ण	र	ष	ऋ	—
दन्त	त, थ, द, ध, न	ल	स	—	—
ओष्ठ	प, फ, ब, भ, म	—	—	उ	ऊ
कंठ-तालु	—	—	—	—	ए, ऐ
कंठौष्ठ	—	—	—	—	ओ, औ
दन्तौष्ठ	—	व	—	—	—
नासिका	ङ, ञ, ण, न, म	—	—	—	—

सूचना:—विसर्ग का कंठस्थान, अनुस्वार और चन्द्र-विन्दु का नासिका स्थान है।

(२) शब्द-विचार

शब्द के सम्बन्ध में प्रथम और द्वितीय अध्याय में काफी विवेचन किया

जा चुका है, अतः यहां केवल वाक्य में प्रयोग करने की दृष्टि से शब्द के सम्बन्ध मे विचार किया जाता है, जिससे छात्रों को वाक्य मे प्रयुक्त विभिन्न शब्दों का परस्पर सम्बन्ध ज्ञात हो जाय।

(अ) संज्ञा (Noun)

किसी वस्तु, व्यक्ति वा स्थान का नाम संज्ञा कहलाता है। संज्ञा पांच प्रकार की होती है:—

१. व्यक्ति वाचक (Proper Noun) :—केवल एक ही निश्चित वस्तु या व्यक्ति का बोध कराने वाली, जैसे:—राम, गंगा, हिमालय, रामायण।

२. जाति वाचक (Common Noun) :—एक जाति की सभी वस्तुओं का ज्ञान कराने वाली, जैसे:—मनुष्य, नदी, नगर, मछली, बालक।

३. समुदाय वाचक (Collective Noun) :—एक जाति की बहुत सी वस्तुओं के समुदाय का एक साथ ज्ञात कराने वाली, जैसे:—सेना, श्रेणी, परिवार, समिति।

४. द्रव्य वाचक (Material Noun) :—खाद्य, पेय और खनिज पदार्थों का बोध कराने वाली, जैसे:—भोजन, दूध, चांदी, लोहा, मदिरा।

५. भाव वाचक (Abstract Noun) :—किसी पदार्थ के धर्म, गुण, दशा, व्यापार आदि का बोध कराने वाली, जैसे:—शीतलता, खटास, बुढ़ापा, उतार, चढ़ाई, सफेदी।

सूचना :—(१) व्यक्ति वाचक, समुदाय वाचक, द्रव्य वाचक और भाव वाचक संज्ञाएँ सदा एक वचन मे ही प्रयुक्त होती है, बहुवचन में नहीं, और यदि इनका प्रयोग बहुवचन मे हो, तो फिर ये जाति वाचक संज्ञाएँ बन जाती हैं, जैसे :—

(क) मेरी कक्षा मे तीन रामलाल हैं (जाति वाचक)

(ख) रामलाल एक परिश्रमी छात्र है (व्यक्ति वाचक)

(ग) इस पक्षी की चाल सुन्दर है (भाव वाचक)

(घ) मैं तुम्हारी सब चालों को समझता हूं (जाति वाचक)

(ङ) तुम किस कक्षा में पढ़ते हो ? (समुदाय वाचक)
(च) सभी कक्षाओं को छोड़ दो (जाति वाचक)
(छ) विदेशी मदिराएँ कीमती होती हैं (जाति वाचक)
(ज) मदिरा पीना बुरा है (द्रव्य वाचक)

सूचना:—(१) जाति वाचक संज्ञाएँ जब व्यक्ति-विशेष के लिए प्रयोग की जायें, तब वे व्यक्ति वाचक बन जाती हैं।

जैसे :—(i) मिश्राजी इस चुनाव में अवश्य जीतेंगे।
(ii) भटनागर साहब दर्शन-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता हैं।

वचन (Number)

हिन्दी में दो वचन होते हैं :—(१) एक वचन (Singular) जिससे एक वस्तु या व्यक्ति का बोध हो जैसे—माता और (२) बहुवचन (Plural) जिससे एक से अधिक वस्तुओं या व्यक्तियों का बोध हो, जैसेः—माताएँ।

सूचना—कभी-कभी संज्ञाओं के वचन का ज्ञान प्रयोग से जाना जाता है अन्यथा नहीं, जैसे :—वृक्ष से फल गिरे। यहाँ फल शब्द बहुवचन में प्रयोग किया गया है।

लिङ्ग (Gender)

हिन्दी में केवल दो लिंग हैं —(१) पुलिंग (Masculine) जिसमे नर का बोध हो और (२) स्त्रीलिंग (Feminine) :—जिससे स्त्री (मादा) का बोध हो जैसे—

पु०	स्त्री०	पु०	स्त्री०
पुत्र	पुत्री	वर	वधू
पति	पत्नी	भाई	बहिन
भैंसा	भैंस	बिलाव	बिल्ली

सूचना—(१) हिन्दी में कुछ शब्द ऐसे हैं जो नित्य पुल्लिग होते हैं, जैसे:—पक्षी, खटमल, हिमालय, सूर्य, चन्द्रमा तथा कुछ शब्द ऐसे हैं जो नित्य स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे :—मिट्टी, आशा, दिशा, क़मल, बुद्धि, सभा आदि।

सूचना—(२) निर्जीव वस्तुओ का लिंग–ज्ञान उनके प्रयोग और नाम के अनुसार समझा जाता है, जसेः–मैंने पुस्तक पढ़ी। यहाँ पुस्तक स्त्रीलिंग है। मैंने ग्रन्थ पढ़ा। यहा ग्रन्थ शब्द पुल्लिंग है। उसका कुरता फट गया। यहा कुरता पुल्लिग है। उसकी कमीज सिल गई। यहां कमीज स्त्रीलिग है।

इस प्रकार विशेषण, सर्वनाम और क्रिया की सहायता से निर्जीव वस्तुओं का लिंग-ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

कारक (Case)

हिन्दी मे आठ कारक होते है :—

१. कर्त्ता (Nominative) :—क्रिया का करने वाला, जैसे घोड़े ने घास खाई। इसका चिह्न 'ने' है।

२. कर्म (Objective):—जिस पर क्रिया का फल गिरे, जैसे :–घोड़ों को घास डाल दो। इसका चिह्न 'को' है।

३. करण :—जिसके द्वारा कर्त्ता क्रिया को करे, अर्थात् जो क्रिया करने का साधन हो। जैसे :—हरि ने कलम से लिखा। इसका चिह्न 'से' है।

४. सम्प्रदान :—जिसके लिए कुछ किया जाय, जैसे :—घोड़े के लिए घास लाओ। इसका चिह्न 'के लिए' है।

५. अपादान :—जिससे पृथक्ता प्रकट हो, जैसे :—हरि घोड़े से गिर गया। इसका चिह्न 'से' है।

६. सम्बन्ध (Possessive) :—जिससे सम्बन्ध प्रकट हो, जैसे :—घोड़े की जीन। इसका चिह्न 'का' 'की' 'के' है।

७. अधिकरणः—जो क्रिया का आधार हो, जैसे :–बैंच पर बैठो। पान मे सुपारी नही है। इसका चिह्न 'मे' 'पर' है।

८. सम्बोधन (Vocative) :—जो पुकारने मे काम आए, जैसे :–हे राम! तुम कहां थे? इसका चिह्न 'हे' 'अरे' है।

सूचना (१) जब क्रिया सकर्मक हो और अपूर्ण भूत तथा हेतु हेतुमद् भूत को छोड़कर भूतकाल में प्रयोग की गई हो, तो कर्त्ता के पश्चात् 'ने' चिह्न

का प्रयोग किया जाता है, अन्यथा नहीं। जैसे :—राम ने पढ़ा। राम ने पढ़ा था। राम ने पढ़ा होगा। राम ने पढ़ा है।

सूचना (२) करण और अपादान कारक मे यह अन्तर है कि करण कारक का प्रयोग वहां किया जाता है, जहां वस्तु क्रिया का कारण बने, अर्थात् वस्तु का सम्बन्ध कर्त्ता के साथ बना रहे, विच्छेद न हो, जैसे :—वह पैंसिल से लिखता है। यहां पैंसिल कर्त्ता के साथ है, उससे अलग नही हुई। इसके विपरीत अपादान कारक मे एक वस्तु का दूसरी वस्तु से विच्छेद होना अर्थात् पृथक् होना पाया जाता है, जैसे—वृक्ष से फल गिरा। यहा फल और वृक्ष में विच्छेद हो गया, वृक्ष और फल पृथक्-पृथक् हो गए। करण और अपादान दोनों ही कारकों का चिह्न 'से' है।

सूचना (३) जहां दो शब्द एक ही वस्तु या व्यक्ति को प्रकट करने के लिए एक ही कारक में आवें, वहां पहिला शब्द दूसरे शब्द का समानाधिकरण कारक (Case in apposition) होता है, जैसे:—हरि के भाई, सोहन ने, खीर खाई। यहां हरि का भाई और सोहन दोनों शब्द एक ही व्यक्ति के लिए आए हैं और दोनों ही कर्त्ता कारक में है, अतः यहां 'भाई' सोहन का समानाधिकरण कारक है।

संज्ञा की पद-व्याख्या

संज्ञा की पद-व्याख्या में नीचे लिखी बातें बतानी चाहिएँ :—१. संज्ञा का प्रकार, २. वचन, ३. लिङ्ग, ४. कारक और ५. सम्बन्ध (क्रिया या अन्य शब्दों मे)

उदाहरण

१. राम! वे छात्र जो संगीत में निपुण थे, छठी श्रेणी से निकाल दिये गए।

राम :—व्यक्ति वाचक संज्ञा, एक वचन, पुल्लिग, सम्बोधन कारक।

छात्र :—जातिवाचक संज्ञा, बहुवचन, पुल्लिग, सम्बोधन कारक।

संगीत में :—भाव वाचक संज्ञा, एक वचन, पुल्लिग, अधिकरण, कारक।

श्रेणी से :—समुदायवाचक संज्ञा, एक वचन, स्त्रीलिग, अपादान-कारक।

(आ) सर्वनाम (Pronoun)

वे शब्द जो संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होते हैं, 'सर्वनाम' कहलाते हैं। सर्वनाम सात प्रकार के होते हैं।

१. पुरुष वाचक (Personal) जिससे पुरुष का बोध हो।

पुरुष वाचक तीन होते हैं—(१) उत्तम पुरुष (First Person) जैसे—मैं, हम, मेरा, हमारा (२) मध्यम पुरुष (Second Person), जैसे—तू, तुम, तेरा, तुम्हारा (३) अन्य पुरुष (Third Person) जैसे—वह, वे, उसका, उनका।

२. सम्बन्ध वाचक (Relative)—जो पूर्वागत संज्ञा से सम्बन्ध प्रक करे, जैसे—जो, जिससे, जिसको, जिनको आदि।

सूचना—सम्बन्ध वाचक सर्वनाम का सम्बन्ध अपने 'नित्यसम्बन्धी' (Ante cedent. शब्द से अनिवार्य है, जैसे :—वे महाशय जो अभी यहां ख थे, कहां गये ? यहां 'जो' सम्बन्धवाचक सर्वनाम है जो अपने 'नित्य सम्बन्धी' 'महाशय' से सम्बन्ध प्रकट करता है।

३. निश्चय वाचक (Definite Demonstrative)—जो निश्चित संज्ञ के बदले में आवे अथवा जिससे निकटवर्ती या दूरवर्ती वस्तुओं क निश्चित ज्ञान हो जैसे—यह, ये, वह, वे।

४, अनिश्चय वाचक (Indefinite)—जो किसी निश्चित वस्तु का बोध न कराए, जैसे—कोई, कुछ, सब, कई।

५. प्रश्न वाचक (Interrogative) वह सर्वनाम जो किसी संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होकर प्रश्न का बोध कराए जैसे—कौन, क्या, किसको।

६. निजवाचक (Reflexive):—वह सर्वनाम जो अपनापन प्रकट करे, जैसे—आप, अपना।

७. प्रत्येक बोधक (Distributive) :—जो बहुतों में से प्रत्येक का बोध कराने वाला हो जैसे:—प्रत्येक, एक-एक।

संज्ञाओं के समान ही सर्वनामों में भी लिंग, वचन और कारक होते हैं।

सर्वनाम की पद व्याख्या

सर्वनाम की पद-व्याख्या में नीचे लिखी बातें बतानी चाहिए—

(१) सर्वनाम का प्रकार (२) यदि पुरुष वाचक सर्वनाम हो तो उसका

पुरुष (३) लिंग (४) वचन (५) कारक और (६) सम्बन्ध (क्रिया आदि शब्दों से)।

उदाहरण

१. इनमें से प्रत्येक ने उस युद्ध को देखा है जो सन् १६१४ में हुआ था।

इनमें से—निश्चयावाचक सर्वनाम, बहुवचन, पुल्लिग, अपादान कारक।

प्रत्येक ने—प्रत्येक बोधक सर्वनाम, एक वचन, पुल्लिग, कर्त्ता कारक, 'देखा है' क्रिया का कर्त्ता।

जो—सम्बन्ध वाचक सर्वनाम, इसका नित्य सम्बन्धी 'युद्ध' है, एक वचन, पुल्लिग, कर्त्ता कारक, 'हुआ था' क्रिया का कर्त्ता।

२. राम ने मुझ से पूछा कि तुम क्या खाते हो ?

मुझसे—पुरुष वाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, एक वचन, पुल्लिग, कर्म कारक, 'पूछा' क्रिया का कर्म।

तुम—पुरुष वाचक सर्वनाम, मध्यम पुरुष, पुल्लिग, बहुवचन, कर्त्ता कारक, 'खाते हो' क्रिया का कर्त्ता।

क्या—प्रश्न वाचक सर्वनाम, कर्म कारक, 'खाते हो' क्रिया का कर्म।

(ङ) विशेषण (Adjective)

जो संज्ञा या सर्वनाम के गुण, रंग, दशा, संख्या आदि विशेषताओं को प्रकट करे, वह 'विशेषण' कहलाता है।

विशेषण आठ प्रकार के होते हैं—

१. व्यक्ति वाचक (Proper) जो व्यक्ति वाचक संज्ञा से बना हुआ हो, जैसे—भारतीय, चीनी, पंजाबी तथा रामानन्दी।

२. गुणवाचक (Adj. of Quality)—जो संज्ञा या सर्वनाम का गुण, दशा, रंग आदि बतावे। जैसे—लाल, हरा, छोटा, बड़ा, दुष्ट, बुड्ढा, जवान।

३. परिमाण वाचक (Adj. of Quantity)—जो नाप, तोल, परिमाण बतावे, जैसे—थोड़ा, बहुत, अधिक, किंचित्, अल्प, कुछ।

४. निश्चित संख्या वाचक (Definite Number)—जो निश्चित संख्या का बोध करावे, जैसे–पाँच, सात, छठा, चौथा, पन्द्रह, दुगुना, चौगुना।

५. अनिश्चित संख्या वाचक (Indefinite Number)—जो अनिश्चित संख्या का बोध कराये, जैसे—सब, कुछ, कई, बहुत।

६. संकेत वाचक (Demonstrative)—जो संकेत करे, जैसे—यह, ये, वह, वे, तथा ऐसे।

७. प्रत्येक बोधक (Distributive)—जो बहुतों में से प्रत्येक का बोध करावे, जैसे–प्रत्येक, दो-दो, हर, तीसरा।

८. प्रश्न-वाचक (Interrogative)—जो प्रश्न करे, जैसे—कौनसा, क्या।

विशेषण को तीन अवस्थाएं (Degrees) होती हैं।

१. मूलावस्था (Positive Degree)—जो विशेषण का सामान्य रूप हो, जैसे—लघु, प्रिय तथा उत्कृष्ट।

२. उत्तरावस्था (Comparative Degree)—जहाँ दो वस्तु वा व्यक्तियों की तुलना की जाय, जैसे—लघुतर, प्रियतर, अधिक, उत्कृष्ट। इसमे विशेषण के सामान्य रूप के आगे 'तर' प्रत्यय जोड़ दिया जाता है, किन्तु केवल तत्सम रूपों मे ही, सर्वत्र नही, जैसे—

यह पुस्तक उससे श्रेष्ठतर है। यह कार्य उस कार्य से अधिक उत्कृष्ट है। गुरूजी सोहन को मोहन से प्रियतर समझते हैं। यह बकरी उस बकरी से कम काली है।

३. उत्तमावस्था (Superlative)—जहाँ सब में से एक को अच्छा या बुरा बताया जाय अर्थात् बहुतों मे से एक का चुनाव किया जाय, जैसे—लघुतम, प्रियतम, सबसे उत्कृष्ट आदि। तत्सम रूपों मे 'तम' प्रत्यय जोड़ा जाता है, जैसे—

इन रचनाओं में आपकी श्रेष्ठतम रचना कौनसी है? राम दशरथ का प्रियतम पुत्र था। सबसे अधिक लम्बी घड़ी कहाँ है?

सूचना (१) विशेषण जिस संज्ञा वा सर्वनाम की विशेषता बतलाता है, वह 'विशेष्य' कहलाता है।

विशेषण के लिंग और वचन अपने विशेष्य (संज्ञा) के अनुसार ही होते हैं।

जैसे—छोटा बालक, छोटी पुस्तक, छोटे लड़के आदि। काला कुत्ता, काले कुत्ते, काली कुतिया आदि।

सूचना (२) कुछ सर्वनाम और कुछ विशेषण नाम तथा कार्य में मिलते हुए होते हैं।

जैसे—निश्चय वाचक सर्वनाम और संकेत वाचक विशेषण; प्रत्येक बोधक सर्वनाम और अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण। इनका अन्तर समझने के लिए याद रखना चाहिए कि यदि ये किसी संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बतलाते हैं तब तो ये विशेषण होते हैं और जब स्वयं किसी संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होते हैं तब वे सर्वनाम होते हैं, जैसे—

दाल में कुछ है (अनिश्चित-वाचक सर्वनाम)

कुछ छात्र गणित में कमजोर हैं (अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण)

वह कहाँ गया है (पुरुष वाचक सर्वनाम)

यह भवन अच्छा है, किन्तु वह उतना अच्छा नहीं (निश्चयवाचक सर्वनाम)

वह छात्र गणित में प्रवीण है। (संकेत वाचक विशेषण)

तुम्हें क्या वस्तु चाहिए ? (प्रश्न वाचक विशेषण)

वह क्या खाता है ? (प्रश्न वाचक सर्वनाम)

विशेषण की पद-व्याख्या

विशेषण की पद-व्याख्या करने में नीचे लिखी बातें बतानी चाहिएँ :—

(१) प्रकार (२) अवस्था (३) लिंग (४) वचन और (५) सम्बन्ध (विशेष्य से)

उदाहरण

१. इस काली गाय का दूध प्रत्येक मनुष्य को लाभप्रद है।

इस :—संकेत-वाचक विशेषण, स्त्रीलिंग, एक वचन इसका विशेष्य 'गाय' है।

काली :—गुण–वाचक विशेषण, मूलावस्था, स्त्रीलिंग, एक वचन, इसका विशेष्य 'गाय' है।

प्रत्येक :—प्रत्येक-बोधक विशेषण, पुल्लिंग, एक वचन, इसका विशेष्य 'मनुष्य' है।

लाभप्रद :—गुण वाचक विशेषण, मूलावस्था, पुल्लिग, एक वचन, इसका विशेष्य दूध है।

. चीनी कन्याएँ चार काम दिन मे करती है।

चीनी :—व्यक्ति वाचक विशेषण, स्त्रीलिंग, बहुवचन, इसका विशेष्य 'कन्याए' हैं।

चार :—निश्चित संख्या–वाचक विशेषण, पुल्लिंग, बहुवचन, इसका विशेष्य 'काम' है।

(ई) क्रिया (Verb)

जिससे किसी काम का करना या होना पाया जाय, उसे क्रिया कहते है।

क्रिया आठ प्रकार की हैं :—

. अकर्मक क्रिया (Intransitive Verb) :—जो क्रिया कर्त्ता तक ही सीमित हो, जिसमें कर्म की आवश्यकता ही न पड़े ? जैसे :–राम सोता है। वे जाते हैं।

. सकर्मक क्रिया (Transitive Verb) :—जिस क्रिया का फल कर्ता के अतिरिक्त कर्म पर भी पड़े। जैसे:–वह दूध पीता है। मैं पत्र लिखता हूँ।

. अपूर्ण अकर्मक क्रिया (A Verb of Incomplete Predication) :—जो क्रिया, कर्ता से अपना तात्पर्य पूरा न होने के कारण अन्य शब्द (पूरक) की अपेक्षा रखे, जैसे:–श्याम (मूर्ख) प्रतीत होता है। राम (एक चतुर छात्र) है।

. अपूर्ण सकर्मक क्रिया (Factitive Verb) :—जो सकर्मक क्रिया कर्म के होते हुए भी अपना तात्पर्य पूरा करने के लिए अन्य शब्द (पूरक) की अपेक्षा रक्खे, जैसे:—मैंने हरि को (उदास) पाया। राम ने विभीषण को (लङ्का का राजा) बनाया।

सूचनाः—अपूर्ण अकर्मक क्रिया के पूरक को उद्देश्य-पूरक (Subjective Complement) और अपूर्ण सकर्मक क्रिया के पूरक को विधेय-पूरक (Objective Complement) कहते हैं।

५. संयुक्त क्रिया (Compound Verb) :—जो दो वा दो से अधिक क्रियाओं से मिलकर एक क्रिया बनी हो। जैसेः—हरि मोहन को एक रुपया दे सकता है। राम गा रहा होगा।

६. द्विकर्मक क्रिया (A Verb with Two Objects) :—जिस क्रिया के साथ मुख्य (Direct) और गौण (Indirect) दो कर्म (Objects) रहते हों। जैसेः—गुरूजी ने मुझे इतिहास पढ़ाया। इस वाक्य में 'पढ़ाया' क्रिया का मुख्य कर्म 'इतिहास' और गौण कर्म 'मुझे' है।

७. सजातीय क्रिया (A Verb with Cognate Object) :—जहाँ कर्म और क्रिया एक ही धातु से बने हों। जैसे :—पाण्डवों ने कौरवों के साथ भयंकर लड़ाई लड़ी। इस वाक्य में 'लड़ना' क्रिया से 'लड़ी' सजातीय क्रिया बनी है। और 'लड़ाई' सजातीय कर्म (Cognate Verb) बना है। वह एक दौड़ दौड़ा—में दौड़ा क्रिया सजातीय है।

८. प्रेरणार्थक क्रिया (Causative Verb) :—जहाँ कर्त्ता स्वयं कार्य न करके अपनी प्रेरणा द्वारा अन्य से करावे, जैसे :—उसने अपने घोड़े को कुदाया।

सूचनाः—(१) क्रिया के अतिरिक्त अन्य शब्दो में प्रत्यय लगा कर जो क्रिया बनाई जाती है, उसे 'नाम' धातु क्रिया कहते हैं। जैसे—हाथ से हथियाना, गांठ से गांठना, बड़ बड़ से बड़ बड़ाना।

(२) मूल क्रिया (धातु) के आगे 'कर' वा 'करके' लगाकर जो क्रिया बनाई जाती है, उसे 'पूर्व-कालिक क्रिया' कहते हैं, जैसेः—स्नान करके भोजन करो। वह बाग जाकर दौड़ लगाता है।

(३) जिस क्रिया मे आज्ञा, उपदेश, अनुमति आदि पाए जायँ उसे 'विध्यर्थक क्रिया' कहते है, जैसेः—सच बोलो। आपको नियत समय पर आना चाहिए।

काल (Tense)

जिससे क्रिया का समय सूचित हो, उसे काल कहते हैं। काल के मुख्य तीन भेद होते हैं:—

१. भूत (Past) :—जिसमें क्रिया भूत काल में हुई हो जैसे :—उसने पुस्तक पढ़ी। वह गा रहा था।

२. वर्तमान (Present) :—जिसमें क्रिया वर्तमान में हो रही हो, जैसे :—वह पुस्तक पढ़ता है। वे हँस रहे है।

३. भविष्यत् (Future) :—जिसमे क्रिया का भविष्य में होना पाया जाय, जैसे :—वह पुस्तक पढ़ेगा। तुम दो बजे जाओगे।

वाच्य (Voice)

जिसके द्वारा क्रिया का विधान कर्त्ता, कर्म या भाव मे जाना जाय उसे वाच्य' कहते है।

वाच्य के तीन भेद होते हैं :—

१. कर्तृवाच्य (Active Voice) :—जिस क्रिया में कर्त्ता प्रधान हो और कर्त्ता के अनुसार ही क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष हों, जैसे:—छात्र गए। राधा आई।

२. कर्मवाच्य (Passive Voice) :—जिस क्रिया में कर्म प्रधान हो और कर्म के अनुसार ही क्रिया के लिंग वचन और पुरुष हो जैसे :—पुस्तक पढ़ी गई। रुपया दिया गया।

३. भाव वाच्य (Impersonal Voice) :—जिसमें केवल भाव ही प्रधान हो। भाव वाच्य सदा अकर्मक क्रिया से बनाया जाता है और यह क्रिया सदा पुल्लिग, एक वचन और अन्य पुरुष के अनुसार होती है, जैसे:—मुझ से नही सोया जाता है। उनसे नही हँसा गया।

क्रिया की पद-व्याख्या

क्रिया की पद-व्याख्या में नीचे लिखी बातें बतानी चाहिएँ :—(१) प्रकार (२) काल (३) वाच्य (४) लिंग (५) वचन (६) पुरुष (७) सम्बन्ध, कर्त्ता या कर्म से।

१. राम ने कहा कि सोहन को रुपया दो।

कहा :—सकर्मक क्रिया, भूतकाल कर्तृवाच्य, पुल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'राम' और कर्म 'कि सोहन को रुपया दो' पूर्ण वाक्य है।

दो :—द्विकर्मक (विध्यर्थक) क्रिया, वर्तमान काल, कर्तृवाच्य, पुल्लिंग, एक वचन, मध्यम पुरुष, इसका कर्त्ता 'तुम' (छिपा हुआ) और मुख्य कर्म 'रुपया' और गौण कर्म 'सोहन' है।

२. मोहन से यह पूँछा गया कि अब उससे क्यों नही हँसा जाता।

पूँछा गया:—सकर्मक संयुक्त क्रिया, भूतकाल, कर्मवाच्य, पुल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'मोहन' और कर्म 'यह' है।

हंसा जाता:—अकर्मक संयुक्त क्रिया, वर्तमान काल, भाववाच्य, पुल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'उससे' है।

३. इसका नाम हरी है।

है:—अपूर्ण अकर्मक क्रिया, वर्त्तमानकाल, कर्तवाच्य, पुल्लिग, एक वचन अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'नाम' और इसका पूरक 'हरि' है।

सूचना—पूरक की पद व्याख्या में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि जो भी शब्द हो, उसकी उस ही ढङ्ग से पद-व्याख्या करके अन्त में कारक और सम्बन्ध के स्थान में यह लिख देना चाहिए कि 'यह' इस क्रिया का 'पूरक' है, जैसे-उपर्युक्त वाक्य में-हरि व्यक्तिवाचक संज्ञा एक वचन, पुल्लिग, 'है' अपूर्ण क्रिया का पूरक है।

(३) अव्यय

जिनका रूप कभी न बदले, सदा ही एक रहे, वे शब्द अव्यय कहलाते है। अव्यय चार प्रकार के हैं।

१. क्रिया विशेषण अव्यय (Adverb):—ये आठ प्रकार के होते है:—

(क) काल वाचक (Advérbs of time):—क्रिया का काल वतलाने वाला जैसे:—आज, पहिले, बहुधा, कल, परसों, प्राय:।

(ख) स्थान वाचक (Adverbs of place):—क्रिया का स्थान वतलाने वाला जैसे:—वहाँ, ऊपर, पास, जहाँ, उस, और, इधर, उधर, नीचे।

(ग) संख्या वाचक (Adverbs of Number):—क्रिया की संख्या बतलाने वाला, जैसे:—एकदा, अकेले, दुबारा।

(घ) रीतिवाचक (Adverbs of Manner) क्रिया की रीति प्रकट करने वाला, जैसे:—जाते-जाते, धीरे धीरे, शनैः शनैः, जोर से।

(ङ) प्रश्न वाचक (Interrogative Adverbs) :—जिसके द्वारा प्रश्न का बोध हो, जैसे:—कहां, कब, कितनी बार, कैसे, कितना, क्यों।

(च) परिमाण वाचक (Adverbs of degree) क्रिया का परिमाण बतलाने वाला, जैसे—कम, थोड़ा, पर्याप्त, अत्यधिक।

(छ) स्वीकार वाचक (Adverbs of Affirmation):–क्रिया की स्वीकृति सूचित करने वाला, जैसे—हां, जी, ठीक।

(ज) निषेध वाचक (Adverbs of Negation):–क्रिया का निषेध सूचित करने वाला, जैसे:—नहीं, मत, न।

२. सम्बन्ध बोधक अव्यय (Preposition)—स्वतन्त्र भी आता है और सम्बन्ध कारक के साथ भी, जैसे—गुरु सहित, गुरु के सहित।
सम्बन्ध बोधक अव्यय के अन्य उदाहरण :—
बिना, बदले, योग्य, समान, सा, कारण और भीतर, परे, तरह।

३. संयोजक अव्यय (Conjunction):—ये दो प्रकार के होते हैं:—

(क) समानाधिकरण संयोजक (Coordinate Conjunction)–जो संयोजक, विभाग, विरोध और परिणाम प्रकट करे, जैसे–और, तथा, अथवा, किया, किन्तु, पर, अतः अतएव।

(ख) व्याधिकरण संयोजक (Subordinate Conjunction):–जो कारण, उद्देश्य, संकेत, आदि प्रकट करे, जैसे–क्योंकि, कि, जिससे यद्यपि, यदि।

४. विस्मयादि बोधक अव्यय (Interjection):–जैसे–क्या! अरे! छिः।

अव्यय की पद–व्याख्या

अव्यय की पद व्याख्या में केवल अव्यय का प्रकार और वाक्य में उसका अन्य शब्दों से सम्बन्ध बताना

उदाहरण

१. हैं ! तुम आगरे से अभी चले आए और उसे अपने साथ नहीं लाए।

हैं :—विस्मयादि बोधक अव्यय, आश्चर्य प्रकट करता है।

अभी:—काल वाचक क्रिया विशेषण अव्यय, 'चले आये' क्रिया का काल सूचित करता है।

और:—समानाधिकरण संयोजक अव्यय है। 'चले आए' और 'उसे नहीं लाए' इन दो वाक्यों को जोड़ता है।

साथ:—सम्बन्ध बोधक अव्यय 'अपने' का सम्बन्ध 'लाए' से सूचित करता है,

नहीं : निषेध वाचक क्रिया-विशेषण अव्यय, 'लाए' क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

अभ्यास

निम्नलिखित वाक्यों के सब शब्दों की पद व्याख्या करो :—

१. शीतल चन्द्र की किरणों का मनुष्य के स्वास्थ्य पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है
२. एक रुपये का पांच सेर दूध आता है, परन्तु अनाज दस सेर।
३. भगवान कृष्ण का अवतार दुष्ट अत्याचारियों का नाश करने के लिए हुआ था।
४. संसार में सदैव सहयोग और संगठन से वीर महापुरुषों ने सफलता प्राप्त की है।
५. अहा ! प्रातःकाल भी कितना सुहावना समय है, पक्षी कलरव कर रहे हैं, मयूर नृत्य कर रहे हैं तथा कृषक अपने बैलों को लिए हुए खेत जोतने बहुत धीरे-धीरे मस्त होकर जा रहे हैं।
६. बरसा रहा है रवि अनल, भूतल तवा सा जल रहा।
   है चल रहा सन सन पवन, तन से पसीना ढल रहा॥

(३) वाक्य–विश्लेषण (Analysis)

शब्दों का ऐसा समूह, जिसका पूरा-पूरा अर्थ निकले, वाक्य कहलाता है, जैसे—मोहन आगरे गया। हरि ने छड़ी से उसको पीटा।

वाक्य तीन प्रकार के होते हैं:—

१. साधारण वाक्यः—(Simple Sentence):—जिस वाक्य में एक ही कर्त्ता और एक ही मुख्य क्रिया हो, जैसे—सोहन ने मुझे कल बाग में जाते हुए देखा। यहां 'सोहन' एक ही कर्ता है और 'देखा' एक ही मुख्य क्रिया है। किन्तु यदि किसी वाक्य में कर्ता एक से अधिक हों अथवा मुख्य क्रियाएँ एक से अधिक हों तो फिर वह साधारण वाक्य नहीं होगा जैसे—राम और कृष्ण बम्बई गये। यहां 'राम' और 'कृष्ण' दो कर्ता हैं अतः यह वाक्य साधारण वाक्य नही है। इसी प्रकार 'विमल ने पत्र लिखा और फाड़ डाला' मे दो मुख्य क्रियाएँ हैं, अतः यह भी साधारण वाक्य नही है।

साधारण वाक्य का विश्लेषण या विग्रह

साधारण वाक्य के विग्रह करने में कर्त्ता, कर्त्ता का विस्तार, मुख्य क्रिया, सविस्तार कर्म, सविस्तार पूरक और क्रिया का विस्तार—इस प्रकार छः बातें बतानी चाहिए। उदाहरण के लिए यहां पांच वाक्यों का विश्लेषण करके समझा दिया जाता है—

वाक्य

१. मैं यह कार्य किसी-न-किसी तरह कर लूँगा।
२. स्वयं विद्या-विहीन मनुष्य दूसरों को कैसे विद्वान बना सकता है।
३. पिताजी की आज्ञा मान कर वह तुरन्त चल दिया।
४. शिवाजी भारत के एक प्रसिद्ध वीर पुरुष हैं।
५. मैं आगरे से लौटते समय मथुरा होता हुआ जयपुर पहुँचा।

विश्लेषण

वाक्य संख्या	कर्ता	कर्ता का विस्तार	मुख्य क्रिया	सविस्तार कर्म	सविस्तार पूरक	क्रिया का विस्तार
१	मैं	—	कर लूँगा	यह कार्य	—	किसी-न-किसी तरह
२	मनुष्य	स्वयं विद्या-विहीन	बना सकता है	दूसरों को	विद्वान	कैसे
३	वह	—	चल दिया	—	—	१. पिताजी की आज्ञा मान कर २. तुरन्त—
४	शिवाजी	—	हुए हैं	—	भारत के एक प्रसिद्ध वीर पुरुष	—
५	मैं	—	पहुँचा	जयपुर	—	आगरे से लौटते समय मथुरा होता हुआ

२. संयुक्त वाक्य (Compound Sentence)—जिस वाक्य के सभी उपवाक्य समानाधिकरण (Co-ordinate) हों, अथवा कम से कम एक उपवाक्य प्रधान उपवाक्य समानाधिकरण हो जैसे—

(क) तुम आये और वह गया यहां दोनों उपवाक्य समानाधिकरण हैं।

(ख) उसने कहा कि मैं बीमार हूँ, परन्तु यदि डाक्टर अनुमति दे दे तो मैं

आपके साथ चल सकता हूँ। यहां 'परन्तु मैं आपके साथ चल सकता हूँ' यह उपवाक्य प्रधान उपवाक्य 'उसने कहा' का समानाधिकरण है।

३. मिश्र वाक्य (Complex Sentence)—जिस वाक्य मे केवल एक प्रधान उपवाक्य हो और शेष सब आश्रित उपवाक्य हों, जैसे-मोहन ने कहा कि वह पुस्तक, जो कल मुझे आपने दी थी, बहुत अच्छी है।

इस वाक्य मे तीन उपवाक्य है—

१—मोहन ने कहा–प्रधान उपवाक्य

२—कि वह पुस्तक बहुत अच्छी है–आश्रित उपवाक्य

३—जो कल मुझे आपने दी थी—आश्रित उपवाक्य

संयुक्त और मिश्र वाक्यो के विग्रह को भली प्रकार समझने के लिए उपवाक्य और उसके भेद–प्रभेदों का ज्ञान आवश्यक है, अतः अब उपवाक्य के भेद समझाये जाते हैं।

उपवाक्य की परिभाषा—एक बड़े वाक्य के उस अंश को उपवाक्य (Clause) कहते है जिसमे एक कर्त्ता और एक मुख्य क्रिया हो। एक बड़ा वाक्य कई छोटे–छोटे वाक्यो से मिल कर बनता है। एक बड़े वाक्य के ये छोटे–छोटे वाक्य ही उपवाक्य कहलाते है।

उपवाक्य–भेद

उपवाक्य के मुख्य तीन भेद होते है—

१. प्रधान उपवाक्य (Principal clause)—वह उपवाक्य जो स्वतन्त्र हो, किसी के आश्रित न हो, जैसे—

(क) जब आप आये तब **हरि चला गया था**।

(ख) यदि आप सत्य न बोलते **तो वे नाराज हो जाते**।

(ग) **उसने पूछा** कि कल आप कहा गये थे।

ऊपर के तीनो वाक्यो मे मोटे टाइप मे उपवाक्य स्वतन्त्र है, किसी के आश्रित नही हैं, अतः ये प्रधान उपवाक्य है।

२. आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause)—वह उपवाक्य जो प्रधान उपवाक्य के या अन्य किसी उपवाक्य के आश्रित हो, जैसे—

(क) जब तक वह क्षमा न मांगेगा, मै उसको घर मे न घुसने दूँगा।

(ख) उसने कहा कि मैं कलकत्ता जाऊँगा।
(ग) यदि आप आते तो मैं आपके साथ अवश्य चलता।
(घ) वह मनुष्य जो कल यहाँ आया था, आज आगरे गया।

ऊपर के चारों वाक्यों मे मोटे टाइप में उपवाक्य स्वतन्त्र नही हैं, वे आश्रित हैं।

आश्रित उपवाक्य तीन प्रकार के होते हैं :—

(क) संज्ञा उपवाक्य (Noun clause)—जो उपवाक्य संज्ञा या सर्वनाम का काम करे अर्थात् जो किसी क्रिया का कर्त्ता, कर्म वा पूरक हो या इनका समानाधिकरण (Case in apposition) हो, जैसे—

(१) जो कुछ उसने कहा बिल्कुल ठीक है। (कर्त्ता)
(२) उसने कहा कि मैं कल आप से मिलूँगा। (कर्म)
(३) ऐसा प्रतीत होता है कि आज वर्षा अवश्य होगी। (पूरक)
(४) यह सुसम्वाद की आप परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये, अति आनन्द-कर है। (कर्त्ता समानाधिकरण)
(५) यह चर्चा कि वह संसार से चल बसा, मैंने कल सुनी। (कर्म-समानाधिकरण)
(६) प्रश्न यह है कि यह झगड़ा किस प्रकार निबटाया जाय (पूरक समानाधिकरण)

ऊपर के वाक्यों में मोटे टाइप में उपवाक्य संज्ञा उपवाक्य हैं।

(ख) विशेषण उपवाक्य (Adjective clause)—जो उपवाक्य विशेषण का काम करे अर्थात् जो किसी संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बतलाये। जैसे—

(१) यह वह छात्र है जो प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ है।
(२) यह वही क्षेत्र है जहाँ कितनी ही बार भारत के भाग्य का निबटारा हो चुका है।
(३) वह मनुष्य जिसने कल चोरी की थी, आज पुलिस द्वारा पकड़ लिया गया है।
(४) जो खायगा सो मरेगा।

ऊपर के वाक्यों में मोटे टाइप में उपवाक्य विशेषण उपवाक्य हैं।

(ग) क्रिया विशेषण उपवाक्य (Adverb clause)—जो उपवाक्य क्रिया विशेषण का काम करें, जैसे—

(१) यदि ईश्वर ने चाहा तो इस वर्ष खूब अनाज होगा।

(२) जहाँ चाह, तहाँ राह।

(३) जब मैं परिश्रम करता हूँ तब मुझे रुपया मिलता है।

(४) डाक्टर आने भी न पाया था कि रोगी चल बसा।

(५) वह अवश्य सफल होगा क्योंकि उसने जी-तोड़ परिश्रम किया है।

ऊपर के वाक्यों में मोटे टाइप में उपवाक्य क्रिया विशेषण उपवाक्य हैं।

(३) समानाधिकरण उपवाक्य (Co-ordinate clause)—वह उपवाक्य जो प्रधान उपवाक्य या किसी आश्रित उपवाक्य के समान अधिकार वाला हो, समकक्ष हो, बराबर के दरजे का हो और वह समानाधिकरण संयोजक अव्यय (Co-ordinate Conjunction) द्वारा जुड़ा हुआ हो, समानाधिकरण उपवाक्य कहलाता है, जैसे—

(१) श्याम निर्धन है किन्तु है परिश्रमी।

(२) यहां से तुरन्त चल दीजिए अन्यथा आप पछतायेंगे।

(३) इस कार्य को या तो आप ही कर लीजिए या मेरे ऊपर ही छोड़ दीजिए।

(४) वह न हँसता है, न रोता है।

(५) उसने कहा कि मैं कल अवश्य आऊँगा और आपके रुपये लेता आऊँगा।

ऊपर के पांचों वाक्यों में मोटे टाइप में उपवाक्य समानाधिरण उपवाक्य हैं, क्योंकि वे समानाधिकरण संयोजक अव्यय द्वारा जुड़े हुए हैं और जिस उपवाक्य के साथ वे आये हैं, उसके समान-अधिकार वाले हैं।

संयुक्त वाक्य का विश्लेषण

संयुक्त वाक्य का विग्रह करते समय सर्व-प्रथम मुख्य उपवाक्य ढूँढो। तदनन्तर उसके समानाधिकरण उपवाक्य ढूँढो। तत्पश्चात् इनके आश्रित उप-

वाक्यों का सम्बन्ध जिस उपवाक्य से हो, उसे बतलाओ। नीचे लिखे उदाहरणों द्वारा संयुक्त वाक्य का विश्लेषण भली प्रकार समझ में आ जायगा।

१. सीता परिश्रमी है और राधा आलसी।

विग्रह—

(क) सीता परिश्रमी है—मुख्य उपवाक्य

(ख) और राधा आलसी (है)—(क) का समानाधिकरण उपवाक्य
यह पूर्ण वाक्य एक संयुक्त वाक्य है।

२. वह कविता जो आचार का विरोध करती है, एक प्रकार से जीवन का प्रत्याख्यान करती है, और वह कविता जो आचार को उपेक्षा-दृष्टि से देखती है, स्वयं जीवन की उपेक्षा करती है।

विग्रह—

(क) वह कविता एक प्रकार से जीवन का प्रत्याख्यान करती है—मुख्य उपवाक्य।

(ख) जो आचार का विरोध करती है—(क) का विशेषण उपवाक्य।

(ग) और वह कविता स्वयं जीवन की उपेक्षा करती है—(क) का समानाधिकरण उपवाक्य।

(घ) जो आचार को उपेक्षा-दृष्टि से देखती है—(ग) का विशेषण उपवाक्य।
यह पूर्ण वाक्य एक संयुक्त वाक्य है।

मिश्र वाक्य का विश्लेषण

मिश्र वाक्य का विग्रह करते समय सर्व-प्रथम मुख्य उपवाक्य ढूँढो, तदनन्तर अन्य आश्रित उपवाक्यों से उसका सम्बन्ध बतलाओ। यदि वाक्य में कहीं पर कर्त्ता, कर्म, क्रिया आदि छिपे हुए हों तो उन्हें कोष्ठक में प्रकट कर दो। जैसे—

१. उसने कहा कि वह छंद जिसमें तुक न हो, यदि पढ़ा जाय तो कानों को अच्छा नहीं लगता।

विग्रह—

(क) उसने कहा—मुख्य वाक्य।

(ख) कि वह छंद कानों को अच्छा नहीं लगता—संज्ञा उपवाक्य, (क) में 'कहा' क्रिया का कर्म।

(ग) जिसमें तुक न हो—विशेषण उपवाक्य, (ख) में 'छन्द' की विशेषता प्रकट करता है।

(घ) यदि (है) पढ़ा जाय—क्रिया विशेषण उपवाक्य, (ख) में 'अच्छा नही लगता' की विशेषता प्रकट करता है। यह पूर्ण वाक्य एक मिश्र वाक्य है।

२. यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो इस प्रकार के सैकड़ों कर्मवीर मिलेंगे, जिन्होंने अपने दृढ़ निश्चय से वे कार्य भी कर दिखलाये जो असंभव समझे जाते थे।

विग्रह—

(क) इस प्रकार के सैकड़ों कर्म वीर मिलेंगे—प्रधान उपवाक्य।

(ख) यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो—क्रियाविशेषण उपवाक्य, (क) में 'मिलेंगे' क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

(ग) जिन्होंने अपने दृढ़.......दिखलाये—विशेषण उपवाक्य, (क) में कर्मवीर की विशेषता प्रकट करता है।

(घ) जो असंभव समझे जाते थे—विशेषण उपवाक्य, (ग) में 'कार्य' की विशेषता प्रकट करता है। यह पूर्ण वाक्य एक मिश्र वाक्य है।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों में साधारण, मिश्र एवं संयुक्त वाक्य छांटों और उनका विग्रह करो :—

१. सेठ ने मुनीम से कहा कि उस रुपये का आधा जो व्याज में प्राप्त हुआ है, काश्मीर रिलीफ फंड मे दे दो जिसमे लोगों को राहत मिले।

२. उद्योगी पुरुष सदैव सफलता प्राप्त करते हैं।

३. आप पधारेंगे या मैं वहां आऊँ।

४. यदि दिल्ली जाओ तो मुझसे मिलते जाना।

५. वह रुपया जो कल मिला था, आज जेब से गिर गया।

६. बात यह है कि प्रतिभाशाली कवि सरल से सरल भाषा में श्रेष्ठ कविता करता है।
७. जिस कविता से हृदय की कली विकसित न हो उठे और चित्त तन्मय न हो जाय, वह कविता कविता नही।
८. उसने कहा कि मैं आज से आपकी नोकरी छोड़ रहा हूँ, अतः मेरा हिसाब कर दीजिए।
९. बिना सोचे-विचारे कोई काम न करना चाहिए।
१०. चाबुक की मार के भय से घोड़ा अब ठीक चलने लग गया है।
११. जो ग्रन्थ इस प्रयोजन से लिखे जांय कि सर्वसाधारण उससे लाभ उठाएँ तो उनकी भाषा ऐसी सरल होनी चाहिए कि वे सर्व-बोधगम्य हों।
१२. जो जिस प्रान्त का वासी है, उसकी प्रारंभिक शिक्षा तो उसी प्रान्त की भाषा में हो, पर साधारण शिक्षा हिन्दी में, क्योंकि हिन्दी राष्ट्र-भाषा बन चुकी है।
१३. यह सत्य है कि भक्ति के ऊपर जो कुछ सूर और तुलसी कह चुके, वह अन्य कवियों की सामर्थ्य से परे है।
१४. वास्तव में वही लेखक सफल होता है जिसने मानव-जाति और विश्व का पूर्ण रूप से निरीक्षण किया है।
१५. जब हमारी इच्छा की पूर्ति नहीं होती है तब हम उदास हो जाते हैं और अपने भाग्य को दोष देने लगते हैं।

(४) विराम चिन्ह

बोलते समय बीच-बीच में जो ठहरना वा रुकना पड़ता है, उसे 'विराम' वा विश्राम कहते हैं और लिखते समय विराम की जगह जो चिह्न लगाया जाता है, उसे 'विराम चिन्ह' कहते हैं उपयुक्त विराम चिन्हों के प्रयोग करने से बोलने वा लिखने वाले व्यक्ति का भाव वा विचार स्पष्ट समझ में आ जाता है। अतः छात्रों को विराम चिन्ह का समुचित प्रयोग अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और बोलते तथा लिखते समय उनका अवश्यमेव यथास्थान प्रयोग करना चाहिए। यदि यथास्थान विराम-चिन्हों का प्रयोग नहीं किया जायगा तो भाषण

का लेख त्रुटिपूर्ण होगा और संभव है कि उपयुक्त स्थानों पर विराम-चिन्हों के अभाव मे कभी-कभी अर्थ का अनर्थ हो जाय। जैसे—

'रोको, मत जाने दो।' और 'रोको मत, जाने दो।
'तुमने भोजन कर लिया।' और 'तुमने भोजन कर लिया?
'राम, नवमी आ गई है। और 'राम-नवमी आ गई है।

इन वाक्य युग्मों के अर्थ और अभिप्राय में विराम चिन्हों के प्रयोग ने कितना अन्तर उपस्थित कर दिया है, यह देखने की वस्तु है। विराम-चिन्हों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए, किन्तु सोच समझकर। अब विराम-चिन्हों के नाम, चिन्ह प्रयोग आदि नीचे लिखे जाते हैं;—

१. अल्प विराम :—इसका चिह्न (,) है इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थानों पर किया जाता है। (क) वाक्य में जहाँ थोड़ी देर ठहरना हो, जैसे-यह भी खूब लड़का है, न कुछ कहता है, न सुनता है। (ख) एक ही जाती वा प्रकार के शब्दों के बीच में, जैसे—मैं किसी से द्वेष नही रखता, मेरे लिए हिन्दू, मुसलमान, जैन, सिख, ईसाई सब बराबर हैं। (ग) समानाधिकरण शब्द के दोनों ओर, जैसे—लंकाधिपति, रावण, राम से मारा गया। (घ) उद्धरण-चिन्ह के पूर्व, जैसे राम ने कहा, "मैं कल दिल्ली जाऊँगा"। (ङ) विशेषण, क्रिया-विशेषण और समानाधिकरण उपवाक्यों को पृथक् करने के लिए, जैसे—वह, जहाँ कि उसे जाना चाहिए था, नही गया। वह मनुष्य, जो चोरी करता है, कभी-न-कभी पकड़ा ही जाता है। वह निर्धन है, परन्तु है ईमानदार। (च) जहाँ किसी शब्द का लोप हो जाय, वहाँ जैसे—राम ने चार लड्डू खाये, शंकर ने, दो। (छ) सम्बोधन के पश्चात्, जैसे—राम! तुम कहाँ गये थे? (ज) समय-सूचक शब्दों को अलग करने के लिए, जैसे—श्री नेहरू कल दिनांक २० अगस्त, सोमवार, सायं ५ बजे रामनिवास-बाग में भाषण देंगे। इनके अतिरिक्त अन्य उपयुक्त स्थानों पर आवश्यकतानुसार अल्प विराम का प्रयोग किया जाता है।

२. अर्द्ध विराम :—इसका चिन्ह (;) है। पढते समय वाक्य में जब अल्प विराम की अपेक्षा अधिक रुका जाता है, तब इसका प्रयोग किया जाना

है। जैसे–जीवन प्रकृति का सिरमौर है; उसमें उद्योग का पर्यवसान है। इनकी कल खूब पिटाई हुई है, इसमे कोई शक नही; इनकी सूरत देख कर ही यह बात जानी जा सकती है। धन जाय सम्पति नष्ट हो जाय, गम नही ; पर प्रतिष्ठा को मैं उस समय तक न जाने दूंगा जब तक शरीर मे प्राण है।

३. पूर्ण विराम:—इसका चिन्ह (।) है। वाक्य के पूर्ण होने पर इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–मेरे देखते-देखते वह सन्दूक लेकर चलता बना। मैंने विचार किया कि यदि मैं इस वर्ष पास हो गया तो कलकत्ता चला जाऊंगा।

४. प्रश्न-सूचक चिन्ह :—इसका चिन्ह (?) है। प्रश्नात्मक वाक्यों एवं शब्दो के अन्त मे इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–तुम कहाँ जाना चाहते हो? क्यों?

५. विस्मय-सूचक चिन्ह :—इसका चिन्ह (!) है। विस्मयादि बोधक शब्द अथवा वाक्यो के अन्त में लगाया जाता है, जैसे–हे राम ! तूने यह क्या किया!

६. विवरण-चिन्ह :—इसका चिन्ह (:—)है। विषय को समझाने वा किसी कथन की व्याख्या करने मे वाक्य के अन्त मे इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–राम तीन हैं :— रामचन्द्र, परशुराम, बलराम।

७. निर्देशक चिन्ह :—इसका चिन्ह (—) है। विचार धारा मे रुकावट उपस्थित होने पर, एक वक्तव्य मे दूसरा वक्तव्य प्रकट करने पर इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–मोहन–परमात्मा उसका भला करे-बड़ा परोपकारी है। आन पर जान देना, रण में पीछे न हटना, शरणागत का पालन करना–ये राजपूतो के विशेष गुण हैं।

८. योजक चिन्ह :—इसका चिह्न (-) है। दो शब्दों वा शब्द-खंडों के जोड़ने मे इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–नर-नारी, पुस्तक-विक्रेता रघु-कुल-तिलक।

९. उद्धरण चिन्ह :—इसका चिन्ह (" ") है किसी कथन को जैसा का तैसा उद्धृत करने मे इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–हरि ने कहा,

"कल छुट्टी है।" राम ने कहा, "बिना अवधि समाप्त हुए मैं अयोध्या कैसे लौट चलूँ।" यदि कथन के भीतर भी दूसरा कथन हो वा वाक्य में कुछ शब्दों को विशेष अभिप्राय से प्रकट करना हो, तब इकहरे उद्धरण चिन्ह (' ') का प्रयोग किया जाता है, जैसे–'कल' शब्द का प्रयोग कई अर्थों मे होता है।

१०. कोष्ठक चिन्ह :— इसके चिन्ह ( ), { }, [ ], हैं। इसका प्रयोग किसी वाक्य या वाक्यांशो को पृथक् करने वा किसी वाक्य वा वाक्यांश का अर्थ स्पष्ट करने में किया जाता है, जैसे–वह अपनी बात पर अड़ा रहेगा (चाहे वह उसका दुराग्रह ही क्यों न हो), परन्तु वह झुकेगा नही; क्योंकि इसमें उसकी इज्जत का सवाल है। सत्कर्म करने वाला चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) प्राप्त कर लेता है।

११. लोप चिह्न :—इसके चिह्न (+ + + , …………) है। जब किसी कथन मे कुछ अंश लुप्त हो गया हो वा छोड़ दिया गया हो वहां इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–यदि यहां रहना है तो मन लगाकर काम करो, नहीं तो………… । यदि वह मेरे पास आता तो मैं + + + , परन्तु वह आया ही नहीं।

१२. लाघव चिह्न :—इसके चिह्न (. , ०) हैं। किसी बड़े शब्द के संक्षिप्त रूप लिखने मे जो अक्षर काम में लाये जाते हैं, वहां इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–एम. ए०; बी० ए०; पं० रमाकान्त; दि० ३ अगस्त, सन् १६६२ ई०।

१३. हंस-पद वा भूल-चिन्ह:—इस का चिह्न (‸) है। लिखते समय भूल से यदि कुछ रह जाय वा आवश्यकता–वश कुछ और जोड़ना पड़े, वहां नीचे इस चिह्न को लगाकर उस छूटे हुए अथवा जोड़े जाने वाले अंश को लिख देते हैं, जैसे–मैंने उसे ठीक पांच बजे (‸) मिलने को कहा था, परन्तु वह नहीं आया।

(उदाहरण में "(‸)" के ऊपर जोड़ा गया अंश: स्टेशन पर)

१४. तुल्यता-सूचक चिह्न :–इसका चिह्न (=) है। बराबर या समानार्थक बतलाना हो तब इसका प्रयोग किया जाता है, जैसे–रवि=सूर्य। एक रुपया=१०० नये पैसे।

इनके अतिरिक्त कुछ चिह्न और भी हिन्दी में कभी-कभी काम में लाये जाते हैं, जैसे—अपूर्ण विराम या कोलन (:), पुनरुक्ति सूचक चिह्न (,,) समाप्ति-सूचक चिह्न (–०–) आदि । अब अभ्यास के लिए कुछ अवतरण लिखे जाते हैं, छात्रों को चाहिए कि वे इनमें विराम-चिह्नों के प्रयोगों को समझें और हृदयंगम करें :—

(क) बा० जयशंकर प्रसाद एक सर्व-प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे । वे कवि, उपन्यास-लेखक, कहानी लेखक, नाटककार और निबन्ध-लेखक सभी कुछ थे ।

(ख) वीरगाथा काल की सबसे प्रसिद्ध रचनाएँ केवल दो हैं—'पृथ्वीराज रासो' तथा 'आल्हा खंड' ।

(ग) भारतेन्दु जी ने क्या गद्य, क्या पद्य, दोनों मे ही उत्कृष्ट रचना की ।

(घ) थोड़ी देर पश्चात् वृद्धा ने पूछा—"बेटी, मलवे के नीचे तेरी किसने रक्षा की ?"

(ङ) "जैसे भी हो, बेटा, तेरे लिए दवाई लाता हूँ"—यह कह कर लक्ष्मण पागल की भांति भागा । लोग चिल्लाते-पुकारते रह गये—अरे, अब मत जा, किसके लिये दवा लायेगा ? किन्तु लक्ष्मण ने कुछ न सुना । उसका हृदय 'दवा-दवा' चिल्ला रहा था ।

(च) पं० ईश्वर चन्द्र विद्या-सागर का जन्म दि० २६ सित० सन् १८२० ई० मे हुआ था ।

अभ्यास

निम्नलिखित अवतरणों में उपयुक्त स्थानों पर विराम-चिह्नों का प्रयोग करिए :—

(क) राम,हरि मोहन,और सोहन आज प्रातः काल दिल्ली गये ।

(ख) उन्होंने जो कुछ ज्ञानोर्जन किया,वह सब मातृभूमि पर न्यौछावर कर दिया और अपने प्रबुद्ध जीवन से जो आत्म त्याग का एक सर्वोच्च उदाहरण है वे भारत में नवजीवन भर गये धन्य धन्य उनके जीवन को

(ग) पहला स्पष्ट ही सुनना चाहते हो

दूसरा क्या कहने का अर्थ है

तीसरा तब यह अग्नि परीक्षा की चर्चा ही कैसे हुई
चौथा हाँ हाँ कहो न

(घ) हिन्दी मे गद्य ग्रंथ लिखे जाने लगे उनमें पटुता आने लगी भाषा प्रांजल होने लगी और उसकी व्याकरण बढ़ने लगी

(ङ) बन्दर भभकी साधारण अर्थ है बन्दर की घुड़की परन्तु विशेष अर्थ है थोथी धमकी जैसे राम मोहन शीघ्रता क्यों नही करता पिताजी यदि नाराज हो गये तो वे तुझे दण्ड दिये बिना न रहेंगे मोहन चल चल ऐसी बन्दर भभकी में मैं नही आने का

(च) जिसने कभी पुस्तक उठा कर ही नही देखी कहिए वह कैसे पास होगा

(छ)

साहित्य कुटरी
दरिया गंज आगरा
दि ३० ८ ६२ ई

प्रिय मुन्नी

सौभाग्यवती हो आज तुम्हारा कुशल पत्र प्राप्त हुआ तुमने जो ससुराल वालों के व्यवहार का वृत्तान्त लिखा वह सराहनीय है यह कहने में कुछ भी अत्युक्ति नही कि तुम्हारे ससुराल वाले अत्यधिक सभ्य व्यवहार कुशल और कुलीन हैं तुम अपने मृदु व्यवहार से सबको प्रसन्न रखना मैं शीघ्र ही तुम्हें बुलानें का प्रयत्न करूंगी चिन्ता मत करना यहां सब सकुशल है

तुम्हारी माँ

(ज) शेष कुशल पत्रोत्तर देते रहो घर पर सबसे यथायोग्य कहो परीक्षा समीप है पढ़ाई का ध्यान रखना ।

चौथा अध्याय

मुहावरे और लोकोक्तियां

(१) मुहावरे

जब कोई वाक्यांश अपना सामान्य अर्थ न बताकर किसी विशेष अर्थ का बोध कराये, तब उसे 'मुहावरा' कहते है। मुहावरे का प्रयोग सदा विशेष अर्थ मे ही होता है, सामान्य अर्थ मे नही, और यदि किसी वाक्यांश का प्रयोग उसके सामान्य अर्थ में ही हो तो फिर वह मुहावरा नही कहलायेगा, जैसे—'कान काट लेना'—इस वाक्यांश का सामान्य अर्थ है 'कानों का काट लेना' जैसे—'मोहन ने चाकू से हरि के कान काट लिये'। परन्तु इसी वाक्यांश का विशेष अर्थ है 'किसी से आगे बढ़ जाना' और जब इसी विशेष अर्थ में इसका प्रयोग किया जायगा तब यह 'मुहावरा' कहलायेगा, जैसे—अभिमन्यु ने युद्ध में अद्भुत वीरता प्रदर्शित करके बड़े-बड़े महारथियों के कान काट लिये' इसी प्रकार 'कलम तोड़ना' 'नानी याद आना' 'पापड़ बेलना' आदि वाक्यांशों का प्रयोग इसके सामान्य और विशेष दोनों अर्थो में ही किया जाता है, परन्तु छात्रों को स्मरण रखना चाहिए कि मुहावरे का प्रयोग वे सदा उसके विशेष अर्थ मे ही करें अब हम छात्रो की सुविधा और अभ्यास के लिए कुछ मुहावरों का प्रयोग करके समझाते है, वे उन्हें समझें और तदनन्तर शेष मुहावरों का अर्थ समझकर वे स्वयं अपने वाक्यो मे उनका प्रयोग करें।

१—अँगूठा दिखाना=तिरस्कारपूर्वक मना करना।

प्रयोग—मैंने सारी उम्र उसकी सहायता की, परन्तु आज जब काम पड़ा तो उसने मुझे साफ अँगूठा दिखा दिया।

२—अपना उल्लू सीधा करना=अपना मतलब बनाना।

प्रयोग—जो सदा अपना उल्लू सीधा करने में ही लगे रहते हैं, वे दूसरों का क्या भला करेंगे।

३—अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना=स्वयं अपनी प्रशंसा करना।

प्रयोग—अपने मुँह मियाँ मिट्ठू कौन नहीं बन सकता; किन्तु जिसकी सब सराहना करें, वास्तव मे वही सराहनीय है।

४—आँख लगना=सो जाना, प्रेम होना।

प्रयोग—बच्चे की रोते-रोते अभी आँख लगी है। किशोरी की कयल से जब आँख लड़ गई तब दोनों का एक दूसरे के घर आना-जाना आरम्भ हो गया।

५—आँखें फेर लेना=प्रेम तोड़ देना।

प्रयोग—विपत्ति में कौन किसका साथ देता है। जिसको हम अपना हितू समझते हैं वे भी आंख फेर लेते हैं।

६—आंखों में धूल झोंकना=धोखा देना।

प्रयोग—मैं तुम्हें बहुत दिनों से जानता हूँ, तुम्हारे कारनामों से परिचित हूँ, तुम मेरी आंखों में धूल नहीं झोंक सकते।

७—आसमान पर चढ़ाना=अतिशय प्रशंसा करना।

प्रयोग—प्रथम तो इसे कुछ आता जाता ही नही, फिर ऐसी-ऐसी बातें करके आप इसको आसमान पर और चढ़ा देते है।

८—उलटी माला फेरना=किसी का अनिष्ट चिन्तन करना।

प्रयोग—भगवान् ने आपकी सुन ली, अब आप हमारी भी मनोकामना पूर्ण कर दीजिए; कहीं ऐसा न हो कि हमें उलटी माला फेरनी पड़े।

९—उड़ती चिड़िया पहचानना=किसी के दिल की बात ताड़ जाना।

प्रयोग—अरे, हमसे झूँठ बोलते हो, हम फौरन उड़ती चिड़िया पहचान लेते हैं।

१०—खटाई में डालना=झमेले या उलझन में पटकना।

प्रयोग—अब की बार तो मैंने प्रयत्न करने में भी कोई कसर नहीं उठा रखी थी, फिर भी उसने मेरा मामला खटाई में डाल ही दिया।

११—गुड़-गोबर कर देना=काम बिगाड़ देना।

प्रयोग—मैंने घंटे भर तक समझा-बुझा कर उसको राजी किया था, किन्तु राम ने आते ही सब गुड़-गोबर कर दिया।

१२—गिरगिट की तरह रंग बदलना=अपने सिद्धांत पर न डटे रहना।

प्रयोग—ऐसे लोगों का जो गिरगिट की तरह रंग बदलते है, कैसे विश्वास किया जाय ?

१३—घी के दीपक जलाना=बहुत ज्यादा खुशी मनाना।

प्रयोग—रामचन्द्रजी के पुनः अयोध्या आने पर नगर-वासियों ने घर-घर में घी के दीपक जलाये।

१४—चूड़ियाँ पहनना=स्त्रियों की भांति डरना या कायरता दिखाना।

प्रयोग—भाई, बहुत हो चुका, अब मैं बरदाश्त नही कर सकता। मैंने चूड़ियाँ नही पहन रखी है, मुझे इसका प्रतिकार करना ही होगा।

१५—छप्पर फाड़ कर देना—बिना परिश्रम किये यों ही प्राप्त हो जाना।

प्रयोग—राम की उधर तो लाटरी फल गई, इधर दो लाख चाँदी के सट्टे में कमा लिये; व्यापार खूब चल ही रहा है, सच है भगवान जब किसी पर खुश होता है तो छप्पर फाड़ कर देता है।

१६—छाती पर मूँग दलना=किसी का अत्यधिक दिल दुखाना।

प्रयोग—मैं कही भी नही जाऊँगी, यही रहकर मैं तुम्हारी छाती पर मूँग दलूँगी।

१७—जान पर खेलना=अत्यधिक साहस के साथ किसी काम को करना।

प्रयोग—समुद्र में से मोती निकालना जान पर खेलना है।

१८—जीती मक्खी निगलना=जान बूझ कर बेईमानी करना।

प्रयोग—मैं झूठ कैसे बोलूँ, कैसे कहूँ कि मैंने रुपये नहीं लिये। चाहे ! भी हो, मुझसे तो यह जीती मक्खी नहीं निगली जायगी।

१९—टका-सा जवाब देना=साफ इन्कार कर देना।

प्रयोग—जब उससे घड़ी के बारे में पूछा गया तो उसने तत्काल टका सा जवाब दे दिया।

२०—टस से मस न होना=जरा भी प्रभावित न होना।

इतना समझाता हूँ

प्रयोग—देखो जी, कैसा लड़का है। इतना समझाता हूँ, परन्तु यह टस से मस नहीं होता।

२१—ठोकरें खाना=भूलें करना।

प्रयोग—ठोकरें खाने के बाद ही अक्ल आती है।

२२—ढाक के तीन पात=सदैव तंग हाल।

प्रयोग—इतना बड़ा कुटुम्ब और आय कम। बिचारा करे तो क्या करे, जब देखो तब वही ढाक के तीन पात।

२३—दाँत खट्टे करना=बहुत परेशान करना।

प्रयोग—अभिमन्यु ने चक्र-व्यूह-भेदन कर बड़े-बड़े महारथियों के दांत खट्टे कर दिये।

२४—दाँत काटी रोटी होना=घनिष्ट प्रेम होना।

प्रयोग—राम और मोहन सदा साथ रहते हैं, एक के बिना दूसरे को क्षण भर भी चैन नहीं पड़ता, वे तो दाँत-काटी रोटी हो रहे है।

२५—दाल न गलना=वश न चलना।

प्रयोग—आपकी दाल यहां न गलेगी, आप यहाँ से चले जाइए।

२६—दुम दबा कर भागना=डर के मारे भाग जाना।

प्रयोग—बहुत देर से वह शेखी बघार रहा था, किन्तु राम के घर से निकलते ही वह दुम दबा कर भाग गया।

२७—नाक का बाल होना=किसी के बहुत ज्यादा मुँह लगना।

प्रयोग—यदि काम बनाना है तो गुप्त जी से मिलो, क्योंकि आजकल वे ही आचार्य महोदय के नाक के बाल हो रहे है।

२८—नाक रगड़ना=खुशामद करना।

प्रयोग—मुझे क्या गरज कि मैं वहाँ जाऊं। उसे काम करवाना होगा तो दस बार यहाँ आयेगा और नाक रगड़ेगा।

२९—नाम न लेना=दूर रखना, याद न करना।

प्रयोग—तुमने शान्ति का विवाह कर लिया और हमारा नाम तक न लिया।

३०—नौ दो ग्यारह होना=भाग जाना।

प्रयोग—घटना-स्थल पर पुलिस के आते ही उपद्रवकारी नौ दो ग्यारह हो गये।

३१—पापड़ बेलना=जीवन-यापन के लिए कठोर श्रम करना।
प्रयोग—विचारे सुरेश को कभी सुख नही मिला। उसका तो सारा जीवन ही पापड़ वेलते बीता।

३२—पानी भरना=दूसरी से तुलना करने पर किसी वस्तु विशेष का निकृष्ट होना।
प्रयोग—चम्पा के सहज सौन्दर्य के सामने नगर की अन्य सुन्दरियाँ पानी भरती हैं।

३३—पानी के मोल=बहुत सस्ता।
प्रयोग—आजकल बाजार मे इतना आम आता है कि कभी-कभी तो वह पानी के मोल ही मिल जाता है।

३४—फूला न समाना=अत्यन्त प्रसन्न होना।
प्रयोग—रामू को ससुराल से इतना धन मिला कि रामू की माँ फूली नहीं समाई।

३५—बीड़ा उठाना—उत्तरदायित्व लेना।
प्रयोग—राजा ने सब सामन्तों की ओर देख कह कहा—'कौन इस कार्य को करने का बीड़ा उठाता है ?

३६—बायें हाथ का खेल=अत्यन्त सरल।
प्रयोग—महेश को कुश्ती में हराना मेरे बायें हाथ का खेल है।

३७-बाल बांका न होना=कुछ भी विगाड़ न होना।
प्रयोग—मैं विश्वास दिलाता हूं जब तक तुव यहाँ रहोगे, तब तक तुम्हारा बाल भी बाँका न होगा।

३८—भाड झोंकना=तुच्छ काम करना।
प्रयोग—अरे रामू, क्या दिल्ली जाकर भी भाड़ ही झोंका ?

३९—भंडा फोड़ना=भेद खोलना।
प्रयोग—या तो आप अपने वचनों पर दृढ़ रहिए और मुझे दो हजार रुपये दे दीजिए, अन्यथा मैं सब भंडा फोड़ दूँगा।

४०—मुँह की खाना=हार खाना।
प्रयोग—पं० बनारसीदास अपने आपको बहुत समझते थे। यहाँ उन्होंने सब

पर अपने पाण्डित्य का आतंक जमा रखा था। कल जब पं० शंखधर से उनका शास्त्रार्थ हुआ तब उन्होंने ऐसी मुंह की खाई कि वे रात्रि को ही यहाँ से चले गये।

४१–मुट्ठी गरम करना=घूँस देना, रिश्वत देकर काम निकालना।
प्रयोग—आज न्याय नहीं है। आज तो मुट्ठी गरम करो और चाहो सो करवालो।

४२–मुँह मोड़ना=किसी काम से विरक्त होना वा दूर हटना।
प्रयोग–यदि उद्योग से मुँह मोड़ोगे तो अवनति का द्वार देखोगे।

४३–रंग चढ़ना=प्रभाव पड़ना।
प्रयोग—रमेश पर आजकल उस गवैये का रंग चढ़ रहा है।

४४–रंग सियार=ढोंगी, धूर्त।
प्रयोग–वह रंगा सियार है, जरा उससे बच कर रहना।

४५–लुटिया डुबोना=काम बिगाड़ देना।
प्रयोग—मैंने काम बनाने में कसर नहीं की, किन्तु उसने वहाँ पहुंचते ही लुटिया डुबो दी।

४६–सिर उठाना=विरोध प्रकट करना, उपद्रव करना।
प्रयोग–केन्द्रिय शासन के ढीला होते ही प्रान्तीय सरकारें सिर उठाने लगीं।

४७–सिर पड़ना=जिम्मे आना।
प्रयोग–भाग्य की बात है, घड़ी तोडी तो किसने और सिर पड़ी मेरे।

४८–सितारा चमकना=भाग्योदय होना।
प्रयोग–अच्छे दिन के बाद बुरे दिन भी आते हैं। क्या सदा ही सितारा चमकता है?

४९–हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना=कुछ न करना।
प्रयोग–भाई, हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना से काम नहीं चलेगा। निराशा त्याग कर बाल-बच्चों का पेट भरने के लिए कुछ करना ही होगा।

५०–हवा लगना=प्रभाव पड़ना।
प्रयोग–पता नहीं, आजकल मोहन को कैसी हवा लगी है कि वह अपनी माँ का भी कहना नहीं मानता है।

१

५१–हाथ साफ करना=खा जाना, मारना ।

प्रयोग–क्या जमींदार और क्या महाजन, दोनों ही बेचारे किसान की पसीने की कमाई पर हाथ साफ करते थे ।

५२–हाथ पैर बचाना=सावधान होकर चलना ।

प्रयोग–जमाना खराब है, हाथ पैर बचा कर काम करो । यदि कही पकड़े गये तो इज्जत तो खराब होगी ही, जेल की हवा और खाओगे ।

५३–हाथ धोकर पीछे पड़ना=जी जान से लगना ।

प्रयोग–देखो मोहन, यह काम दिखता ही सरल है, परन्तु है बड़ कठिन । जब तक तुम हाथ धोकर इसके पीछे नही पड़ोगे, सफलता नही मिलने की ।

५४—पेट में चूहे कूदना=जोर की भूख लगना ।

प्रयोग—भाई ! काम की बात बाद मे करना । पहले कुछ खाने को दो, पेट में चूहे कूद रहे हैं ।

५५—शहद लगाकर चाटना=निरर्थक चीज को यत्न से रखे रखना ।

प्रयोग—लो, इसे तुम शहद लगाकर चाटो, मेरा काम तो इसके बिना यों ही चल जायगा ।

५६—भीगी बिल्ली बनना=भय वा स्वार्थवश अत्यन्त नम्र बनना ।

प्रयोग—जब तो बढ़-बढ़ कर बातें कर रहे थे, अब उनके सामने भीगी बिल्ली क्यों बन रहे हो ?

५७—हाथ फैलाना=याचना करना ।

प्रयोग—दूसरों के सामने हाथ फैलाना अपने को नीचा गिराना है ।

५८—गंगा नहाना—किसी कठिन काम को पूरा कर लेना, कृतकार्य होना ।

प्रयोग—राम को सरला के लिए कोई वर नही मिल रहा था, जो मिले थे वे दहेज माँगते थे । भाग्य से एक शिक्षित युवक ने बिना दहेज लिए सरला के साथ विवाह करना स्वीकार कर लिया । सरला का विवाह करके अब राम गंगा नहा लेगा ।

५९—खटाई में पड़ना=किसी बात का उलझन में पड़ना ।

प्रयोग—साहब के नोट लगा देने से मेरी तरक्की का मामला खटाई में पड़ गया।

६०—एक लाठी से हाँकना=सब के साथ एक सा व्यवहार करना।

प्रयोग—राम योग्यायोग्य को नहीं देखता, वह तो सबको एक लाठी से हाँकता है।

६१—आसमान पर चढ़ना=गर्व से इतराना, मिजाज बहुत बढ़ जाना।

प्रयोग—आज तुम्हारे पास पैसा हो गया है, किन्तु तुम्हें आसमान पर पर नही चढ़ना चाहिए। लक्ष्मी चंचला है, आज है कल नही।

६२—आ लेना=पकड़ लेना, पहुँच जाना।

प्रयोग—जेब कतरा भागा तो बहुत, किन्तु रामू ने चौपड़ तक पहुँचते-पहुँचते उसे आ लिया।

(क) शरीर सम्बन्धी

(१) चोटी

१. चोटी का=सबसे ऊँचा।
२. चोठी काटना=काबू में लेना।
३. चोटी कटवाना=वशीभूत होना।
४. एड़ी से चोटी तक जोर लगाना=भरसक प्रयत्न करना।
५. चोटी खोलना=प्रतिज्ञा करना।
६. चोटी बाँध कर कार्य करना=भरसक प्रयत्न करना।

(२) बाल

७. बाल बाल बचना=आपत्ति से बचना।
८. बाल बाँका न होना=कुछ भी हानि न होना।
९. बाल की खाल निकालना=सूक्ष्म से सूक्ष्म बात खोजना।
१०. बाल बनवाना=हजामत करवाना।
११. बाल उखाड़ना=बिगाड़ करना।
१२. बाल उड़ाना=ठोकना, पीटना।

(३) सिर, मूँड या माथा

१३. सिर मारना=बहुत प्रयत्न करना।

१४. सिर उठाना=सामना करने को तैयार होना।
१५. सिर मूँडना=ठगना।
१६. सिर पर चढाना=आदत बिगाड़ना।
१७. सिर पर चढ़ना=धृष्ट (गुस्ताख) होना।
१८. सिर खाना=परेशान करना।
१९. सिर का पसीना एड़ी को आना=कठिन परिश्रम करना।
२०. सिर पटकना=कठोर श्रम करना।
२१. सिर होना=किसी को तंग करना, पीछे पड़ना।
२२. सिर लड़ाना=प्रयत्न करना।
२३. बे सिर पैर की=ऊट-पटांग बात।
२४. सिर देना=त्याग करना।
२५. सिर मुड़ाना=चेला बनना।
२६. मूँड़ पचाना=व्यर्थ की बातों मे तंग करना।
२७. मूँड़ फोड़ना=झगड़ना।
२८. मूँड़ भिड़ाना-झगड़ा करना।
२९. मूँड़ मुंड़ाना=सन्यास लेना, कार्य आरम्भ करना।
३०. मूँड़ लड़ाना=सोचना।
३१. मूँड़ चढ़ना=आदत बिगाड़ना।
३२. माथा पचाना=प्रयत्न करना, तंग करना।
३३. माथा-पच्ची करना=प्रयत्न करना।
३४. माथा फोड़ी करना=झगड़ना।
३५. माथा टेकना=नमस्कार करना।
३६. माथे चढ़ना=बेपरवाह रहना।
३७. माथे चढ़ाना=बिगाड़ना।
३८. माथे होना=कर्जा होना।
३९. माथा भिड़ाना=झगड़ा करवाना।
४०. माथा लगाना=प्रयत्न करना, सोचना।
४१. माथा जोड़ी करना=सलाह करना।

(४) आँख

४२. आँख खुलना=भ्रम नष्ट होना, समझ आना ।
४३. आँख चुराना=नजर बचाना, सामने न आना ।
४४. आँख बिछाना=प्रेम से स्वागत करना ।
४५. आँख दिखाना=धमकाना ।
४६. आँख फिर जाना=पहले जैसा प्रेम न होना ।
४७. आँख मारना=इशारा करना ।
४८. आँख लगना=सो जाना, प्रेम होना ।
४९. आँख मिचना=मर जाना ।
५०. आँखें चार होना=सामने होना ।
५१. आँखों से गिरना=नजरों से उतरना, प्रतिष्ठा कम होना ।
५२. आँखों का तारा=अत्यन्त प्यारा।
५३. आँखों पर ठीकरी रखना=वेशरम होना ।
५४. आँखों में धूल झोंकना=धोखा देना ।
५५. आँखों मे चर्बी छाना=घमण्ड होना ।

(५) नाक

५६. नाक काटना=अपमानित करना । प्रतिष्ठा भंग करना ।
५७. नाक में दम करना=तंग करना ।
५८. नाकों चने चबाना=बहुत ज्यादा तंग करना ।
५९. नाक कटाना=कमी दिखाना, प्रतिष्ठा खोना ।
६०. नाक बजाना=अधिक बोलना ।
६१. नाक रगड़ना=चापलूसी करना ।
६२. नाक भौं सिकोड़ना=घृणा करना ।
६३. नाक रखना=इज्जत बचाना ।
६४. नाक सिकोड़ना=घृणा करना ।
६५. नाक पर मक्खी बैठना=कमी के कारण बदनामी करवाना ।
६६. नाक चढ़ाना=घृणा करना ।
६७. नाक का बाल=अत्यन्त मुख्य ।

(६) मूँछ

६८. मूँछ पर हाथ फेरना=शेखी बघारना ।

६९. मूँछ फटकारना=वीरता दिखाना ।

७०. मूँछ कटवाना=हार मानना ।

७१. मूँछ नीची कर लेना=नम्रता दिखाना ।

(७) कान

७२. कान का कच्चा=शीघ्र विश्वास करने वाला ।

७३. कान पर जूँ न रेंगना=ध्यान न देना ।

७४. कान भरना=चुगली खाना ।

७५. कान काटना=नीचा दिखाना ।

७६. कान खाना=अत्यधिक बोलना ।

७७. कान खड़े होना=भयभीत होना ।

७८. कान में तेल डालना=ध्यान न देना, कुछ भी परवाह नहीं करना

७९. काना फूसी करना=चुपचाप बात करना ।

८०. कान मसलना=समझाना, सजा देना ।

८१. कान उखाड़ना=सजा देना ।

(८) गाल

८२. गाल बजाना=अपनी प्रशंसा आप करना ।

८३. गाल लाल करना=सजा देना ।

८४. गाल फोड़ना=पीटना ।

८५. गाल फुलाना=रूठना ।

(९) दांत, जीभ

८६. दाँत पीसना=क्रोध करना ।

८७. दाँत उखाड़ना=ठोकना, मारना ।

८८. दांत निकालना=हँसना ।

८९. दांत बजाना=बड़बड़ाना, लड़ाई करना ।

९०. दांत दिखाना=चिढ़ाना ।

९१. दांत तोड़ना=मारना, नीचा दिखाना।
९२. दांत झाड़ना=लड़ाई करना।
९३. दांतों तले अंगुली दबाना=आश्चर्य करना।
९४. दांत में तिनका लेना=लज्जित होना, क्षमा मांगना।
९५. दांत काटी रोटी=घनिष्ट प्रेम।
९६. दांतों के नीचे जीभ देना=शान्त रहना।
९७. जीभ दिखाना=चिढ़ाना।
९८. जीभ लड़ाना=प्रेम करना।
९९. जीभ हिलाना=मुंह खोलना, बोलना।
१००. जीभ करना=अधिक बोलना।

(१०) मूंह

१०१. मुंह मोड़ना=इन्कार करना।
१०२. मुंह बनाना=चिढ़ाना, मुंह विकृत करना।
१०३. मुंह की खाना=अपमानित होना।
१०४. मुंह उतरना=उदास होना।
१०५. मुंह में लगाम न होना=मनमानी बकना।
१०६. मुंह में पानी भरना=इच्छा होना।
१०७. मुंह फक्क होना=घबराना, डर जाना।
१०८. मुंह फट होना=स्पष्ट बात कहना।
१०९. मुंह लगना=चापलूसी करना।
११०. मुंह लगाना=ढीठ बनाना।
१११. मुंह लेकर रह जाता=लज्जित होना, उदास होना।
११२. मुंह पर हवाई उड़ना=दुखी होना।
११३. मुंह दिखाना=शान से बात करना।
११४. मुंह देखे की प्रीत=दिखावटी प्रेम।
११५. मुंह काला होना=बदनामी होना, धब्बा लगना।

(११) गला या गर्दन

११६. गले पड़ना=सिर होना।

११७. गला काटना=अन्याय करना, वंचित रखना।
११८. गर्दन पर सवार होना=पीछे पड़ना।
११९. गर्दन पर छुरी फेरना=अत्याचार करना।
१२०. गला भरना=गद् गद् होना।
१२१. गले डालना=सुपुर्द करना।
१२२. गला पकड़ना=दबा देना।
१२३. गला बैठना=आवाज कम होना।
१२४. गले लगना=प्रेम करना।
१२५, गले का हार=अत्यन्त प्यारा।
१२६. गला कटाना=लोभ में पड़कर हानि उठाना।
१२७. गला घोटना=दबाना, मार देना।

(१२) छाती

१२८. छाती ठोकना=हिम्मत से कहना।
१२९. छाती पर मूँग दलना=अधिक तंग करना।
१३०. छाती पर बाल होना=हिम्मत होना।
१३१. छाती के बल चलना=जबरदस्ती बात जमाना।

(१३) पेट

१३२. पेट फोड़ना=हानि पहुँचाना।
१३३. पेट में रखना=गुप्त रखना।
१३४. पेट भरना=निर्वाह करना।
१३५. पेट पालना=निर्वाह करना।
१३६. पेट दिखाना=दशा बतलाना, खाने के लिए कुछ मांगना।
१३७. पेट की आग बुझाना=भोजन करना।
१३८. पेट काटना=बचत के लिए कम खाना।
१३९. पेट का हलका=ओछे मिजाज का।
१४०. दाई से पेट छिपाना=जानकार से गुप्त रखना।

(१४) पीठ या कमर

१४१. पीठ दिखाना=हार कर भाग जाना।

१४२. पीठ फेरना=विमुख होना।
१४३. पीठ ठोकना=उत्साहि करना, प्रशंसा करना।
१४४. कमर बाँधना=तैयार होना।
१४५. कमर कसना=तैयार होना।

(१५) कलेजा

१४६. कलेजा मुँह को आना=घबराना।
१४७. पत्थर का कलेजा करना=कठोर होना।

(१६) हाथ

१४८. हाथ खींचना=सहायता न करना।
१४९. हाथ बँटाना=सहायता देना।
१५०. हाथ उठाना=मारने को तैयार होना।
१५१. हाथ पीले करना=विवाह करना।
१५२. हाथ डालना=किसी कार्य में भाग लेना।
१५३. हाथ पसारना=याचना करना।
१५४. हाथ धोना=आशा खो देना।
१५५. हाथ धोकर पीछे पड़ना=जी जान से लग जाना।
१५६. हाथ लगना=मिल जाना।
१५७. हाथ धो बैठना=खो देना।
१५८. हाथ तंग होना=खर्च के लिए धन की कमी होना।
१५९. हाथ मारना=चोरी करना।
१६०. हाथ दिखाना=वीरता दिखाना।
१६१. हाथ कटाना=लिखकर दे देना, वश में होना।
१६२. हाथ आना=प्राप्त होना।
१६३. हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना=कुछ न करना।
१६४. हाथ मलना=पश्चाताप करना।
१६५. हाथों-हाथ=शीघ्र।
१६६. हाथ का मैल=तुच्छ पदार्थ।

१६७. हाथ-पैर फूलना=डर से घबराना ।

१६८. हाथ-पैर चलना=परिश्रम करना ।

१६९. आड़े हाथों लेना=खरी-खरी सुनाना ।

(१७) कन्धा

१७०. कन्धा लगाना=सहारा देना ।

१७१. कन्धे से कन्धा भिड़ाना=साथ-साथ कार्य करना ।

(१८) मुठ्ठी

१७२. मुठ्ठी गर्म करना=घूँस देना ।

१७३. मुठ्ठी-भर=बहुत थोड़ा ।

१७४. मुठ्ठी में लेना=वश में करना ।

१७५. मुठ्ठी भरना=घूँस देना ।

(१९) हथेली

१७६. हथेली चूमना=प्यार करना ।

१७७. हथेली लगाना=सहारा देना ।

१७८. हथेली पर सरसों जमाना=जल्दबाजी करना ।

(२०) अँगूठा

१७९. अँगूठा दिखाना=चिढ़ाना ।

१८०. अँगूठा पूजना=आदर करना ।

(२१) पैर या पांव

१८१. पैर पूजना=प्रतिष्ठा करना, सम्मानित करना ।

१८२. पैर पटकना=कोशिश करना ।

१८३. पाँव उखाड़ना=भगा देना ।

१८४. पाँव उखड़ जाना=भाग आना ।

१८५. पाँव जमाना=स्थिर होना ।

१८६. पाँव तले से जमीन खिसक जाना=भयभीत होना ।

१८७. पाँवाढोक कहना=प्रणाम कहना ।

(२२) चाल

१८८. चाल चलना=धोखा देना ।

१८९. चाल डालना=समस्या पैदा करना।
१९०. चाल दिखाना=प्रभाव डालना।
१९१. चाल समझना=बात जानना।
१९२. चाल करना=धोखा देना।

(२३) ठोकर खाना

१९३. ठोकर लगाना=घृणा के साथ किसी वस्तु को छोड़ना।
१९४. ठोकर खाना=कष्ट झेलना।
१९५. ठोकर झेलना=कष्ट का सामना करना।
१९६. ठोकर मारना=प्राप्त वस्तु को छोड़ देना।

(ख) पशु सम्बन्धी

१. भीगी बिल्ली बनना=डर के मारे चुप हो जाना।
२. बछिया का ताऊ=महामूर्ख।
३. रंगा स्यार होना=धूर्त या धोखे बाज होना।
४. बन्दर-भभकी=थोथी धमकी।
५. गिरगिट की तरह रंग बदलना=एक बात पर न रहना।
६. जीती मक्खी निगलना=सरासर बेईमानी करना।
७. काठ का उल्लू=महा मूर्ख।
८. अनाज के साथ घुन पिसना=दोषी के साथ निर्दोषो को सजा मिलना।
९. साँप छछूंदर की गति=भ्रम में पड़ना।
१०. खिसयानी बिल्ली=लज्जा के मारे क्रोध करना।
११. लोमड़ी के अंगूर=न मिलने वाली वस्तु।
१२. हाथी के पीछे कुत्तों का भोंकना=बड़ों के पीछे छोटों का चिल्लाना।
१३. हाथी के दाँत=दिखावटी वस्तु।
१४. मेंढकी को जुकाम=साधारण मनुष्य को घमंड होना।
१५. दुधारु गाय की लात=स्वार्थवश क्षमा करना
१६. साँप लोटना=निराश होना, इच्छा करना।
१७. अक्ल बड़ी या भैंस=बुद्धि या पदार्थ में से कौनसा अच्छा।
१८. अन्धे के हाथ बटेर=भाग्यवश असम्भव बात का संभव होना।

१६. उल्लू सीधा करना=काम बनाना या निकलवाना।

२०. उल्लू बनाना=मूर्ख बनाना।

(ग) क्रियावाची मुहावरे

(१) आना

१. आ बनना=अवसर हाथ लगना।

२. आ लगना=ठिकाने पहुँचना।

३. आ पड़ना=यकायक आ जाना।

४. आ लेना=पकड़ लेना।

(२) उठाना

५. उठ खड़ा होना=चलने को तैयार होना।

६. उठ जाना=चल बसना।

७. उठते-बैठते=हर समय।

८. उठना-बैठना=मेल जोल।

(२) उलटना

९. उलट-पुलट=गड़बड़, अस्त व्यस्त

१०. उलट-फेर=परिवर्तन।

११. उलटा-सीधा=सही-गलत।

१२. उलटी खोपड़ी का=मूर्ख।

(४) काटना

१३. काटखाना=डंक मारना, घायल कर देना।

१४. काटने दौड़ना=बहुत गुस्से में बोलना।

१५. काटे खाना=सूनेपन का अनुभव करना, मन को क्लेश देना।

१६. काट-छाँट=संशोधन, घटा-बढ़ी।

(५) चढ़ना

१७. चढ़ दौड़ना=चढ़ाई करना।

१८. चढ़ बनना=मनचाही होना।

१९. चढ़ बैठना=दबा लेना।

२०. चढ़ा-चढ़ी=लाग डाट।

(६) दौड़ल

२१. दौड़-धूप=बहुत कोशिश ।
२२. दौड़ लगाना=बार-बार आना-जाना ।
२३. दौड़ा-दौड़ी=जल्द बाजी ।

(७) धरना

२४. धर-पकड़=गिरफ्तारी ।
२५. धरा-धराया=संचित किया हुआ, रखा हुआ ।
२६. धरा रह जाना=उपयोग मे न आना ।
२७. धर पकड़ना=भाग कर पकड़ना ।

(८) होना

२८. हो चुकना=खर्च हो जाना, मर जाना ।
२९. हो गुजरना=घटित होना ।
३०. होने लगना=किसी काम का आरम्भ होना ।
३१. होना-हवाना=होना-जाना ।

विविध (अ)

१. अन्धे की लकड़ी=एक मात्र सहारा ।
२. आँख का अन्धा, गांठ का पूरा=मूर्ख धनी ।
३. आँखों का तारा=अत्यन्त प्रिय ।
४. इने गिने=थोड़े से ।
५. आँधी के आम=बिना प्रयास अधिक लाभ ।
६. ईद का चाँद=बहुत दिनों बाद दिखाई देना ।
७. उधेड़-बुन=सोच-विचार ।
८. काठ का उल्लू=निरा मूर्ख ।
९. कान का कच्चा=शीघ्र विश्वास करने वाला ।
१०. गीदड़ भभकी=कोरी धमकी ।
११. गधे के सींग=जिसका अस्तित्व ही न हो ।
१२. गुलर का फूल=जिसका अस्तित्व ही न हो ।
१३. गुरू-घन्टाल=धूर्त ।

१४. घर-बैठे=बिना परिश्रम किए ।

१५. चिकना घड़ा=जिस पर कोई असर न हो ।

१६. चिराग तले अंधेरा=जहां जैसी आशा हो, वहां वैसा न मिलना ।

१७. छटा हुआ=बदमाश ।

१८. छिपा रुस्तम=जिसका भेद प्रकट न हो ।

१९. टक्कर का=मुकाबले का ।

२०. टेढ़ी खीर=अत्यन्त कठिन ।

२१. ढाक के तीन पात=सदैव तंग हाल ।

२२. तू-तू मैं-मैं=गाली-गलौज ।

२३. थाली का बैंगन=जो कभी किसी पक्ष में और कभी किसी पक्ष में ।

२४. दाना-पानी=जीविका ।

२५. द्रोपदी का चीर=जिसका अन्त न हो ।

२६. धोखे की टट्टी=भ्रम में डालने वाली वस्तु ।

२७. नादिरशाही=घोर अत्याचार ।

२८. नाक का बाल=अत्यन्त प्रिय, मुख्य ।

२९. पांचों घी में=खूब लाभ होना ।

३०. पानी के मोल=बहुत सस्ता ।

३१. पुराना घाघ=अनुभवी ।

३२. बेपैन्दे का लोटा=जो अपनी बात पर स्थिर न रहे ।

३३. बन्दर-घुड़की=थोथी धमकी ।

३४. बगुला-भगत=कपटी, धूर्त ।

३५. बछिया का ताऊ=महा मूर्ख ।

३६. भाड़े का टट्टू=किराये का आदमी ।

३७. मक्खी-चूस=कंजूस ।

३८. माई का लाल=बली, साहसी ।

३९. मिट्टी के माधो=मूर्ख ।

४०. रंगा सियार=धोखेबाज ।

४१. लंगोटिया यार=घनिष्ट मित्र ।

४२. लोहे के चने=कठिन कार्य ।
४३. सफेद झूंठ=बिल्कुल झूंठ ।
४४. शवरी के वेर=साधारण भेंट ।
४५. हराम का=बेईमानी का ।
४६. हाथ का मैल=तुच्छ ।

विविध (अ)

४७. अक्ल पर पर्दा पड़ना=बुद्धि नष्ट होना ।
४८. अड्डा जमाना=नित्य बने रहना ।
४९. आग वरसना=बहुत गर्मी पड़ना ।
५०. आसमान में थेगली लगाना=असम्भव वात को कर दिखाना ।
५१. आकाश पाताल एक करना=घोर परिश्रम करना ।
५२. आग का पुतला=अत्यन्त क्रोधी ।
५३. इलाज करना=ठीक कर देना (आदत) ।
५४. इति श्री होना=कार्य समाप्त हो जाना ।
५५. ईद का चांद होना=कभी-कभी दिखाई देना ।
५६. ईंट से ईंट भिड़ाना या वजाना=नष्ट कर देना ।
५७. उल्टी गंगा बहाना=परम्परा के विरुद्ध कार्य करना ।
५८. उठ जाना=मर ज.ना ।
५९. उल्टे छुरे से मूंडना=मूर्ख बनाकर ठगना ।
६०. ओछा होना=घमण्ड करना ।
६१. कलई खुलना=वास्तविकता का ज्ञान हो जाना ।
६२. कट जाना=लज्जित होना ।
६३. कलम तोड़ना=बहुत अच्छा लिखना ।
६४. कुत्ते की मौत मरना=बुरी मृत्यु होना ।
६५. काम आना=युद्ध में मारा जाना ।
६६. कीचड़ फेंकना=काम बिगाड़ना, बिगाड़ करना ।
६७. खयाली पुलाव=थोथे विचार ।
६८. खाक उड़ाना=बदनामी करवाना ।

६९. खाक छानना=भटकना।
७०. खाक मे मिलना=बरबाद होना।
७१. खून बहाना=मारकाट करना।
७२. खून उबलना=क्रोध आना।
७३. गांठ का पूरा=धनवान।
७४. गुलछर्रे उड़ाना=आनन्द मनाना।
७५. गुदड़ी का लाल=गरीब परन्तु बुद्धिमान।
७६. गुड़ गोबर होना=काम बिगड़ना।
७७. घाट-घाट का पानी पानी=विशेष अनुभव प्राप्त करना।
७८. घी के दिये जलाना=आनन्द मनाना।
७९. घी मे ऊँगलियां होना=लाभदायक परिस्थति होना।
८०. चकमा देना=धोखा देना।
८१. चम्पत होना=खिसक जाना।
८२. चाल चलना=धोखा देना।
८३. चूँ करना=कुछ न कहना।
८४. चूना लगाना=धोखा देकर ठगना।
८५. चौका लगाना=सर्वनाश करना।
८६. चिराग तले अन्धेरा=स्वयं को लाभ न पहुँचा कर अन्य को लाभ पहुँचाना।
८७. छप्पर फाड़ कर देना=बिना परिश्रम प्राप्ति, अनजान तरीके तथा स्था से प्राप्ति।
८८. छठी का दूध याद आना=घोर संकट मे पड़ना।
८९. छक्के छूटना=घबरा जाता।
९०. छिपा रुस्तम=ऊपर से भला, अन्दर से धूर्त।
९१. जले पर नमक छिड़कना=दुखी को अधिक दुखी करना।
९२. जलती आग में घी डालना=क्रोध बढ़ाना।
९३. जहर की घूंट पीना=असह्य बात सहन करना।
९४. जान के लाले पड़ना=संकट में फँसना।
९५. जी छोटा करना=उदास होना।

९६. जी चुराना=मन न लगना।
९७. जी खट्टा होना=नाराज होना।
९८. जूती चटकाना=बेकार फिरना।
९९. झख मारना=बेकार परिश्रम करना।
१००. झिक-झिक करना=झगड़ना, व्यर्थ की बात करना।
१०१. टपक पड़ना=अचानक आना।
१०२. टकासा जवाब देना=कोरा उत्तर देना।
१०३. टस से मस न होना=जरा भी न हिलना या भागना।
१०४. टांय टांय फिस=आयोजन बहुत बड़ा परन्तु, फल कुछ नहीं।
१०५. टीका टिप्पणी करना=आलोचना करना।
१०६. टोह रखना=पता रखना, जाँच रखना।
१०७. ठठ्ठा करना=हँसी-मजाक करना।
१०८. डकार तक न लेना=बिल्कुल हजम कर जाना।
१०९. डींग मारना=झूठी प्रशंसा करना।
११०. डंके की चोट=खुल्लम खुल्ला।
१११. ढोल पीटना=प्रचार करना।
११२. ढोल लगाना=नीलाम करवाना।
११३. ढोल की पोल होना=ढोंग होना।
११४. ढाक के तीन पात=सदैव दुखी या तंग रहना।
११५. ताक में रहना=तलाश में रहना।
११६. तिलमिलाना=दुखी होना।
११७. तिलाञ्जली देना=छोड़ देना।
११८. तीन तेरह होना=अलग-अलग होना।
११९. तूती बोलना=खूब चलती रहना।
१२०. थूक उछालना=थोया झगड़ा करना।
१२१. थूकाफजीती करना=बुराई या बदनामी करना।
१२२. थूक कर चाटना=बात कह कर बदल जाना।
१२३. दम के दम में=बहुत जल्दी, अति शीघ्र।

१२४. दाल में काला=सन्देह युक्त बात ।
१२५. दाल न गलना=वश न चलना ।
१२६. दाल गलना=अर्थ सिद्ध होना ।
१२७. दवे पांव निकल जाना=चुप-चाप चले जाना ।
१२८. दो कौड़ी का=अति तुच्छ ।
१२९. दो टूक बात कहना=साफ-साफ कहना ।
१३०. द्रोपदी का चीर होना=समाप्त न होने वाली बात ।
१३१. दिन काटना=समय व्यतीत करना ।
१३२. दिन फिरना=फिर से अच्छा समय आना ।
१३३. दिन रात एक कर देना=कठिन परिश्रम करना ।
१३४. दंग रहना=चकित होना ।
१३५. धता बताना=टाल देना, छोड़ देना ।
१३६. नमक मिर्च लगाना=बढ़ा कर कहना ।
१३७. नाम करना=प्रसिद्ध होना ।
१३८. नाम धरना=दोष लगाना ।
१३९. नानी मर जाना=प्राण सूख जाना ।
१४०. नानी याद आना=होश ठिकाने आना।
१४१. निन्नानवे के फेर में पड़ना=माया जाल में फँसना ।
१४२. नुक्ता चीनी करना=दोष निकालना ।
१४३. नौ दो ग्यारह होना=तुरन्त भाग जाना ।
१४४. पते की कहना=ठीक ठीक कहना ।
१४५. पट्टी पढ़ाना=बुरी सलाह देना ।
१४६. पानी पड़ना=अत्यधिक लज्जित होना ।
१४७. पानी का बुलबुला=क्षण-भंगुर ।
१४८. पानी भरना=अधीन होना, निकृष्ट होना ।
१४९. पिंड छुड़ाना=सम्बन्ध न रखना ।
१५०. पानी फिर जाना=नष्ट हो जाना ।
१५१. पाप काटना=झगड़ा दूर करना ।

१५२. पार पाना=जीतना ।
१५३. पानी-पानी हो जाना=लज्जित हो जाना ।
१५४. पापड़ बेलना=दुःखमय जीवन व्यतीत करना ।
१५५. पाला पड़ना=काम पड़ना, नष्ट होना ।
१५६. पौ बारह होना=खूब लाभ होना ।
१५७. फजीती करना=बदनामी करना ।
१५८. फूँक फूँक कर पैर रखना=सावधानी से कार्य करना ।
१५९. बट्टा लगाना=कलंकित करना ।
१६०. बट्टा लगना=कलंकित होना ।
१६१. बात की बात में झटपट बात बढ़ना=झगड़ा होना ।
१६२. बाँसों उछलना=खूब खुश होना ।
१६३. बीड़ा उठाना=जिम्मेदारी लेना ।
१६४. बात का बतंगड़ बनाना=छोटी बात को बड़ा करना ।
१६५. बाग-बाग होना=प्रसन्न होना ।
१६६. बालू की भीत=शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तु ।
१६७. बात का धनी=वचन का पक्का ।
१६८. बात बनाना=बुराई करना, झूठ बोलना ।
१६९. बाज न आना=आदत न छोड़ना ।
१७०. बोली मारना=ताना देना ।
१७१. बे-पेंदे का लोटा=स्थिर सिद्धांत का न होना ।
१७२. भाड़ झोंकना=व्यर्थ समय खोना ।
१७३. भोंह चढ़ाना=क्रुद्ध होना ।
१७४. भंडा फोड़ करना=भेद खोल देना ।
१७५. भूत सवार होना=जिद्द करना, हठ पकड़ना ।
१७६. मन मैला करना=उदास होना, असंतुष्ट होना
१७७. मन मुटाव होना=वैमनस्य होना ।
१७८. मन मारना=उदास होना ।
१७९. मन-माना=यथेष्ट ।

१८०. माल बनाना=धन कमाना ।

१८१. माला जपना=संतोष से बैठना, कार्य होना ।

१८२. रफू चक्कर होना=भागकर गायब हो जाना ।

१८३. रोड़ा अटकाना=बाधा डालना ।

१८४. रंग लाना=असर दिखाना ।

१८५. रंग दिखाना=कार्य करके दिखाना ।

१८६. लट्टू होना=मोहित होना ।

१८७. लाल पीले होना=नाराज होना ।

१८८. लुटिया डुबोना=काम बिगाड़ना ।

१८९. लोहे के चने=कठिन कार्य ।

१९०. लोहा मानना=हार स्वीकार करना ।

१९२. वाह वाह होना=प्रशंसा होना ।

१९३. सितारा चमकना=भाग्योदय होना ।

१९४. सिक्का जमाना=धाक जमाना ।

१९५. सुदामा के चावल=साधारण भेंट ।

१९६. शबरी के बेर=तुच्छ भेंट ।

१९७. श्री गणेश करना=कार्य आरम्भ करना ।

१९८. हवा लगना=संगति का प्रभाव पड़ना ।

१९९. हवा लगाना=उड़ाना ।

२००. हवा से बातें करना=बहुत तेज चलना ।

२०१. हक्का बक्का रह जाना= भौंचक्का होना ।

२०२. हजामत करना=ठगना, लूटना ।

२०३. हवाई किले बनाना=थोथे विचार होना ।

२०४. हवा हो जाना=भाग जाना ।

२०५. हवा निकलना=डर जाना ।

२०६. हवा खिसकाना=डराना ।

२०७. हवाईयाँ उड़ना=उदास होना ।

२०८. हवा के घोड़े पर सवार होना=बहुत शीघ्र कार्य करना ।

२०९. हवा बाँधना=मजाक उड़ाना।

२१०. होश आना=समझ आना।

२११. होश-हवास=सुध-बुध।

२१२. होश उड़जाना==घबरा जाना, आश्चर्य चकित हो जाना।

११३. होश न रहना=खबर न रहना।

२१४. होश फाख्ता होना=हक्का बक्का हो जाना।

२१५. होश सँभालना=सयाना होना, बड़ा होना।

२१६. होश हिरण होना=घबरा जाना, अक्ल खोना।

२१७. होश में आना=समझदार बनना, सयाना होना।

(२) लोकोक्तियाँ

मुहावरों की भाँति लोकोक्तियों का प्रयोग भी भाषा में लालित्य और चमत्कार लेने के लिए किया जाता है। 'लोकोक्ति' वह लोक-प्रसिद्ध उक्ति वा कहावत है जो समय समय पर किसी अभिप्राय को प्रकट करने के लिए लोगों द्वारा कही और सुनी जाती है। लोकोक्ति में मनुष्य का सैंकड़ों वर्षो का अनुभव भरा पड़ा है। यही कारण है कि लोकोक्तियां कभी तो उपदेश का काम देती हैं, और कभी नीति का अंग बनती है और कभी युक्ति एवं प्रमाण का काम करती हैं। मुहावरों के प्रयोग की अपेक्षा लोकोक्तियों का प्रयोग कुछ कठिन है अतः छात्रों के समझने के लिए कुछ लोकोक्तियों का प्रयोग नीचे किया जाता है :—

१. लोकोक्तिः—हाथ कंगन को आरसी क्या ?
   अवसरः—जब कोई प्रत्यक्ष बात को भी न माने और हठ करे।
   अर्थः—प्रत्यक्ष को प्रमाण भी की कोई आवश्यकता नहीं।
   प्रयोगः—यदि आप इस पुस्तक की उपयोगिता में सन्देह करते हैं तो पढ़ कर देख लीजिए 'हाथ कंगन को आरसी क्या ?

२. लोकोक्तिः—सांप मरे, न लाठी टूटे।
   अवसरः—जब किसी कार्य को सहलियत (सुविधा) के साथ करवाना हो।
   अर्थः—काम भी सिद्ध हो जाय और हानि भी न उठानी पड़े।
   प्रयोगः—यदि उनको अधिक डराओगे, धमकाओगे तो संभव है कि वह

तुम्हारे विरुद्ध हो जाय, अतः इस ढंग से काम को करो कि 'साँप मरे न लाठी टूटे'।

३. लोकोक्ति—देखें ऊँट किस करवट बैठता है।

अवसरः—जब कोई विवादास्पद विषय चल रहा हो या दो दलों में संघर्ष छिड़ा हुआ हो।

अर्थः—देखें क्या परिणाम निकलता है।

प्रयोगः—आजकल केरल में साम्यवादियों और कांग्रेसियों के बीच संघर्ष चल रहा है एक सत्तारूढ़ है, दूसरा सत्ता प्राप्त करना चाहता है। दोनों ही ऐड़ी से चोटी तक का जोर लगा रहे हैं, अब देखना यह है कि 'ऊँट किस करवट बैठता है'।

४. लोकोक्तिः—नाच न जाने आँगन टेढ़ा।

अवसरः—जब कोई अपनी अयोग्यता को छिपाने के लिए दूसरों पर मढ़े।

अर्थः—अपनी अयोग्यता स्वीकार न करना।

प्रयोगः—जब-जब भी मोहन से लिखित कार्य के लिए पूछा गया तब-तब ही उसने कोई-न-कोई बहाना बना लिया। आज जब उसे कक्षा में ही निबन्ध लिखकर दिखाने को कहा गया, तब पहले तो उसने यह कहा कि पैन मे स्याही कम है, फिर जब उसने, लिखना आरम्भ किया तो बोला कि निब ही ठीक नही चलता। तब अध्यापक ने उससे कहा 'ठीक है, नाच न जाने आंगन टेढ़ा'।

५. लोकोक्तिः—सब धान बाईस पंसेरी।

अवसरः—योग्यता एवं पात्रता का विचार न करके जब सब के साथ एक सा व्यवहार किया जाय।

अर्थः—अच्छे बुरे का कोई विचार नहीं।

प्रयोगः—यह बात यहाँ ही देखने को मिली कि एक मिडिल पास को भी सौ रुपया मासिक और एक ग्रेजुएट को भी सौ रुपया मासिक। दोनों की योग्यता में कोई अन्तर ही नही। क्या यहां सब धान बाईस पंसेरी बिकते है

६. लोकोक्तिः—का वर्षा जब कृषि सुखाने।

अवसरः—जब कोई समय निकल जाने पर सहायता दे।

अर्थः—उपयुक्त अवसर निकल जाने पर सहायता देना व्यर्थ।

प्रयोगः—महिने भर पहले जब मुझे अत्यन्त आवश्यकता थी, तब मैंने आपसे सहायता मांगी थी, उस समय तो आपने न दी। आज जब मेरी फैक्टरी बिक चुकी, तब आप सहायता कर रहे हो। अब यह सहायता मेरे किस काम की—'का वर्षा जब कृषि सुखाने'।

७. लोकोक्तिः—यह मुँह और मसूर की दाल।

अवसरः—जब कोई व्यक्ति अपनी हैसियत से अधिक की इच्छा करे।

अर्थः—अपनी हैसियत से अधिक की कामना करना।

प्रयोगः—आज विमला ने अपनी सास से कहा, 'अम्माजी, मुझे भी मोतियों के गहने गढ़वा दो'। सास ने कहा—'यह मुँह और मसूर की दाल'। मिया जी कमाते तो दो कोड़ी भी नहीं और वहू को मोतियों के गेहने भाते हैं।

८. लोकोक्तिः—घोड़ा घास से यारी करे तो खाय क्या।

अवसरः—जब कोई किसी को बिना कुछ परिश्रमिक दिये यों ही काम करवाना चाहे।

अर्थः—मेहनताने में लिहाज कैसा।

प्रयोगः—मोहन ने अपने वकील से कहा—'क्या आप इस जरा से काम भी पैसे लेंगे'? वकील ने कहा 'भाई, मेहनताना तो देना ही होगा 'घोड़ा घास से यारी करे तो खाय क्या?' यदि लोगों के ये जरा-जरा से काम यों ही करने लग जांय तो फिर हम पेट कैसे भरें।

९. लोकोक्तिः—अंधे के आगे रोवे, अपना दीदा खोवे।

अवसरः—जब कोई समझाने पर भी न समझे।

अर्थ—मूर्ख को समझाना निष्फल है।

प्रयोगः—राम को मैंने कितनी ही बार समझाया कि वह गंगू की संगति न रहे, किन्तु भाई! 'अन्धे के आगे रोवे, अपना दीदा खोवे'। गं फरार है और राम हत्या के अपराध में पकड़ लिया गया है।

. लोकोक्तिः—आये थे हरि-भजन को ओटन लगे कपास ।

अवसरः—जब कोई अपने लक्ष्य को छोड़कर भटक जाय ।

अर्थः—लक्ष्य-भ्रष्ट होना ।

प्रयोगः—मारणक की प्रैक्टिस यहाँ अच्छी चलती थी । होमियोपैथी का विशेष अध्ययन करने के लिए गत वर्ष वह कलकत्ता चला गया । अध्ययन के साथ वह एक फर्म मे पार्ट टाइम काम भी करने लगा । इस वर्ष उसने अध्ययन छोड़ कर वहाँ नौकरी ही करली—'आये थे हरि-भजन को, ओटन लगे कपास' ।

. लोकोक्तिः—ऊँट के मुँह में जीरा ।

अवसरः—जब किसी हृष्ट-पुष्ट बलवान मनुष्य को खाने के लिए पूरे परिमाण में न दिया जाय ।

अर्थः—बड़े आहार वाले को अल्प भोजन ।

प्रयोगः—इतनी बड़ी देह को एक रसगुला ऊँट के मुँह में जीरा' है ।

२. लोकोक्तिः—दान की बछिया के दाँत नहीं देखे जाते ।

अर्थः—मुफ्त मे प्राप्त होने वाली वस्तु के गुण-दोषों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता ।

प्रयोगः—'यार, सुसराल से रेड़ियो तो मिला लेकिन सस्ता और पुराना' । यह सुनकर रमेश के मित्र ने कहा—'दान की बछिया के दाँत नहीं देखे जाते' ।

३. लोकोक्तिः—पांड़े जी पछताओगे, वही चने की खाओगे ।

अवसरः—जब कोई काम किसी को विवश होकर करना ही पड़े ।

अर्थः—झक मारकर वही काम करना ।

प्रयोगः—देखो भाई, हम कहें वैसा करो, हठ न करो नही तो तुम्हें इस कहावत का अनुसरण करना पड़ेगा 'पांडेजी पछताओगे, वही चने की खाओगे' ।

४. लोकोक्तिः—कंगाली में आटा गीला ।

अवसरः—एक मुसीबत के होते हुए दूसरी मुसीबत और आजाय ।

अर्थः—कष्ट पर कष्ट आना ।

प्रयोगः—आजकल कपड़ा वैसे ही नहीं मिलता। रात को चोर घर से कपड़े और चुरा ले गये। सच है—'कंगाली में आटा गीला।

१५. लोकोक्तिः—थोथा चना बाजे घना।

अवसरः—जब कोई अयोग्य व्यक्ति आत्म-प्रशंसा करने लगे।

अर्थः—गुण-विहीन व्यक्ति का डींग मारना।

प्रयोगः—तुम कुछ करते-धरते तो हो नहीं, केवल लम्बी चौड़ी बातें बनाते हो। हमने खूब देख लिया 'थोड़ा चना बाजे घना'।

लोकोक्ति — अर्थ

१. अटका बनिया देय उधार=दबा हुआ मनुष्य सब कुछ करने को तैयार रहता है।
२. अन्धी पीसे कुत्ते खाँय=परिश्रम करे कोई, लाभ दूसरे उठावें।
३. अन्धों में काना राजा=मूर्खों में कम पढ़ा लिखा भी आदर पाता है।
४. अपनी-अपनी ढफली अपना-अपना राग=सब एक मत न होना।
५. अल खामोशी नीम रजा=चुप रहना स्वीकृति का लक्षण है।
६. अभी तो तुम्हारे दूध के दांत भी नहीं टूटे=अभी तो तुम निरे बच्चे हो।
७ अब पछताए होत क्या, चिड़िया चुग गई खेत=समय निकल जाने पर पश्चाताप प्रकट करना व्यर्थ है।
८. अपनी पगड़ी अपने हाथ=अपनी प्रतिष्ठा अपने हाथ होती है।
९. अपनी गली में कुत्ता भी शेर होता है=अपने घर मे निर्बल मनुष्य भी बल दिखाता है।
१०. अपनी करनी पार उतरनी=अपने कर्म फल अपने ही को भोगने पड़ते हैं।
११. अधजल गगरी छलकत जाय=ओछा मनुष्य इतरा कर चलता है।
१२. अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता=अकेला मनुष्य कठिन काम नहीं कर सकता।
१३. अन्धे के हाथ बटेर लगी=जब किसी को अनायास ही कोई अच्छी वस्तु प्राप्त हो जाय।
१४. अन्धा बांटे रेवड़ी फिर फिर अपनों ही को दे=अधिकार प्राप्त मनुष्य जब बार-बार अपने जानकारों की ही सहायता करे।

१५. आंख फेरी माल दोस्तों का=थोड़ी असावधानी के कारण किसी वस्तु का तुरन्त ही गायब हो जाना।
१६. आंख से दूर, दिल से दूर=दूर रहने से प्रेम कम हो जाता है।
१७. आंख के अन्धे नाम नयन-सुख=गुण के विरुद्ध नाम होना।
१८. आग लगने पर कुआ खोदना=विपत्ति के सिर पर आ जाने पर उससे बचने का उपाय सोचना।
१९. आगे कुआ पीछे खाई=दोनों ओर से विपत्ति से घिरने पर।
२०. आज किधर चांद निकला है=किसी का बहुत दिनों पश्चात् मिलना।
२१. आप काज महा काज=स्वयं का कार्य स्वयं से ही ठीक होता है।
२२. आप मरे जग परले होय=मृत्यु के पश्चात् की चिन्ता करना वृथा है।
२३. आम के आम गुठलियों के दाम=किसी वस्तु से दो प्रकार का लाभ होना।
२४. आम खाने से काम, पेड़ गिनने से क्या काम=काम की बात न कर निरर्थक बात करना।
२५. आई मौज फकीर की, दिया झोंपड़ा फूंक=विरक्त मनुष्य को किसी से ममता नहीं होती।
२६. इस हाथ देना, उस हाथ लेना=तत्काल फल मिलना।
२७. इन तिलों में तेल नहीं=यहां से कुछ भी मिलने की आशा नहीं।
२८. ऊखली में सिर दिया तो मूसलों का क्या डर=कठिन काम हाथ में पर परिश्रम से नहीं डरना चाहिए।
२९. उलटा चोर कोतवाल को डांटे=अपराध स्वीकार न करना और दूसरो क्रोध प्रकट करना।
३०. उलटे बांस बरेली को=विपरीत कार्य करना।
३१. ऊंची दुकान, फीका पकवान=केवल अधिक आडम्बर का होना; कुछ नहीं।
३२. ऊधो का लेना, न माधो का देना=हर प्रकार से निश्चिन्त स्वतन्त्र होना।
३३. एक और एक ग्यारह होते हैं=एकता में बहुत बड़ी शक्ति होती है।

३४. एक तन्दुरुस्ती हजार नियामत=सम्पत्ति से स्वास्थ्य कई गुना अच्छा होता है।

३५. एक तो चोरी, दूसरे सीना-जोरी=बुरा काम करके आंखें दिखाना।

३६. एक पन्थ दो काज=एक बार के परिश्रम से दो प्रकार का फल मिलना।

३७. एक म्यान में दो तलवार नहीं समा सकती=एक स्थान पर दो समान मनुष्यों का टिकाव सम्भव नही।

३८. एक हाथ से ताली नही बजती=एक मनुष्य के झगड़ा करने से झगड़ा नही होता।

३९. एक ही लकड़ी से सब को हांकना=अच्छे बुरे सब के साथ एक सा व्यवहार करना।

४०. ओछे के मुंह लगना अपनी इज्जत खोना=दुष्ट मनुष्य से कभी विवाद नहीं करना चाहिए।

४१. ओस के चाटे प्यास नहीं बुझती=थोड़ी वस्तु से तृप्ति नहीं होती।

४२. कंगाली में आटा गीला=आपत्ति पर आपत्ति आना।

४३. कफन सिर पर बांधे फिरना=मरने के लिए सदैव तैयार रहना।

४४. कभी नाव गाड़ी पर, कभी गाड़ी नाव पर=समय पर एक को दूसरे की मदद की जरूरत होना।

४५. करमहीन खेती करे, बैल मरे या सूखा पड़े=भाग्यहीन मनुष्य का किसी भी काम में सफल नहीं होना।

४६. करेगा सो भरेगा=अपराध करने वाला उसका दण्ड भी भोगेगा।

४७. काटो तो खून नहीं=डर के मारे सन्न हो जाना।

४८. काठ की हांठी बार-बार नहीं चढ़ती=कपट का व्यापार एक ही बार चलता है।

४९. काबुल में क्या गधे नहीं होते=मूर्ख मनुष्य सब जगह होते हैं।

५०. काला अक्षर भैंस बराबर=अनपढ़ मनुष्य, महा मूर्ख।

५१. का वर्षा जब कृषि सुखाने=अवसर निकल जाने पर सहायता व्यर्थ।

५२. कोठी वाला रोये, छप्पर वाला सोये=धनिकों से निर्धन निश्चिन्त रहते हैं।

५३. कोयलों की दलाली में काले हाथ=बुरों की संगति से कलंक लगना।

५४. क्या पिद्दी और क्या पिद्दी का शोरबा=छोटी चीज से बड़ा कार्य नहीं हो सकता।
५५. खग जाने खग ही की भाषा=साथ रहने वाले ही असलियत जान सकते हैं।
५६. खरी मजूरी चोखा काम=नकद और पूरी मजदूरी देने से काम अच्छा होता है।
५७. खुदा गंजे को नाखून न दे=अत्याचारी को कोई अधिकार नहीं मिलना चाहिए।
५८. खूंटे के बल बछड़ा कूदता है=दूसरे की शक्ति के सहारे काम करना।
५९. खेती खसम सेती=कोई भी धन्धा अपने मालिक की देख-रेख में ठीक चलता है।
६०. खोदा पहाड़, निकली चुहिया=अधिक परिश्रम से साधारण लाभ होना।
६१. गंगा गये गंगा दास, जमुना गये जमुना दास=मुँह देखी बात कहना।
६२. गवाह चुस्त, मुद्दई सुस्त=स्वयं तो कार्य के लिए कोई प्रयत्न नहीं करे और दूसरे उसके लिए व्याकुलता तथा उत्सुकता दिखाएँ।
६३. गागर में सागर भरना=बहुत बहुत बड़े भाव या विचार को थोड़े से शब्दों में प्रकट करना।
६४. गुड़ खाय गुलगुलों से परहेज=दिखावटी परहेज।
६५. गुड़ दिये मरे तो जहर क्यों दे=समझाने से ही मान जाय तो दण्ड क्यों दे।
६६. गुड़ न दे, गुड़ की बात तो करे=किसी को कुछ दे न, परन्तु बातें तो मीठी मीठी करे।
६७. गोद में छोरा शहर में ढिंढोरा=वस्तु पास में होना और उसे इधर उधर खोजना।
६८. घर की मुर्गी दाल बराबर=घर की वस्तु की अधिक प्रतिष्ठा नहीं होती।
६९. घर का भेदी लंका ढावे=घर में फूट हो जाने से अधिक हानि होती है।
७०. घर-घर मटियाले चूल्हे हैं=सब की एक ही दशा है।
७१. घोड़ा घास से यारी करे तो खाय क्या=मेहनताने में लिहाज कैसा।
७२. घोड़ों को घर कितनी दूर=काम करने वाले समय नहीं पूछते।
७३. चन्दन की चुटकी भली, गाड़ी भरा न काठ=अच्छी चीज तो थोड़ी भी अच्छी और निकम्मी बहुत भी खराब।

७४. चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय=अत्यन्त कंजूसी करना।
७५. चलती का नाम गाड़ी=अच्छे समय में सब कोई पूछते हैं।
७६. चिकने घड़े पर पानी नही ठहरता=निर्लज पर किसी बात का प्रभाव नही पड़ता।
७७. चिराग तले अन्धेरा=दूसरों को उपदेश देना और स्वयं वैसा न करना।
७८. चुपड़ी और दो दो=दुतरफा लाभ होना।
७९. चोर की दाढ़ी में तिनका=दोषी स्वयं डर जाता है।
८०. चोर के पैर नही होते=अपराधी मनुष्य परीक्षा की कसौटी पर नहीं ठहरता।
८१. चोरी का माल मोरी मे=बुरे कामों की कमाई बुरे कामों में ही खर्च होती है।
८२. छछून्दर के सिर में चमेली का तेल=अयोग्य को उत्तम वस्तु मिलना।
८३. छटांक चून, चौबारे रसोई=अधिक दिखावट-बनावट करना।
८४. छोटे मुँह बड़ी बात=योग्यता से बढ़ कर बात करना।
८५. जमात करामात=संगठन मे अपूर्व बल है।
८६. जल में रह कर मगर से बैर=जिसके आश्रय में रहे, उसी से शत्रुता करना।
८७. जाके पांव न फटी बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई=जिसने कभी दुःख नही उठाया, वह दूसरे के दुःख को क्या जाने।
८८. जान बची लाखों पाये=अपनी जान को अधिक प्यारी समझना।
८९. जान है तो जहान, और जर है तो दुनिया=जान और माल ही सब कुछ है।
९०. जिन खोजा तिन पाइयां, गहरे पानी पैठ=बिना परिश्रम कुछ नही मिलता।
९१. जिसकी लाठी, उसकी भैंस=बलवान ही विजयी होता है।
९२. जैसा देश वैसा भेष=समयानुसार कार्य करना।
९३ जो गरजते हैं वो बरसते नहीं=डींग मारने वालों से काम नही होता।
९४. जो बोले सो कुण्डी खोले=जो उपाय बताये वो ही करे।
९५. झूँठ के पांव नही होते=झूँठा आदमी विवाद में नही ठहर सकता।
९६. झोंपड़ी में रहे महलों के ख्वाब देखे=न मिल सकने वाली वस्तु की आकांक्षा करना।

९७. टके के वास्ते मस्जिद ढाना=लालच में वशीभूत होकर अनुचित काम करना।

९८. ढाक के वही तीन पात=किसी मनुष्य का सदैव एक सी ही निर्धन हालत में रहना।

९९. ढोल में पोल=बड़ी जगह भी अन्धेर।

१००. तबेले की बला बन्दर के सिर=करे कोई, नामी पकड़ा जाय।

१०१. तिनके की ओट पहाड़=थोड़े सहारे से बड़ा काम सिद्ध होना।

१०२. तीर नहीं तो तुक्का ही सही=काम हो जाय तो ठीक, नहीं तो खैर। किसी को काम करने के लिए प्रोत्साहन देना।

१०३. तू डाल-डाल मैं पात-पात=एक चालाक का दूसरे से अधिक चालाक होना।

१०४. तेल तिलों से निकलता है=उदार आदमी ही कुछ दे सकता है।

१०५. थोथा चना बाजे घना=आडम्बर-प्रिय मनुष्य में तत्व नही होता।

१०६. दबी बिल्ली चूहों से कान कटाती है=शक्तिशाली मनुष्य भी अपराध करने पर कमजोरों की बातें सुनता है।

१०७. दमड़ी की हांडी गई, कुत्ते की जाति पहचानी गई=जब कोई थोड़ी सी चीज के लिए बेईमानी करे।

१०८. दादा ले और पोता बरते=बहुत मजबूत चीज के लिए।

१०९. दीवार के भी कान होते है=गुप्त सलाह एकान्त में करनी चाहिए।

११०. दुधारु गाय की लात भली=लाभ पहुँचाने वाले की घुड़कियां भी सहन करनी पड़ती हैं।

१११. दुविधा में दोऊ गये, माया मिली न राम=अनिश्चित रहने के मनुष्य कुछ नहीं कर सकता।

११२. दुनिया ठगिये मक्कर से, रोटी खाइये शक्कर से=जो छल से संसार को ठगते हैं, आराम से अपनी जिन्दगी बिताते हैं।

११३. दूध का जला छाछ को फूँक-फूँक कर पीता है=एक बार का धोखा खाया हुआ मनुष्य दूसरी बार सावधानी से काम करता है।

११४. दूर के ढोल सुहावने=दूर की वस्तुएँ जब तक उनका अनुभव न हो जाता, बहुत अच्छी लगती हैं।

११५. देखें ऊँट किस करवट बैठता है=देखें परिणाम क्या निकलता है।

११६. दोनों हाथ लड्डू हैं=दोनों तरफ से लाभ की संभावना होना।

११७. धोबी का कुत्ता घर का न घाट का=जिनका कोई स्थायी आश्रय न हो।

११८. धोबिन पर बस न चले, गधैया के कान ऐंठे=बलवान से वश न चलने पर निर्बल को सताना।

११९. नंगी क्या नहायेगी और क्या नीचोड़ेगी=निर्धन मनुष्य दूसरों की क्या सहायता करेगा।

१२०. नक्कारखाने में तूती की आवाज=बड़े लोगों द्वारा छोटों की पुकार पर ध्यान न देना।

१२१. न नो मन तेल होगा, न राधा नाचेगी=ऐसी शर्तें रखना जो संभव न न हो सके।

१२२. नया नौ दिन पुराना सौ दिन=पुरानी वस्तु ही अधिक काम की होती है।

१२३. न रहे बांस, न बजे बांसुरी=दुःख के मूल कारण को ही नष्ट कर देना चाहिए।

१२४. नटनी जब बांस पर चढ़ी तो घूँघट क्या=जब काम करना ही है तो शरम कैसी।

१२५. नाम बड़े दर्शन थोड़े=झूठी प्रसिद्धि।

१२६. नेकी और बूझ बूझ=भलाई करने में क्या पूछना।

१२७. नौ दिन चले अढ़ाई कोस=बहुत सुस्ती से काम करना।

१२८. नौ नगद न तेरह उधार=उधार से अधिक लाभ होने की आशा हो तो वह भी बुरी है।

१२९. पढ़े तो हैं, पर गुने नहीं=अनुभव-हीन।

१३०. पढ़े फारसी बेचे तेल, यह देखो कुदरत का खेल=भाग्य-वश शिक्षित व्यक्ति का मारा मारा फिरना।

१३१. पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं=परतंत्रता बड़ी बुरी वस्तु है।

१३२. पहले लिख और पीछे दे, कमती हो तो मुझसे ले=बराबर लिखते रहने से हिसाब में गड़बड़ी नहीं पड़ती।

१३२. पहले अपनी ही दाढ़ी की आग बुझाई जाती है=पहले अपने काम की ओर ध्यान देना चाहिए।

१३४. पांचों ऊँगलो घी में हैं=हर तरह से लाभ, सब प्रकार से खुशी।

१३६. पांचों ऊँगलियां बराबर नहीं होती=सब समान नहीं होते।

१३६. पांचों सवारों में नाम लिखाना=दूसरों के समान अपने को भी बड़ा समझना।

१३७. पिये रुधिर पय ना पिये, लगी पयोधर जौंक=नीच मनुष्य दूसरों के अवगुण ही ग्रहण करते हैं।

१३८. प्यासा कुए के पास जाता है, कुआ प्यासे के पास नहीं आता=जिसे गरज होती है, वही दूसरों के पास जाता है।

१३९. फरा सो झरा और बरा सो बुताना=सदा किसी की एक सी दशा नहीं रहती।

१४०. बड़े बोल का सर नीचा=घमंडी को नीचा देखना पड़ता है।

१४१. बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद=वस्तु-विशेष का मूल्य न पहचानना।

१४२. बद अच्छा बदनाम बुरा=झूठा कलंक लगाने की अपेक्षा बुरा प्रमाणित होना अधिक अच्छा है।

१४३. बाप न मारी मैंढकी, बेटा तीरन्दाज=जब कोई अधिक डींग हांके।

१४४. बार-बार चोर की, एक बार शाह की=कभी-न-कभी चालाकी खुलती ही है।

१४५. बारह बरस दिल्ली में रहे, भाड़ ही झोंका=अच्छे स्थान पर रह कर भी कुछ उन्नति न करना।

१४६. बावन तोले पाव रत्ती=जब कोई वस्तु बिल्कुल ठीक हो।

१४७. बिच्छू का काटा रोवे, सांप का काटा सोवे=मीठी मार बहुत बुरी है।

१४८. बिन मांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख=जो वस्तु मिलनहार होती है, स्वयं मिल जाती है।

१४९. बिना रोये तो मां भी दूध नहीं पिलाती=बिना प्रयत्न कुछ भी प्राप्त नहीं होता।

१५०. बैठे से बेगार भली=बैठे रहने से तो मुफ्त का भी अच्छा (क्योंकि आदत तो खराब नहीं होती)

१५१. बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं=कोई किसी को नहीं सता सकता (उत्तम शासन के लिए)।

१५२ बिल्ली के भाग्य से छींका टूटना=आशा से अधिक की अनायास प्राप्ति।

१५३. भई गति सांप-छछूंदर केरी=ऐसी अवस्था जिसमें किसी काम के करने से भी हानि और न करने से भी हानि।

१५४. भैंस के आगे बीन बजावे, भैंस खड़ी पगुराय=मूर्खों के आगे ज्ञान की बातें करना वा कहना व्यर्थ।

१५५. भेड़ की लात घुटनों तक=जब अधिक हानि होने की संभावना न हो।

१५६. भागते भूत की लंगोटी ही सही=जहां से कुछ भी मिलने की आशा न हो, वहां से जो कुछ मिल जाय, वही अच्छा है।

१५७. मन के लड्डुओं से भूख नहीं मिटती=कोरी कल्पना से काम नहीं चलता।

१५८. मन चंगा तो कठोती में गंगा=जिसका हृदय पवित्र है, उसके लिए घर में ही गंगा है।

१५९. मन भावे, मूंड हिलावे=अच्छा लगने पर भी दिखावटी इनकार करे।

१६०. मरता क्या न करता=जो जान पर खेलने को तैयार हो, वह सब कुछ कर सकता है।

१६१. मान न मान मैं तेरा मेहमान=जबरदस्ती गले पड़ना।

१६२. माया तेरे तीन नाम, परसू, परसा, परसराम=धनी की सब जगह पूछ होती है, गरीब को कोई नहीं पूछता।

१६३. मालेमुफ्त, दिले बेरहम=दूसरे का माल उड़ाने में किसको दर्द।

१६४. मानो तो देव नहीं पत्थर के लेव=विश्वास बड़ी चीज है।

१६५. मियां की जूती, मियां के सिर=जिसकी चीज हो, उसीके विरुद्ध उसका प्रयोग करना।

१६६. मुंह मांगी तो मौत भी नहीं मिलती=जैसी अभिलाषा हो, वैसा प्राप्त न होना।

१६७. मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त=जिसका काम हो, वही दिलचस्पी न ले।

१६८. मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक=काम करने की योग्यता और शक्ति का सीमित होना।

१६९. मुख में राम, बगल में छुरी=कपट का व्यवहार।
१७०. मैंढकी को भी जुकाम=छोटे और नीच आदमी का नखरे करना।
१७१. मेरी ही बिल्ली और मुझ से ही म्याऊँ=अपनी भलाई करने वाले को ही हानि पहुँचाने का प्रयत्न करने पर।
१७२. यह मुँह और मसूर की दाल=हैसियत से अधिक की इच्छा करना।
१७३. यथा नाम तथा गुण=नाम के अनुसार ही गुण भी हों।
१७४. यथा राजा तथा प्रजा=जैसे स्वामी, वैसे ही सेवक।
१७५. रस्सी जलगई, पर ऐंठ न गई=अन्त तक अकड़े रहना, अन्त तक आन पर डटे रहना। बरबाद होने पर भी घमंड न जाना।
१७६. रानी रूठेगी अपना सुहाग लेगी=कोई नाराज होकर जो कुछ देगा, न देगा।
१७७. रात भर पीसा पारी में सकेला=अधिक परिश्रम का बहुत थोड़ा फल
१७८. रोज कुआँ खोदना, रोज पानी पानी=नित्य कमाना और पेट भरना।
१७९. राम-राम जपना, पराया माल अपना=छल-कपट करना।
१८०. रहें झोंपड़ी में, स्वप्न देखें महलों का=ऐसी कल्पनाएँ करना जो मूर्त धारण न कर सकें।
१८१. रोग का घर खांसी, रार का घर हांसी=खांसी रोग की जड़ है और हँसी-मजाक झगड़े की जड़ है।
१८२. लातों के देव बातों से नहीं मानते=नीच प्रकृति के मनुष्य बिना मार के सीधे रास्ते पर नहीं आते हैं।
१८३. लाल गुदड़ी में नहीं छिपते=अच्छे मनुष्य शोचनीय स्थिति में भी अपने गुण नहीं त्यागते।
१८४. लेना एक न देना दो=हिसाब बिल्कुल साफ।
१८५. विष दे विश्वास न दे=विश्वास-घात करने से विष पिलाना अच्छा है।
१८६. विषस्य विषमौषधम्=जहर जहर से ही उतरता है।
१८७. शक्कर खोर को शक्कर और करम फोड़ को टक्कर हर जगह मिलती है=जो जिस योग्य होता है, ईश्वर उसे वैसा ही देता है।
१८८. शुभस्य शीघ्रम्=जो कार्य शुभ हो, उसे शीघ्र ही कर डालना चाहिए।
१८९. समरथ को नहीं दोष गुसाईं=समर्थ के दोष को दोष नहीं समझा जाता।

१६०. सावन सूखा न भादों हरा=सदा एक सी स्थिति में रहना।
१६१. सीधी उँगली से घी नही निकलता=सीधेपन से काम नही चलता।
१६२. सांप के निकल जाने पर लकीर पीटने से क्या लाभ=मौका चूक जाने पर पछताने से क्या फायदा।
१६३. सहज पके सो मीठा होय=जो काम आसानी से हो जाय, वही अच्छा है।
१६४. साच को आंच कहां=सच्चा कभी नहीं डरता।
१६५. सिर मुँडाते ही ओले पड़ना=कार्य के आरम्भ में ही विघ्न पड़ना।
१६६. मोने में सुगन्ध=अच्छी चीज में एक खूबी और आजाना।
१६७. हथेली पर सरसों नही जमती=जल्दी में कोई काम नही होता।
१६८. हाथी के दांत खाने के और, दिखाने के और=कहे कुछ और करे कुछ।
१६९. होनहार बिरवान के होत चीकने पात=होनहार व्यक्ति के लक्षण बचपन से ही प्रकट होने लगजाते हैं।
२००. हीरे की परख जौहरी ही कर सकता है=गुण की परिक्षा गुणी ही कर सकता है।
२०१. हल्दी लगै न फिटकरी रंग चोखा आजाय=मुफ्त में या आसानी से काम बन जाय।

पांचवाँ अध्याय

रचना-बोध

सुन्दर और सुव्यवस्थित रचना के लिए शब्द-ज्ञान, शब्दों का उचित प्रयोग, व्याकरण ज्ञान, लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग, विराम चिह्नों का प्रयोग आदि कई बातें आवश्यक हैं, जो पिछले अध्यायों में समझा दी गई हैं। सुन्दर वाक्य-रचना के लिए यह आवश्यक है कि वाक्या-विन्यास शिथिल और जटिल न हो और शब्दों का क्रम भी ठीक हो। वाक्य-रचना त्रुटि-विहीन हो और उसमें ठीक-ठीक अर्थ प्रकट करने की क्षमता हो। एक वाक्य के शब्दों में परस्पर आकांक्षा, योग्यता एवं क्रम का सम्बन्ध बना रहना चाहिए। वाक्यों में एक शब्द को सुनकर उससे आगे आने वाले शब्द के सुनने की इच्छा 'आकांक्षा' कहलाती है, जो अर्थ समझने एवं शब्दों का परस्पर सम्बन्ध जोड़ने में सहायक होता है। 'योग्यता से तात्पर्य अर्थ-संगति का है। समूचे वाक्य का ऐसा अर्थ निकले जो संगत हो। जैसे—'वह रोटी पीता है' वाक्य में व्याकरण की दृष्टि से कोई दोष नहीं है, परन्तु यहां अर्थ-संगति नहीं; क्योंकि रोटी खाने की वस्तु है न कि पीने की। अतः इस वाक्य में, 'योग्यता' का अभाव है। 'वह रोटी खाता है' वाक्य में ही शब्दों में परस्पर अर्थ प्रकट करने की योग्यता है, क्योंकि रोटी और खाने का परस्पर सम्बन्ध है, न कि रोटी और पीने का। इसी प्रकार यदि किसी वाक्य में यथास्थान शब्द-योजना न हो तो अर्थ में बड़ी गड़-बड़ी हो जाती है और कभी-कभी तो अर्थ का अनर्थ भी हो जाता है। उदारहण के लिए 'मोटर पर सड़क चलती है' वाक्य में शब्द यथास्थान नहीं हैं, अतः अर्थ में गड़बड़ी उपस्थित होती है। यथास्थान शब्द रख कर यदि इस वाक्य को लिखा जाय तो वाक्य बनेगा—सड़क पर मोटर चलती है' जो ठीक-ठीक अर्थ प्रकट करता है।

अब छात्रों के लिए रचना-सम्बन्धी कुछ ऐसी बातें लिखी जाती हैं जिनकी जानकारी होने पर वे बहुत से दोषों से बचे रहेंगे और उत्तम वाक्य-

रचना कर सकेंगे। वाक्य में कितने ही प्रकार की अशुक्तियां हो सकती है—वर्तनी की, शुद्ध शब्द के स्थान पर अशुद्ध शब्द की, लिंग सम्बन्धी, वाक्य मे शब्दों के परस्पर क्रम सम्बन्धी वा अनव्य सम्बन्धी, क्रिया काल सम्बन्धी आदि-आदि। इसके पहले कि छात्र अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध करना सीखें, उन्हें नीचे लिखे स्तम्भों में वर्णित बातो का सम्यक् अध्ययन कर लेना चाहिए। इनके अच्छी तरह हृदयंगम कर लेने पर ज्ञान-वृद्धि के साथ-साथ वे उत्तम और शुद्ध रचना भी कर सकेंगे।

(१) लिंग परिवर्तन

यहां केवल उन शब्दों का लिंग-ज्ञान कराया गया है जो विद्यार्थियों के दृष्टि कोण से कठिन है और जिन के लिंग बदलने मे वे गलती कर सकते हैं।

पुलिंग	स्त्रीलिंग	पुल्लिग	स्त्रीलिंग
विद्वान्	विदुषी	पति	पत्नी
श्रीमान	श्रीमती	राजा	रानी
पंडित	पंडती	ज्येष्ठ	ज्येष्ठा
सभापति	सभानेत्री	सम्राट	सम्राज्ञी
कवि	कवयित्री	गायक	गायिका
युवा	युवती	वर	वधू
पुत्रवान	पुत्रवती	विधुर	विधवा
आयुष्मान्	आयुष्मती	रँडुआ	रांड
महान्	महती	अध्यापक	अध्यापिका
वुद्धिमान	वुद्धिमती	पाठक	पाठिका
विद्यावान	विद्यावती	अधिकारी	अधिकारिणी
गृही	गृहिणी	बाबू	बबुआइन
पापी	पापिनी	बिलाव	बिल्ली
हस्ती	हस्तिनी	जाट	जाटनी
कर्त्ता	कर्त्री	मोर	मोरनी
कहार	कहारिन	हा	चूहिया

(२) भाव वाचक संज्ञाएँ

कभी-कभी छात्र एक ही शब्द में दो भाव-वाचक प्रत्यय लगा देते है, जैसे—सौन्दर्यता, महत्वता आदि में किन्तु दो प्रत्यय लगाना गलत है; और कभी-कभी वे भाव-वाचक संज्ञा का रूप ही गलत बना लेते है। इसलिए छात्रों की जानकारी के लिए मुख्य-मुख्य भाव-वाचक संज्ञाएँ जिनके लिखने वा प्रयोग करने में छात्र अशुद्धि करते हैं, नीचे लिख दी जाती है :—

शब्द	भाववाचक संज्ञा	शब्द	भाववाचक संज्ञा
मनुष्य	मनुष्यत्व, मनुष्यता	प्रभु	प्रभुता, प्रभुत्व
स्वस्थ	स्वस्थता, स्वास्थ्य	मधुर	मधुरता, माधुर्य
सुन्दर	सुन्दरता, सौन्दर्य	कर्तृ	कर्तृत्व
लघु	लघुत्व, लघुता	मीठा	मिठास
	लघिमा, लाघव	बूढ़ा	बुढ़ापा
गुरु	गुरुत्व, गुरुता	चौड़ा	चौड़ाई
		लिखना	लिखावट
	गरिमा, गौरव	अहम्	अहंकार
प्रचुर	प्रचुरता, प्राचुर्य	चढ़ना	चढ़ाई, चढाव
मृदु	मृदुता, मार्दव	कठिन	कठिनता, कठिन्य कठिनाई
महत्	महत्व, महत्ता, महिमा		
पंडित	पंडितता, पांडित्य	सुजन	सुजनता, सौजन्य
लवण	लवणता, लावण्य	मलिन	मलिनता, मालिन्य
धीर	धीरता, धैर्य	उदार	औदार्य
सदृश	सदृशता, सादृश्य	कुलीन	कुलीनता, कौलीन्य

(३) अनेक शब्दों के बदले एक शब्द

अनेक शब्दों के बदले एक शब्द का प्रयोग वाक्य-विस्तार एवं वाक्य-संक्षेपण में छात्रों को बड़ी सहायता देगा, अतः जानकारी के लिए कुछ शब्द यहाँ लिख दिये जाते हैं :—

१. वह जिसको अच्छी तरह शिक्षा मिली है—सुशिक्षित
२. वह जिसका कोई संरक्षक नहीं है—अनाथ
३. वह जो दूसरे के किये हुए उपकार को नहीं मानता—कृतघ्न
४. वह जो साहित्यिक गुण-दोष की विवेचना करता है—समालोचक
५. वह पुरुष जिसकी पत्नी मरगई हो—विधुर
६. वह स्त्री जिसका पति जीवित है—सधवा
७. जो यह न समझ सके कि मुझे क्या करना है—किंकर्त्तव्य-विमूढ़
८. वह जो दूर (आगे) तक की सोचे—दूरदर्शी
९. जब तक जीवन रहेगा तब तक—आजीवन
१०. वह स्त्री जिसका कोई पति न हो (विवाह होने के पश्चात्)—विधवा
११. वह स्त्री जिसका कोई पति न हो (विवाह होने से पूर्व)—क्वारी, अविवाहिता
१२. वह पुरुष जिसमें बल न हो—निर्बल
१३. वह मनुष्य जो सबका भला चाहता है—परोपकारी
१४. जिस मकान के बाहर दरवाजे हों—बारहदरी
१५. जिसके समान कोई दूसरा न हो—अद्वितीय
१६. कोई (बात या घटना) जो पहले कभी न हुई हो—अपूर्व
१७. वह जो दूसरे के किये हुए उपकार को माने—कृतज्ञ, आभारी
१८. वह जिसका आचरण श्रेष्ठ हो—सदाचारी
१९. वह जो अपना ही मतलब साधता हो—स्वार्थी
२०. वह जिसका आचारण बुरा हो—दुराचारी
२१. वह जो सदैव पैसे के पीछे फिरे—लोभी
२२. वह जो कभी मांस न खाने वाला हो—शाकाहारी
२३. वह जो किसी से न डरे—निडर
२४. वह जो सब कुछ जानता हो—सर्वज्ञ

२५. वह जो ईश्वर में विश्वास रखता हो—आस्तिक
२६. वह जो ईश्वर में विश्वास वा आस्था न रखता हो—नास्तिक
२७. वह जो धन का दुरुपयोग करता हो—अपव्ययी
२८. वह पुत्र जो अपना खुद का हो—औरस
२९. वह पुत्र जो गोद लिया हुआ हो—दत्तक
३०. वह जो भूख से कम भोजन करने वाला हो—मिताहारी
३१. वह जिसने इन्द्रियों को जीत लिया हो—जितेन्द्रिय
३२. वह जो जानने की इच्छा रखता हो—जिज्ञासु
३३. वह जो मीठी बोली बोलता हो—मिठबोला
३४. वह जिसके बारह सींग हों—बारहसींगा
३५. वह जिसमें लवण (नमक) न पड़ा हुआ हो—अलोना
३६. वह स्थान जहाँ कोई जन (व्यक्ति) न रहता हो—निर्जन
३७. वह जिसकी नाक कटी हुई हो—नकटा
३८. वह जिसका कान कटा हुआ हो—कनकटा
३९. वह स्त्री जिसके कोई सन्तान न होती हो—वन्ध्या, बांझड़ी
४०. वह भूमि जिसमें कुछ भी न उपजता हो—बंजर, ऊसर
४१. वह स्त्री जिसके कोई पुत्र न हो—निपूती, अपुत्रा
४२. वह जिसके तीन नेत्र हैं—त्रिलोचन
४३. वह जिसके नयन मृग के नयनों समान हों—मृगनयनी
४४. वह स्थान जहाँ पाँच वट-वृक्षों का समूह हो—पञ्चवटी
४५. वह व्यक्ति जिसका चरित्र अच्छा हो—सच्चरित्र
४६. वह अन्न जो न भक्षण करने योग्य हो—कदन्न
४७. वह व्यक्ति जो सदा घर में घुसा रहने वाला हो—घरघुस, घर-घुसड़ा
४८. वह व्यक्ति जो काम से जी चुराता हो—काम-चोर
४९. वह जो जन्म से अन्धा हो—जन्मान्ध
५०. जो प्राणी रात्रिको विचरण करते हैं—निशिचर, निशाचर
५१. वे जो स्वयं अपने आपको मारते है—आत्महत्या
५२. वह वस्तु जो कठिनाई से प्राप्त की जा सके—दुर्लभ, दुष्प्राप्य

५३. वह जिसका स्वास्थ्य अच्छा न हो—रोगी, अस्वस्थ
५४. जो पदार्थ नष्ट होने वाले हों—विनाशशील, नश्वर
५५. वह जो सदा देश की भलाई चाहता हो—देश-भक्त
५६. वह वस्तु जो कभी प्राप्त ही न हो सके—अलभ्य
५७. वह जिसका काम ही लड़ने का हो—लड़ाकू
५८. वह जो थोड़ी ही देर में मिट जाने वाला हो—क्षणभंगुर
५६. वह वस्तु जो निन्दा करने योग्य हो—निन्दनीय
६०. वह जिसका ठीक-ठीक वर्णन न किया जा सके—अनिर्वचनीय
६१. वह जो अपने ऊपर पूर्ण नियंत्रण रखनेवाला हो—आत्म-सयंमी
६२. वह जिसकी कोई नाप-तौल न हो सके—अपरिमेय
६३. वह जो लेने वा स्वीकार करने योग्य न हो—अपरिग्राह्य
६४. जो अनिवार्य हो, जिसका कोई परिहार न हो सके—अपरिहार्य.
६५. वह व्यक्ति जो पहले किसी पद पर रह चुका हो—भूतपूर्व

(४) वाक्य-विस्तार एवं वाक्य संक्षेपण

लिखने और कहने के दो ढंग हैं—(१) किसी भी बात को बढ़ा कर लिखना वा बोलना और (२) जो कुछ कहना है उसे संक्षेप में लिखना वा बोलना। कुछ लोग एक साधारण वाक्य को भी विस्तार दिये बिना नहीं रहते और कुछ संक्षिप्तता के गुण को महत्व देते हैं, उनका कहना है—Brevity is the soul of wit.

(क) वाक्य-विस्तार

वक्ता या लेखक जब किसी वाक्य को बढ़ाकर बोलता वा लिखता है जिससे उसका भाव स्पष्टतया समझ में आजाय, तब 'वाक्य-विस्तार' कहलाता है जैसे—

वाक्य	विस्तारित वाक्य
१. पृथ्वी पर कोई भी अमर नहीं।	१. जिन्होंने पृथ्वी पर जन्म लिया है, वे सब मर्त्य हैं।
२. नीरोग होकर वह सुखी होगया।	२. जब उसका रोग नष्ट हो गया तब वह सुख का अनुभव करने लगा।

३. सच्चरित्र सर्वत्र सम्मान पाता है।	३. जिस व्यक्ति का चरित्र अच्छा होता है, वह जहाँ कहीं भी जाता है, वहाँ ही सम्मानित होता है।
४. दीनों को मत सताओ।	४. जो लोग दीन-हीन है, हमें उन्हें नही सताना चाहिए।
५. यह एक औषधालय है।	५. यह एक ऐसा स्थान है जहाँ रोगियों को औषध वितरण की जाती है।
६. उद्योगी सदा व्यस्त रहते है।	६. जो उद्योग करने वाले होते हैं, वे सदा किसी न किसी काम में लगे रहते हैं।
७. इस संस्था में केवल अविवाहित ही काम कर सकेंगे।	७. इस संस्था में केवल वे व्यक्ति, जिन्होंने अभी तक विवाह नहीं किया है और जो भविष्य में भी विवाह न करने का विचार रखते हों, सेवा-कार्य कर सकेंगे।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों का विस्तार करो, परन्तु यह ध्यान रखो कि वाक्य के आशय में अस्पष्टता न आये—

(१) परोपकारी सदा दूसरों का भला चाहते हैं। (२) दुराचारी सब जगह ठोकरें खाते हैं। (३) विना परिश्रम फेल हो जाओगे। (४) निर्धन सदा दुखी रहते हैं। (५) कार्य-वश मुझे दिल्ली जाना पड़ा। (६) आपके दर्शन करके मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। (७) पापी लोग दुःख भोगते हैं। (८) यौवनावस्था मे हिताहित का ज्ञान नहीं रहता। (९) सूर्योदय से पूर्व कमल नहीं खिलते (१०) निरामिष-भोजी क्रोधी नहीं होते। (११) सफल होने वाले छात्रों को परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए अपनी पाठ्य पुस्तकों को मन लगाकर पढ़ना चाहिए। (१२) ईश्वर आपको चिरायु करे।

(ख) वाक्य संक्षेपण

जब किसी विस्तृत वाक्य के उद्देश्य वा विधेय में प्रयुक्त शब्द समूह को ो केवल एक शब्द में बदल देते है अथवा किसी वाक्यांश के स्थान पर एक ऐसा ाब्द जो उसका आशय स्पष्टतया प्रकट करता हो, रख देते हैं, और वाक्य छोटा बन जाता है। इसी को 'वाक्य-संक्षेपण' कहते हैं, जैसे—

विस्तृत वाक्य	सक्षिप्त वाक्य
१. जिसने मेरा उपकार किया है उसे मैं जब तक जीऊँगा, नहीं भूलूँगा।	१. मैं अपने उपकारी को आजन्म नहीं भूलूँगा।
२. जिस मनुष्य में बुद्धि है वह ऐसा काम कभी नहीं करेगा।	२. बुद्धिमान ऐसा काम कभी नहीं करेगा
३. जब मनुष्य का बुढ़ापा आता है तब वे भले बुरे के विवेक को खो देता है।	३. बुढ़ापे में मनुष्य विवेकशून्य हो जाता है।
४. यदि तुम स्कूल में उपस्थित न रहोगे तो तुम्हे दण्ड मिलेगा।	४. स्कूल में अनुपस्थित रहने पर तुम्हें दण्ड मिलेगा।
५. मृत्यु से कोई नहीं बच सकता।	५. मृत्यु अपरिहार्य है।
६. आपकी सफलता के लिए मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं।	६. ईश्वर आपको सफलता दे।
७. वह व्यक्ति जो अपने ऊपर पूर्ण नियंत्रण रखने वाला हो, मंत्र-सिद्ध कर सकता है।	७, आत्म-संयमी ही मन्त्र सिद्ध कर सकता है।

अभ्यास

(१) जो लोग परिश्रम नहीं करते वे भूखों मरते हैं। (२) वह उत्तीर्ण होना चाहता है, इसलिए परिश्रम कर रहा है। (३) जब तक हम न दौड़ेंगे, हमें गाड़ी नही मिलेगी। (४) यद्यपि वह शत्रु से हार चुका था तथापि वह लड़ता ही रहा। (५) मोहन ने जो एक खिलाड़ी लड़का है, लडके की

टाँग तोड़ दी। (६) वे मनुष्य जो ईश्वर में विश्वास नहीं करते, दुःखी रहते है। (७) जितनी वस्तुएँ पृथ्वी पर विद्यमान हैं वे सभी अस्थायी हैं। (८) इस स्थान में वालकों को पाठ पढ़ाया जाता है। (९) उस भूमि में भी जिसमें वहुत पैदा होती है, यदि पानी का अभाव हो तो अधिक नही उपजता। (१०) मैं उन व्यक्तियों के विषय मे आप से कुछ कहना चाहता हूँ, जो सदा देश की भलाई में ही लगे रहते हैं।

(५) रिक्त स्थानों की पूर्ति

किसी वाक्य मे एक वा अधिक शब्दों के स्थान रिक्त हो तो छात्रों को वाक्यों के अर्थ पर दृष्टि रख कर रिक्त स्थानों की पूर्ति करनी चाहिए। रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिए कोई विशेष नियम नही, केवल व्याकरण ज्ञान और अभ्यास की आवश्यकता है। जैसे—(१) सोहन····मोहन वाजार गये (सोहन और मोहन वाजार गये)। (२) जब तक वह मुझे पैसा न देगा,····मैं यहाँ से न उठूँगा (जब तक वह मुझे पैसा न देगा, तब तक मैं यहाँ से न उठूँगा)। (३) दीवार·· चित्र····लटकाये है? दीवार पर चित्र किसने लटकाये है? (४) कौन····है जिसको पेट की ज्वाला न····हो? (कौन ऐसा है जिसको पेट की ज्वाला न सताती हो)।

छात्रों को रिक्त स्थानों की पूर्ति करने का अच्छा अभ्यास हो जाय इसलिए नीचे संकेत सहित अभ्यास दिये जाते हैं :—

(क) निम्नलिखित वाक्यों के रिक्त स्थानों में कोष्टक में दिये गये अव्ययों को भरो :—

(१)····चाह, ····राह (जहाँ,तहाँ)। (२) हरि········उद्दण्ड है····वाचाल भी है (न केवल, प्रत्युत)। (३) ····वहां आओगे····ही रुपया दूँगा (जब, तब)। (४) ····ध्यानपूर्वक न सुनोगे····कैसे उत्तर दोगे (यदि, तो)। (५) ····मैंने उसको समझाया····वह उलटा पड़ता गया (ज्यों-ज्यों, त्यों-त्यों)। (६) उनके लिए घोड़ा····गधा····ही वरावर है (और, दोनों)। (७)········चलो····ठोकर खाकर गिर पड़ोगे (धीरे-धीरे, वरना)। (८) पढ़ो········फेल हो जाओगे (नही तो)। (९) उद्योग सब करते है········फल भाग्य के अनुसार मिलता है (परन्तु)। (१०) तुम्हारी अगूँठी········है? (कहां)।

(ख) नीचे लिखे वाक्यों के रिक्त स्थानों में कोष्टक में दिये गये सर्वनाम भरो :—
(१) कमरे में····है (कौन) ? (२) क्या ये वे पुस्तकें हैं ···आपने गत वर्ष खरीदी थी ? (जो)। (३)········पैसा है, उसी को मिलेगा (जिसका) (४) समय ऐसा है कि ·······साथ भलाई करो········शत्रु बन जाता है (जिसके, वही)। (५) बोतल में ·······भरा है ? (क्या)। (६) सब········कहते हैं, परन्तु करता········नही (ऐसा, कोई)। (७)····चाहे लाख प्रयत्न कर, परन्तु········हिस्से में से····एक छदाम भी न दूँगा (तू, मैं, मेरे, तुझे)। (८) राम ने······· पूछा कि····जयपुर कब आरहे है (मुझसे, आप) (९) तुम········काम करो (अपना)। (१०)········सम्मति से वह प्रस्ताव पास हो गया (सब की)।

(ग) नीचे लिखे वाक्यों के रिक्त स्थानों मे कोष्टक में लिखी हुई क्रियाएँ भरोः—
(१) रमेश से पत्र नही ·······जाता (लिखा)। (२) मेरी टांग में दर्द है, इसलिए मैं चल नही········(सकूँगा) (३) आज आकाश में बादल····रहे हैं (छा)। (४) क्या तुम से चिट्ठी नही······· ? (पढ़ी गई) ? (५) राम से रावण····गया (मारा)। (६) तुमने इस निरपराध को क्यों····? (सताया)। (७) वह बम्बई पहुँच········होगा (गया)। (८) क्या दरियाँ········हैं ? (बिछाई जा रही)।

(घ) रिक्तस्थानों मे कोष्टक में लिखे हुए शब्दों को भरो :—
(१)········घास चर रहे है (गधे)। (२) ईश्वर का········करो (भजन)। (३) तुमको सदा गरीबों की·······करनी········(सहायता, चाहिए)। (४) राम ने····मारा (रावणको, बाणो से)। (५) मैं किसी भी··· पर तुम्हारा कहना········मानूँगा (शर्त, न)। (६) यह तरबूज बड़ा···है (स्वादिष्ट)। (७) मुझे········गीत अच्छे लगते हैं (राजस्थानी)। (८) यह पुस्तक···· कही अच्छी है (उससे)। (९) सारा सामान ·······राख हो गया (जलकर) (१०) मैं·········· को दिल्ली जाऊँगा (सोमवार)। (११) वह बम्बई····जा रहा है ? (कब) (१२) हरि········कक्षा में पढ़ता है (छठी)। (१३) गोपाल के·······कौन आया है ? (साथ) (१४) मै आपको····कष्ट नहीं देता; किन्तु····करूँ,········हूँ (इतना, क्या, विवश)। (१५) बाल····

होते हैं (काले)। (१६) उस........लक्ष्मी की....है (पर, कृपा)। (१७)....। छात्रों को भाषण-प्रतियोगिता में........लेना चाहिए (उत्साही, भाग)।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :—

१. यह बात सुनते ही उसकी आँखों में आँसू.....आये। २. तेज प्रकाश में आँखें.......जाती हैं। ३. गधे......रहे थे और घोड़े......रहे थे। ४. शराबी....... कर गिर पड़ा। ५. जहाँ मीठा होता है......मक्खियाँ.... करती है। ६. आशा है.....विलम्ब के लिए आप.....करेंगे। ७. अब पछताये होत क्या जब.......चुग गईं खेत। ८. इन चोरियों का........ लगाना........का काम है। ९. शिवाजी की........से औरंगजेब की आशाओं पर......फिर गया। १०. धोबी कपड़ों पर.......करता है। ११. इस वृक्ष में लम्बे फल........हैं। १२. हमारे........से विश्व की अशान्ति का........ साम्राज्यवाद की........है। १३. यहीं रह, मैं मृग के........जाता हूँ। १४. मैंने........जैसे कई देखे हैं। १५. पानी में........पड़ा है। १६. भारत में........कोई नहीं........अपनी प्रशंसा न करे। १७. शरबत में........पड़ा है? १८. पहला और दूसरा तेज है,........आलसी। १९........बिल्ली ... पी गई। २०. यह भोजन........स्वादिष्ट है। २१. थोड़े लड़के जा........ हैं। २२. चेला गुरू से........है। २३. विद्वान का स्त्रीलिंग........है। २४. रमेश शारदा से कपड़े........है। २५. क्या तुम स्नान कर........? मे काम करना........। २६. देखो गाड़ी........आया हैं। २७. तुमको पांच वर्ष और उसी में काम करना.....। २८. मुझसे हँसा नहीं.....२९. वह अब तक वहाँ पहुँच........ होगा। ३०. यदि मैं एम. ए. कर लेता........किसी.... में प्राध्यापक........३१. लड़के शोर........ होंगे। ३२. ईश्वर करे तुम पास........जाओ। ३३. हमें माता-पिता की सेवा........चाहिए। ३४. मैं नहीं........सकता कि वह घर पहुँचा या........। ३५. कृपया दर्शन देते........। ३६. कहिये, आपके........क्या लाऊँ। ३७. मेरे लिये........ चाय........। ३८. क्या यह काम मैं........? ३९. मैं भोजन करता........ नहीं बोलता हूँ। ४०. इस मरे........को क्यों मारते........। ४१. गाड़ी से

उतरते·······मैंने ताँगा किया। ४२.·······शर्म के उसने मेरी·······देखा तक नही।

(अ) १. राम से पत्र·······जाता है। २. यह चिट्ठी राम से नही लिखी····। ३. यह क्या किया·······रहा है? ४. मैं·······सात मील चला हूँगा। ५. जो काम ··· किया जाता है,·······अच्छा होता है। ६. इधर क्या रखा है,·······जाओ। ७. किसी को ·······सताओ। ८. जैसा करोगे········ भरोगे। ९. जहाँ-जहाँ असन्तों के पैर पड़ते है·······उपद्रव·······होते हैं। १०. पेड़ के·······छाया है। ११. यहाँ मुझसे·······कौन आया था? १२. दूध पीओगे··· ··· चाय। १३. राम दरिद्र है·······है ईमानदार। १४. जो होना था···· हो गया। १५. मोरी में कीड़े·······रहे हैं। १६. बगीचे में···· ···कूक·······है। १७.····फूल लताओं पर ही देते है। १८. उस ······ का गाना बड़ा·······है। १९. खेलने में जो प्रवीण होता है, उसे ही ·······कहते हैं। २०. अब वह निन्यानवे के·······में पड़ गया। २१. दूसरों के मुख से अपनी·······सुनने के लिए किस का········ अधीर नही होता। २२. अपना मित्र ही यदि शत्रु बनकर गले पर········ फेरे तो इसे समय के·······के सिवा और क्या कहूँ। २३. नवयुवक····हीं उद्दण्ड क्यों·······हो, किन्तु थोड़े ही समय में परिवार का·······पड़ते ही वह धैर्यशील बन जाता है। २४. इन·······को खाने से मेरे·······खट्टे हो गये। २५. बसन्त की·······बड़ी·······लगती है। २६. सिंह अपनी वीरता के कारण ही·······कहलाता है। २७. पति·······आज्ञा का········ करना·······का परम कर्त्तव्य है। २८. मेरी पुस्तक के·······किसने······· डाले? २९. मोहन जब·······मैं सो रहा था·······रामा ने·······पर पानी·······दिया। ३०. आज मेरे·······स्वामीजी जा······· थे। ३१. दीवार ·······चित्र लटकाये····रहे है। ३२.··· में आँख ······ कर चलो···· कपड़े·······हो जायेंगे। ३३. देखें······ कौन जाता है। ३४. उसकी···· की प्रशंसा शिला लेखों·······अब·······विद्यमान है। ३५. जब सुशीला·······सुना·······उसके पति·······से आ रहे है तो उसके········ की सीमा·······रही। ३६. विद्यादान का बड़ा·······है। ३७. पके आम

देखकर……मन नहीं………। ३८. भिक्षुक ने…………दिया कि…… तुम्हारा कल्याण……३६. भारतवर्ष……कृषिप्रधान……है । ४०. बनारस……से……मील……है । ४१. आपत्ति में कौन……का साथी……होता । ४२. तुम……कौन से……में……हो । ४३. तुम यहाँ……से……प्रतीक्षा कर रहे……? ४४. मुझे……आने से…… लाभ……हुआ । ४५. संसार में बुद्धिमानों……प्रतिष्ठा……है । ४६. मैं इतना……अपने……पर लेने……नहीं प्रस्तुत हूँ । ४७. वह गान •विद्या मे अति……था । ४८. टिकट…………पर बड़ी …………थी । ४६. तुमने खाया……उसने । ५०. तुम कुछ भी कहो……मुझे विश्वास नहीं ५१. पढो……पास न हो सकोगे । ५२. मैं चुप हूँ……बोलना नहीं चाहता । ५३. वे इस प्रकार बोलते है……हम से बड़े हों ।

(६) अशुद्धि-शुद्धि

छात्रों को चाहिए कि नीचे लिखे अशुद्ध वाक्यो के शुद्ध रूपों को ध्यान से पढ़ें और अशुद्धियों और उनके कारणों पर ध्यान दें ।

१. अशुद्ध—क्या आपने जयपुर देखा है ।
   शुद्ध—क्या आपने जयपुर देखा है ?

२. अशुद्ध—शपथ के लेखक हरिकृष्ण प्रेमी हैं ।
   शुद्ध—'शपथ' के लेखक हरिकृष्ण 'प्रेमी' हैं ।

३. अशुद्ध—मैं सबको चाहे कितनें ही हों एक मिनट में हरा दूँगा ।
   शुद्ध—मैं सबको—चाहे कितने ही हों—एक मिनट में हरा दूँगा ।

४. अशुद्ध—वे लोग जो दूसरों की बुराई करते हैं, वे कभी अच्छा फल नहीं पाते ।
   शुद्ध—वे लोग जो दूसरों की बुराई करते है, कभी अच्छा फल नहीं पाते ।

५. अशुद्ध—ऐसे बच्चे जो बचपन में नहीं खेलते, वे जवानी में सुस्त रहते हैं ।
   शुद्ध—ऐसे बच्चे जो बचपन मे नही खेलते, जवानी में सुस्त रहते हैं ।

६. अशुद्ध—वह आम बहुत मीठा निकला जो कल आपने मुझे दिया था ।
   शुद्ध—वह आम जो कल आपने मुझे दिया था, बहुत मीठा निकला ।

७. अशुद्ध—चाहिए मुझे एक नोकर ऐसा जानता हो जो खाना बनाना ।
   शुद्ध—मुझे एक ऐसा नोकर चाहिए जो खाना बनाना जानता हो ।

८. अशुद्ध—आया राम देकर रुपये और चलता बना ।
शुद्ध—राम आया और रुपये देकर चलता बना ।

९. अशुद्ध—वे जहाँ उन्हे जाना था चले गये ।
शुद्ध—वे, जहाँ उन्हे जाना था, चले गये ।

१०. अशुद्ध—बंगाली चावल खाते है, पंजाबी चपाती ।
शुद्ध—बंगाली चावल खाते हैं; पंजाबी, चपाती ।

११. अशुद्ध—नोकर का मोहन बुला गया है मुझे अभी-अभी ।
शुद्ध—मोहन का नोकर मुझे अभी-अभी बुला गया है ।

१२. अशुद्ध—राम अथवा बिहारी कोई आयेंगे ही ।
शुद्ध—राम अथवा बिहारी कोई आयेगा ही ।

१३. अशुद्ध—संभव है मैं आज बम्बई जाऊँगा ।
शुद्ध—संभव है मै आज बम्बई जाऊँ ।

१४. अशुद्ध—मैंने उनका दर्शन किया ।
शुद्ध—मैंने उनके दर्शन किये ।

१५. अशुद्ध—क्या ये आपका हस्ताक्षर है ?
शुद्ध—क्या ये आपके हस्ताक्षर है ?

१६. अशुद्ध—यह बात आँखों से देखी है, झूँठ नही हो सकती ।
शुद्ध—यह बात आँखो देखी है, झूँठ नही हो सकती ।

१७. अशुद्ध—तुम को पाँच साडी दी जाती है ।
शुद्ध—तुम को पाँच साडियाँ दी जाती है ।

१८. अशुद्ध—भौंरा भिन भिनाता और बन्दर चूँ चूँ करता है ।
शुद्ध—भौंरा गुञ्जार करता और बन्दर खों-खो करता है ।

१९. अशुद्ध—माता-पिता की शुश्रूषा करना हमारा धर्म है ।
शुद्ध—माता-पिता की सेवा करना हमारा धर्म है ।

२०. अशुद्ध—नगर सेठ की मृत्यु मे सारे नगर में दुःख छा गया ।
शुद्ध—नगर-सेठ की मृत्यु से सारे नगर मे शोक छा गया ।

२१. अशुद्ध—चिन्ता एक ऐसी व्याधि है जो शरीर को क्षीण कर देती है ।
शुद्ध—चिन्ता एक ऐसी आधि है जो शरीर को क्षीण कर देती है ।

२२. अशुद्ध—उस जौहरी के पास एक अमूल्य हीरा है।
शुद्ध—उस जौहरी के पास एक बहुमूल्य हीरा है।

२३. अशुद्ध—वह वहाँ गया और पत्रिका उठाई।
शुद्ध—वह वहाँ गया और उसने पत्रिका उठाई।

२४. अशुद्ध—तब कोयल की आता है वसन्त जब पड़ती हैं सुनाई मधुर ध्वनि।
शुद्ध—जब वसन्त आता है तब कोयल की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ती है।

नीचे लिखे वाक्यों मे मोटे टाइप के शब्दों के स्थान पर सामने कोष्ठक में लिखे हुए शब्दों को रखकर शुद्ध करो—

१. मेरे घर पाँच कुर्सियाँ हैं। (घर पर या घर में)
२. आप किन-किन प्रश्नों का उत्तर दिया है ? (आपने)
३. उसने वहाँ नहीं जाना है। (उसको)
४. आपने उन्हें कितनी पुस्तकें भेंट किया। (भेंट की)
५. मैंने घर की चिट्ठी लिख दिया। (लिख दी)
६. मेरे को तो यह बात मालूम नहीं है। (मुझ को, मुझे)
७. ताजमहल की सौन्दर्यता पर हम मुग्ध हो गये। (सुन्दरता या सौंदर्य)
८. अनेकों राजे महाराजे वहाँ पधारे थे। (अनेक)
९. हमने यह काम आज करना है। (हमको)
१०. भावना से कर्त्तव्य बड़ी है। (बड़ा)
११. प्रत्येक मनुष्य खेत में कार्य करेंगे। (करेगा)
१२. दोनों लड़कों में राम श्रेष्ठतम है। (श्रेष्ठतर)
१३. तुमने हमारे को क्यों मारा ? (हमको)
१४. उसकी उपेक्षा वह श्रेष्ठ है। (अपेक्षा)
१५. तुम हमारे पास कब आयेगा ? (आओगे)
१६. श्याम और मोहन खेलता है। (खेलते हैं)
१७. आपने मेरा भला किया है, मैं सदा आपका कृतघ्न रहूँगा। (कृतज्ञ
१८. आप कौन मकान में रहते हैं ? (कौन से, किस)
१९. तुम हर समय क्यों बोलता है ? (बोलते हो)
२०. दुर्वासा ने क्रुद्ध होकर कहा—'मैं तुम्हें श्राप दे दूँगा' (शाप)

२१. सीता अब युवक हो गई है। (युवती)
२२. उनकी सौजन्यता पर कौन मुग्ध नहीं होगा। (सुजनता, के सौजन्य)
२३. आप तो सदा ही बेफिजूल बातें करते हैं। (फिजूल)
२४. पं० नेहरू भारत के सम्राज्ञ है। (सम्राट)
२५. वह दिल्ली से कल आगये। (आ गया)
२६. तुमको अब कितना ऋण और देना है? (चुकाना)
२७. एम् ए. पास करके कमला विद्वान बन गई। (विदुषी)
२८. राजों को कौन दण्ड दे सकता था। (राजाओं को)
२९. रिषी किसी के रिनी नहीं होते। (ऋषि, ऋणी)
३०. इन पुस्तकों को प्रथक-प्रथक रखो। (पृथक्-पृथक्)
३१. सभापति के आते ही सभा-मंडप में सब एकत्रित हो गये। (एकत्र
३२. मैं व्यवहारिक बातों को नहीं समझता हूं। (व्यावहारिक)
३३. महादेवी रहस्यवाद की गायक और कवित्री हैं। (गायिका, कवयित्री)
३४. दर असल में यह बात ही गलत है। (दरअसल)
३५. यह बात सुनते ही उसका प्राण निकल गया। (उसके प्राण निकल गये)
३६. अपने कियों का फल कौन नहीं भोगता? (किये)
३७. जो निरोग हैं, वे ही जीवन का आनन्द ले सकते हैं। (नीरोग)
३८. सम्वत् २०१६ में पुनः स्वयम्वर की प्रथा चालू हो गई। (संवत्, स्वयंवर)
३९. आपके सन्मानार्थ यह सब आयोजन करना पडा। (सम्मानार्थ, पड़ा)
४०. हंसी और खांसी दोनों ही झगड़े की जड़ हैं। (हँसी, खाँसी)
४१. कल विमला का माता-पिता बम्बई से आ गये। (के)
४२. महाशय, आप तो आ गये, पर तुम्हारा सामान कहाँ है? (आपका)
४३. भेड़ और बकरी दोनों चर रहे हैं। (चर रही हैं)
४४. उसने राम के मुँह में दम कर दिया। (नाक में)
४५. मैंने सब काम उसके इच्छानुसार किया। (उसकी)
४६. नगर के नर-नारियों के उल्लास की सीमा न रही। (की)
४७. आप और मैंने यह झगड़ा खड़ा किया है। (आपने)

४८. लड़के और लड़कियाँ चिल्ला रहे हैं। (रही है)

अभ्यास

(क) नीचे के वाक्यों में शब्दों का क्रम ठीक करके शुद्ध वाक्य बनाओ :—

१. विश्व शान्ति में है भाग बड़ा अहिंसावाद का महात्मा गांधी के।
२. जाने में बम्बई दो मुझे घण्टे लगे वायुयान से।
३. चाहते हैं भला सदा परोपकारी दूसरों का।
४. हो गया नष्ट रोग उसका जब वह लगा तो अनुभव सुख करने।
५. उनसे निर्धन हैं मत करो लोग जो घृणा।
६. संस्कृत की नहीं रही भाषा अब बोल चाल।
७. वेदों में युग में वैदिक भारतवासी प्रमाण है यथेष्ट कि आर्य ...
समुद्र-यात्रा इस बात के लिए करते थे।
८. इनका स्वर सुन्दर रंग के साथ-साथ भी मधुर था बड़ा।

(ख) नीचे लिखे वाक्यों को शुद्ध करके पुनः लिखो :—

१. वह रात-दिन परिश्रम करने हैं।
२. श्मशान में जाकर कौन विरक्त नहीं होता?
३. उन्हों से अब कुछ भी नहीं होना-जाना।
४. तुम हमारे कब आयेगा।
५. दिन में तारे नहीं देखता।
६. तुम व्यर्थ में ऐसी बातें सुना रहे हो।
७. जब आपने कहा तो हम नहीं सुना।
८. उस काम को करने के लिए किसने बीड़े उठाये।
९. जब-जब वह यहाँ आता है, बहुत शोर मचाता है।
१०. अब मेरी तो किसी भी काम करने की इच्छा नहीं है।
११. उस भयानक काण्ड को देखकर किसके रोंगटे सीधे न होंगे।
१२. वन में एक सिंह और एक सिंहनी घास खा रहे थे।
१३. मीरा के भावों में जो तन्मयता और माधुर्यता है, वह अत्य दुर्लभ है।

१४. यद्यपि उसने कुछ भी नही पढ़ा, परन्तु वह पास होने की पूर्ण आशा रखता है।

१५. राम, मोहन, सोहन और हरि सब पढ़ने में अच्छे हैं।

१६. अब चीन ऐसा शान्ति-प्रिय देश भी भारत पर आक्रमण कर रहा है।

१७. वे बड़े अच्छे वक्ता हैं, इनके भाषण में मधुरता के साथ-साथ रोचकता भी होती है।

१८. मैं, तुम और हरि वृन्दावन चलेंगे।

१९. पैंसिल, कागज और पुस्तकें सब मेज पर रखी है।

२०. तुमने हमारे क्यों मारा ?

छठा अध्याय

अपठित

अपठित का अर्थ है वह अवतरण जो पढ़ा न हो। परीक्षा में गद्य वा पद्य का एक ऐसा अवतरण आता है जो पाठ्य-पुस्तकों से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। यह अवतरण कहीं से भी किसी पुस्तक वा पत्र-पत्रिका से दे दिया जाता है। उस दिये हुए अवतरण के नीचे कुछ प्रश्न किये हुए होते हैं, जिनका उत्तर विद्यार्थियों को उस अपठित अवतरण के आधार पर, अपने बुद्धि-बल से देना पड़ता है। यह कार्य विद्यार्थियो कों कुछ कठिन प्रतीत होता हैं। कारण यह है कि आज का विद्यार्थी जब पूरी पाठ्य पुस्तकें ही नही पढ़ता तब वह अतिरिक्त पुस्तकों का विशेष अध्ययन कहाँ से करेगा? उच्च कक्षाओं में पढ़ने वाले छात्रों से यह आशा की जाती है कि वे अपनी पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं का भी अध्ययन करें जिससे उनके सामान्य ज्ञान में वृद्धि हो, और साथ ही वे विभिन्न क्षेत्रों में होने वाले नित्य नूतन परिवर्तनों से भी परिचित होते रहें।

अपठित अवतरण पर पूछे गये प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर देना सरल कार्य नही हैं; किन्तु अभ्यास एक ऐसी वस्तु है जो कठिन से कठिन कार्य को भी सरल बना देती है। छात्रों को, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सामयिक पत्र-पत्रिकाएँ एवं इतर सामान्य-ज्ञानवर्द्धक पुस्तकें पढ़ते रहना चाहिये, जिससे उनमें पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों, एवं स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं के समझने की योग्यता बनी रहे। छात्रों को इस ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये। जो छात्र ऐसा नहीं कर सकते, वे कम से कम प्रस्तुत पुस्तक में दिये गये अपठित गद्य-पद्य के अवतरणों को तो अवश्यमेव ध्यान से पढ़े और समझने का यत्न करें। अभ्यास करना प्रत्येक दशा में आवश्यक है। अभ्यास के साथ-साथ एक

बात और सीखनी है और वह है एक अपठित अवतरण को हल करने का चातुर्य या कला।

अपठित अवतरण चाहे सरल से सरल ही क्यों न हो, प्रथम बार पढ़ने पर वह ऐसा प्रतीत होता है मानों छात्र उसे कर ही नहीं सकेंगे। किन्तु वास्तव में बात ऐसी नही है। छात्रो को थोड़ा धैर्य से काम लेना चाहिए। उस अवतरण को समझ-समझ कर उन्हें दो-तीन बार पढ़ना चाहिए। तदनन्तर अवतरण के नीचे लिखे हुए प्रश्नों को दो-एक बार पढना चाहिए। ऐसा करने पर उन्हें अवतरण के सम्बन्ध मे बहुत सी बातें—कौन कह रहा है ? किससे कह रहा है ? क्या कहा गया है ? आदि—मालूम हो जायेंगी। प्रश्नों को समझ कर यदि वह अवतरण पुनः पढ़ा जायगा तो छात्रों को अवतरण की अधिकांश बातें समझ मे आ जायेंगी। इस प्रकार थोड़ा सा बौद्धिक व्यायाम करने पर छात्र सब कुछ समझ लेंगे और उन्हे ऐसा प्रतीत होने लगेगा मानों वह अवतरण उनका कहीं पढ़ा हुआ है। हाँ, एक बात अवश्य याद रखनी है और वह है धैर्य रखना अर्थात् जल्दबाजी न करना।

अब उन प्रश्नों पर भी, जो अपठित अवतरण पर पूछे जाते है, थोड़ा विचार कर लेना चाहिए। इस सम्बन्ध मे यह बात सदा ध्यान मे रखनी चाहिए कि उत्तर संक्षिप्त और सीधे हों, सरल भाषा में हों, यथा-संभव उनमें अवतरण की भाषा का प्रयोग नही होना चाहिए। प्रश्न का उत्तर मन-गढ़न्त न हो, अवतरण के आधार पर हो अर्थात् भाव या विचार तो अवतरण का ही हो, किन्तु उसको व्यक्त करने का अपना स्वतंत्र ढंग हो। अब सामान्य प्रश्नों को छोड़ कर कुछ विशेष प्रश्नों के सम्बन्ध में छात्रों को जानकारी दी जाती हैं। छात्रों को चाहिए कि वे इन प्रश्नों की प्रकृति एवं आशय को भले प्रकार समझलें और पूछे गये प्रश्नों का उपयुक्त उत्तर दें।

(क) किसी भी अवतरण का शीर्षक देते समय इस बात का ध्यान रखा जाय कि शीर्षक छोटा हो, अवतरण के समूचे सार को अपने में समेटे हुए हो, आकर्षक हो और पढ़ते ही अवतरण के सम्बन्ध में स्थूल जानकारी दे दे।

(ख) मोटे टाईप के स्थलों का अर्थ लिखते समय या उनकी व्याख्या करते समय इस बात का ध्यान रहे कि केवल मोटे टाईप के स्थल का ही उपयोग

किया जाय, उसके साथ इधर-उधर के शब्दों को उसके साथ न मिलाया जाय। यदि केवल अर्थ पूछा गया है तो वह ऐसा हो जो उसके मूल अंश के स्थान पर रखा जा सके और वाक्य-संगठन में वह कोई दोष उत्पन्न न करे। यदि व्याख्या पूछी गई है तो मोटे टाईप के स्थल के मूल भाव या विचार की विशद विवेचना करनी है और आवश्यकता पड़नें पर उदाहरण आदि देकर उसे स्पष्ट करना है। व्याख्या मे अपना मत भी दिया जा सकता है।

(ग) आशय, अभिप्राय और तात्पर्य—तीनों का एक ही अर्थ है। अवतरण के मूल भाव वा विचार को अवतरण में ढूँढ़ कर संक्षेप में प्रकट करना ही तात्पर्य, आश्य या अभिप्राय कहलाता है।

(छ) सार से अभिप्राय है संक्षिप्त अर्थ का। अवतरण की मुख्य-मुख्य बातों को भले प्रकार समझा कर थोड़े से शब्दों में कह देना ही 'सार' है।

(ङ) सारांश में नपे-तुले एक दो वाक्यों में अवतरण के सार को प्रकट कर देना है।

(च) व्याकरण सम्बन्धी प्रश्न यदि पूछे गये हों तो उनका उत्तर उनके रूप को देखकर व्याकरण के नियमानुसार दिया जाना चाहिए।

अब उदाहरण के लिए कुछ अपठित अवतरणों को हल करके समझाया जाता है।

गद्य—अवतरण

शिक्षण-कार्य में वक्तृता की अपेक्षा लेखन का अधिक महत्व-पूर्ण स्थान है। अपने मनोगत भावों और विचारों को संयत, प्रवाह पूर्ण और परिमार्जित भाषा मे व्यक्त करना सहज कार्य नहीं है, इसके लिए सतत अभ्यास की आवश्यकता है। अध्ययन और चिन्तन विचार-शक्ति को बढ़ाते हैं, और जिसकी विचार-शक्ति जितनी तीव्र और प्रशस्त होगी, वह उतना ही विचारशील और सुयोग्य लेखक बन सकेगा। हमारी परीक्षाएँ लिखित रूप में ही होती हैं, हमको अपने विचार पद-पद पर लिख कर ही प्रकट करने पड़ते हैं। इसी उद्देश्य को सन्मुख रख कर विद्यालयों में छात्र-छात्राओं को लेखन-कला

का अभ्यास कराया जाता है, उन्हें प्रतिदिन कुछ-न-कुछ कार्य लिख कर लाने को दिया जाता है। जिन छात्रों की प्रवृत्ति लिखने की ओर नहीं होती, वे परीक्षाओं में ही नहीं, जीवन में भी कम सफलता प्राप्त करते देखे गये हैं। निरन्तर लिखने का अभ्यास करने से उसकी भाषा में प्रांजलता, शैली मे व्यक्तित्व और विचारों में प्रौढ़ता आती है, विचारशक्ति तीव्र और बलवती होती है। **वक्तृता के सदृश ही लेखन भी एक कला है और भाव-प्रकाशन का एक उच्चतम स्थायी साधन है।**

१. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।
२ जो व्यक्ति विचारशील और सुयोग्य लेखक बनना चाहता है, उसको क्या करना चाहिए ?
. जीवन में लेखन-कला का क्या महत्व है ?
. निरन्तर लिखने का अभ्यास करने से क्या-क्या लाभ है ?
५. मोटे टाईप के स्थलो की व्याख्या करिए।
६. उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए।
७. महत्वपूर्ण, प्रतिदिन, छात्र-छात्र और भाव-प्रकाशन शब्दों का सविग्रह समास लिखिए।

उपर्युक्त सब प्रश्नों के क्रमशः उत्तर :—

१. लेखन-कला का महत्व।
२. जो व्यक्ति विचारशील और सुयोग्य लेखक बनना चाहता है, उसे चाहिए कि वह निरन्तर कुछ-न-कुछ लिखता रहे, क्योंकि लगातार लिखते रहने से भाषा का परिमार्जन होगा और विचारों में प्रौढ़ता आयेगी। इसके अतिरिक्त लेखक बनने वाले को चाहिए कि वह सदा अध्ययनशील रहे, सदा चिन्तन और मनन करता रहे, जिससे उसकी विचार-शक्ति तीव्र और बलवती हो।
३. जीवन में लेखन-कला का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि भाव-प्रकाशन का उच्चतम स्थायी साधन लेखन-कला ही है। परीक्षाओं में ही नहीं, अन्यत्र भी जीवन में सब स्थायी कार्य लिखित रूप में ही किये जाते हैं। अपने दूरस्थ मित्रों एवं सम्बन्धियों को अपने विचार लिखित रूप में ही प्रेषित

किये जाते हैं। फिर कहने और लिखने में भी महान अन्तर है। किसी को कहा कुछ भी जा सकता है, परन्तु लिखा नहीं जा सकता; क्योंकि कहा हुआ अस्थायी होता है, क्षणभर बाद भुला दिया जाता है, और लिखा हुआ अमिट होता है, स्थायी होता है, सुरक्षित रहता है, अवसर आने पर वह पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है। यदि लिखा हुआ शुद्ध और संयत न हो तो कुछ का कुछ अर्थ लिया जा सकता है। इसलिए भी जीवन में लेखन-कला का बड़ा महत्व है।

४. निरन्तर लिखने का अभ्यास करने से लेखक की भाषा का परिमार्जन होता है, भावों और विचारों में पक्वता और प्रौढ़ता आती है और शैली में विशिष्टता उत्पन्न होकर अपनापन आता है। निरन्तर लिखते रहने से ही व्यक्तित्व-पूर्ण शैली का विकास होता है।

५. मोटे टाइप के स्थलों की व्याख्या :—

(क) 'शिक्षण-कार्य में ....महत्व पूर्ण स्थान है'।

शिक्षालयों में छात्रों को बोलना, लिखना और पढ़ना सिखाया जाता है। बोलना सिखाने के लिए विद्यालयों मे वाग्वर्द्धिनी सभाएँ स्थापित की जाती हैं, समय-समय पर भाषण-प्रतियोगिताएँ कराई जाती हैं, कभी-कभी कक्षाओं में भी छात्रों को प्रश्नों का मौखिक उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। किन्तु छात्रों के लिए बोलने से भी लिखना सीखना अधिक आवश्यक है, इसका कारण है विद्यालयों की सब परीक्षाओं का लिखित रूप में होना। वे छात्र, जिनको ठीक-ठीक लिखना आता है, विषय का थोड़ा ज्ञान रखते हुए भी पास हो जाते हैं; और वे छात्र, जो बोल तो अच्छा लेते हैं और उन्हें अपने पाठ्य विषय का ज्ञान भी पूर्ण है, परन्तु वे अपने विचारों को शुद्ध और संयत भाषा में लिखने में असमर्थ हैं, परीक्षा में असफलता का मुँह देखते हैं। इसलिए शिक्षालयों में वक्तृत्व की अपेक्षा लेखन-कला को अधिक महत्व दिया जाता है।

(ख) 'अध्ययन और चिन्तन विचार-शक्ति को बढ़ाते हैं'।

मनुष्य का ज्ञान अध्ययन और चिन्तन से ही बढ़ता है। केवल पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों का ही नहीं, अपितु जिस वातावरण में वह रह रहा है,

उसका भी उसको अध्ययन करना चाहिए। उसको अपने नेत्र खुले हुए रख कर चारों ओर देखते रहना चहिए, और जो कुछ वह देखे वा पढ़े, उस पर उसे मनन करना चाहिए। इस प्रकार निरन्तर अध्ययन एवं चिन्तन से ही विचार-शक्ति का विकास होता है।

(ग) 'वक्तृता के सदृश ही······· ···············स्थायी साधन है'।

बोलना जिस प्रकार एक कला है, उसी प्रकार लिखना भी एक कला है। ये दोनों ही कलाएँ हमारे हृद्गत भावों को प्रकट करने का सर्वोत्तम साधन हैं। दोनों में अन्तर केवल इतना ही है कि बोलने की अपेक्षा लिखने की कला में स्थायित्व है, क्योंकि किसी का कहा हुआ कुछ समय पश्चात् भुला दिया जाता है वैसे भी मौखिक रूप से जो कुछ कहा जाता है, उनका लिखित की अपेक्षा कोई विशेष महत्व नही है। इसके विपरीत, जो कुछ लिखा हुआ होता है, वह स्थायी होता है। मौखिक रूप से प्रकट किये भाव वा विचार हवा में उड़ जाते हैं, किन्तु वे ही भाव वा विचार जब लिखित रूप में प्रकट किये जाते हैं तो साहित्य की स्थायी निधि बन जाते हैं।

६. प्रस्तुत अवतरण में लेखक ने बतलाया है कि लिखना एक जीवनोपयोगी उत्तम कला है, क्योंकि हमारे भावों और विचारों को प्रकट करने का यही एक स्थायी साधन है।

७.

शब्द	विग्रह	समास
महत्वपूर्ण	महत्व से पूर्ण	तत्पुरुष
प्रतिदिन	दिन-दिन (प्रत्येक दिन)	अव्ययीभाव
छात्र-छात्रा	छात्र और छात्रा	द्वन्द्व
भाव-प्रकाशन	भावों का प्रकाशन	तत्पुरुष

पद्य-अवतरण

सुनिए विटप प्रभु पुहुप तिहारे हम,
राखियौ हमें तो सोभा रावरी बढायेंगे।
तजिहो हरखि के तो बिलगु न मानें कछु,
जहाँ-जहाँ जैहैं तहाँ दूनूँ जस गायेंगे।

सुरन चढेंगे नर-सिरन चढेंगे हम,
सुकवि 'अनीस' हाथ-हाथन बिकायेंगे।
देश में रहेंगे परदेश में रहेंगे, काहू—
भेष मे रहेंगे तऊ **रावरे** कहायेंगे।।

१. उपर्युक्त अवतरण मे कौन किससे कह रहा है ?
२. उपर्युक्त पद्य-अवतरण का सरलार्थ करिए।
३. इस पद्य का भावार्थ लिखिए।
४. 'काहू भेष में रहंगे' का आशय स्पष्ट करिए।
५. मोटे टाईप के शब्दों का आशय स्पष्ट करिए।

उपर्युक्त सब प्रश्नों के क्रमशः निम्नलिखित उत्तर हैं :—

१. उपर्युक्त अवतरण में फूल अपने वृक्ष से प्रार्थना कर रहे हैं।
२. सरलार्थ :—प्रस्तुत पद्य मे फूल अपने स्वामी वृक्ष से प्रार्थना कर रहे ... वे कह रहे है कि प्रभो ! हम तो आप ही के हैं (किसी अन्य के नहीं)। यदि आप हमें अपने पास रखेंगे तो हम आपकी शोभा बढ़ायेंगे अर्थात् हमारे आपके पास रहने से आप की शोभा बढ़ेगी। यदि आप प्रसन्नता पूर्वक हमें छोड़ देंगे, हमारा त्याग कर देंगे, तो भी हम बुरा न मानेंगे (क्योंकि सेवक को स्वामी के प्रति कुछ कहने का अधिकार ही नहीं है)। आपसे अलग होकर हम जहाँ-जहाँ जायेंगे, वहाँ-वहाँ हम आपका यशोगान करेंगे (अपनी सुरभि द्वारा आपका यश फैलायेंगे)। फूल पुनः वृक्ष से कह रहे हैं कि आपके त्यागने पर हम चाहे अच्छी स्थिति में रहें या बुरी में, परन्तु प्रत्येक दशामें हम आपके ही कहलायेंगे। आप से अलग होकर चाहे हम देवताओं पर चढ़ाये जायँ वा हम मनुष्यों के सिर पर चढ़ें और चाहे हम हाथों-हाथ बिकते फिरें (अपमान पूर्ण जीवन व्यतीत करें), चाहे हम अपने देश में रहें चाहे विदेश में और हम चाहे किसी भी वेश में या किसी भी रूप मे रहें, किन्तु हम रहेंगे सदा आपके ही।
३. भावार्थ :—इस पद्य में अन्योक्ति अलंकार है। किसी पर ढार कर किसी को कहना या सुनाना 'अन्योक्ति' अलंकार कहलाता है। वृक्ष एक राजा

के रूप में है और उसके फूल उसके सेवक के रूप में हैं। कोई राजा या स्वामी किसी कारण से अपने सेवक समूह को त्याग रहा है, सेवकों को अपने स्वामी को छोड़कर जाते हुए कुछ दुःख हो रहा है। वे अपने स्वामी से विनय पूर्वक कह रहें है कि यदि स्वामी उन्हें त्याग भी देगा तो भी वे रहेंगे उसी के अर्थात् उनके साथ उनके स्वामी का नाम तो जुड़ा ही रहेगा। जहाँ कहीं भी वे जायेंगे, अपने स्वामी का ही यशोगान करेंगे। भाव यह है कि स्वामी को ऐसे अपने स्वामी-भक्त सेवकों को अलग नहीं करना चाहिए।

४. फूल अपने वृक्ष रूपी महाराज से कह रहे हैं कि हम किसी भी भेष में रहें अर्थात् चाहे हम देवताओं पर चढ़ाये जायें, चाहे हम हार में गूँथे जावें, गुलदस्ते में सजाये जावें या मसल कर फेंक दिये जावें। इस प्रकार फूल अपनी विभिन्न प्रत्याशित भावी दशाओं का काल्पनिक चित्र 'काहू भेष में रहेंगे कह कर अपने स्वामी वृक्ष के सामने रख रहे हैं।

शब्द		अर्थ
पुहुप	—	फूल
विलगु	—	बुरा
रावरे	—	आपके

(क) गद्य-अवतरण

(१)

पुस्तकों के हम सबसे अधिक ऋणी हैं। ये ऐसे अध्यापक हैं जो हमको बिना दण्ड-लकुट-प्रहार के बिना कठोर शब्द कहे, बिना क्रोध किये और बिना द्रव्य लिये हुए ही शिक्षा दे सकते हैं। ये दिन-रात, प्रातः सायं, जब चाहो तब, सहायता देने के लिए तैयार हैं। यदि आप इनके सन्निकट जायें तो ये ऊँघते या सोते न मिलेंगे। यदि आप जिज्ञासु हैं इनसे कुछ प्रश्न करते हैं तो ये आपसे कुछ परोक्ष न रखेंगे, यदि आप इनके रूप को यथार्थ न समझ पाये तो ये भुनभुनायेंगे नहीं, झल्लायेंगे नहीं, यदि आप अज्ञानी हैं तो ये आपकी मूर्खता पर हंसेंगे नहीं। यदि आप विश्रांत हैं तो ये आपका मनोरंजन करेंगे, यदि आप विपन्न हैं तो ये आपको धैर्य बंधायेंगे, यदि आप शोकाकुल हैं तो

ये आपको सान्त्वना प्रदान करेंगे । प्रत्युपकार की भावना न रखने वाले सच्चे मित्र की भाँति ये सदा आपका पथ-प्रदर्शन करेंगे । इसलिए बुद्धि तथा ज्ञान से परिपूर्ण पुस्तकें इस लोक की समस्त सम्पत्ति से बहुमूल्य है, किसी भी अन्य **स्पृहणीय** वस्तु से इनकी तुलना नही की जा सकती ।

१. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक चुनकर लिखिए ।
२. पुस्तकों की तुलना अध्यापकों से क्यों की गई है ?
३. पुस्तकें किस प्रकार सच्चे मित्र के समान पथ-प्रदर्शन करती हैं ?
४. 'अच्छी पुस्तकें इस लोक की समस्त सम्पत्ति से भी बहुमूल्य हैं' किस प्रकार ?
५. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिए ।

(२)

चित्रकूट में अपनी **कुटिलता** का **अनुभव** करती हुई कैकेयी से राम बार-बार इसलिए मिलते हैं कि उसे यह निश्चय हो जाय कि उसके मन में उस कुटिलता का ध्यान कुछ ही नही है और उसकी ग्लानि भी दूर हो । वे बार-बार उसके मन में यह बात जमाना चाहते हैं कि जो कुछ हुआ, उसमें उसका कुछ भी दोष नहीं है । **अपने साथ बुराई करने वाले के हृदय को शांत और शीतल करने की चिन्ता राम के सिवा और किसको हो सकती है ?** दूसरी बात यह ध्यान में देने की है कि राम का यह **शील-प्रदर्शन** उस समय हुआ, जिस समय कैकेयी का अन्तःकरण अपनी कुटिलता का पूर्ण अनुभव करने के कारण इतना **द्रवीभूत** हो **गया था** कि **शील** का **संस्कार** उस पर सब दिन के लिए जम सकता था । गोस्वामी जी के अनुसार हुआ भी ऐसा हीः—

कैकेयी जौलौं जियत रही ।
तौलौं बात मातु सो मुँह भरि भरत न भूलि कही ।
मानी राम अधिक जननी तें, जननि हुँ गँस न गही ।

इतने पर भी क्या गाँस रह सकती है ?

१. उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक लिखिए ।
२. चित्रकूट में कैकेयी अपनी किस कुटिलता का अनुभव कर रही थी

३. राम कैकेयी से चित्रकूट में बार-बार क्यों मिलते थे ?
४. राम के इस प्रकार मिलने का कैकेयी पर क्या प्रभाव पड़ा ?
५. इस अवतरण का सार लिखिए ।
६. मोटे टाइप के स्थलों का अर्थ लिखिए ।

(३)

प्रेमचन्द का यथा-समय भारतीय साहित्य में वही सम्मान होगा जो डिकिंस और टाल्स्टाय को योरोपीय साहित्य में प्राप्त है। भारत का हृदय कलकत्ते की गलियो मे नही है, न वह शिक्षित जनों की अट्टालिकाओं मे है। **उसका हृदय देहात मे है, किसानों के टूटे-फूटे झोपड़ों में है।** हरे-भरे खेतों को देखकर उसे शान्ति मिलती है; अनावृष्टि से वह सूख जाता है। **उस-हृदय का मार्मिक चित्र जिसने खींचा है, वह देश भर का धन्यवाद का पात्र है।** अभी भारतीय किसानो में शिक्षा का अभाव है। अभी उन्हें नहीं मालूम है कि उन्ही के समान किस सरल-प्रकृति तथा अस्वस्थ व्यक्ति ने शारीरिक और मानसिक वेदनाएँ झेलते हुए **उनके दुःखों और आशाओं की कथा कही है।** जब वे शिक्षित हो जायेंगे, तब उनकी आँखें खुलेंगी, और अपने पूर्वजों का चित्र जब वे इन उपन्यासो और कहानियों मे देखेंगे, **तब इनके विधाता की पूजा होगी,** अभी कुछ समय तक नही।

१. उपर्युक्त अवतरण का सार संक्षेप में लिखिए।
२. प्रेमचन्द जी ने किस प्रकार अपनी कहानियों और उपन्यासों द्वारा समाज-सेवा की ?
३. प्रेमचन्द जी का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
४. उपर्युक्त अवतरण में मोटे टाइप के स्थलों का अर्थ स्पष्ट करिए।

(४)

यों तो अभिमान बुरा समझा जाता है और उसको व्यक्ति-विशेष के पतन का कारण माना जाता है, परन्तु जिस अभिमान से मनुष्य की आत्मा **सुविचारी मनुष्यों की दृष्टि में** किसी प्रकार कलुषित न प्रतीत होती हो और जो अभिमान मनुष्य के **ऐहिक एवं पारलौकिक कार्यों** मे किसी प्रकार का प्रतिबन्ध

ाराम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नहीं। एक अनोखी मनो-

न उपस्थित करता हो, वह अभिमान मनुष्य का दूषण नहीं, प्रत्युत भूषण ! सर्वथा उपादेय और उभयलोक साधक है। इसीलिए अपने देश का, वेश का, भाषा का, जातीयता का, धर्म का, सदाचार का एवं अन्य मनुष्योचित विषयों का अभिमान दूषित नहीं समझा जाता, वरन् ऐसे उत्तम अभिमान से अलंकृत पुरुष को देश का, समाज का और कुल का आभूषण समझा जाता है।

१. उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए ?

२. अभिमान पतन का कारण क्यों माना जाता है।

३. किस प्रकार का अभिमान दूषण नहीं, भूषण है।

४. मोटे टाइप के स्थलों का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

५. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।

६. सुविचारी, उभयलोक, सदाचार और मनुष्योचित शब्दों में सविग्रह समास बताइए।

(५)

आधुनिक जीवन अत्यधिक जटिल हो गया है और उसके साथ कानूनी जटिलताएँ भी बढ़ती जा रही हैं। विधान-मंडलों और संसद द्वारा नित्य नये कानून बनते रहते हैं और सामान्य नागरिकों को उनकी पूरी जानकारी भी नहीं होती। इसके अतिरिक्त न्याय काफी खर्चीला और **विलम्बकारी** भी होता जा रहा है। 'विलम्ब से मिलने वाला न्याय न्याय नहीं रहता', इस उक्ति को भुला दिया गया है। देश की न्याय-व्यवस्था में सुधार के उपाय सुझाने के लिए विधि-आयोग की सिफारिशें सरकार के सामने **विचाराधीन** हैं। विधि-मंत्री ने लोक-सभा में यह **आश्वासन** दिया है कि न्याय को **शीघ्रगामी** और कम खर्चीला बनाने का प्रयत्न किया जायगा। वर्तमान अवस्था में गरीबों के लिए न्याय प्राप्त करना कठिन हो गया है; वे उसका भारी खर्च उठाने की सामर्थ्य नहीं रखते। किसी व्यक्ति को केवल इसीलिए न्याय प्राप्त न हो सके कि वह गरीब और **साधनहीन** है तो इससे बड़ा अन्याय दूसरा नहीं हो सकता। भारत सरकार का विधि-मन्त्रालय इस अन्याय का **परिमार्जन** करने का उपाय सोच रहा है।

१. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।
२. गरीबों को ठीक तरह न्याय प्राप्त क्यों नही होता है ? इसके कारणों पर प्रकाश डालिए।
३. विधि-मन्त्री ने लोक सभा में किस बात का आश्वासन दिया है ?
४. आपकी दृष्टि में गरीबों को सस्ता न्याय किस प्रकार सुलभ हो सकता है ?
५. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिए।

न्याय-व्यवस्था, साधनहीन, विचाराधीन और शीघ्रगामी शब्दों का विग्रह करके समास बताइए।

(६)

कवि की पूर्ण भावुकता इसमें है कि वह प्रत्येक मानव स्थिति में अपने को डालकर उसके अनुरूप भाव का अनुभव करे। इस शक्ति की परीक्षा का राम-चरित-मानस से बढ़कर विस्तृत क्षेत्र और कहाँ मिल सकता है ? जीवन-स्थिति के इतने भेद और कहाँ दिखाई पड़ते हैं ? इस क्षेत्र में जो कवि सर्वत्र पूरा उतरता दिखाई पड़ता है, उसकी भावुकता को और कोई नही पहुँच सकता। जो केवल **दाम्पत्य रति** ही में अपनी भावुकता प्रकट कर सकें वा वीरोत्साह का ही अच्छा चित्रण कर सकें, वे पूर्ण भावुक नही कहे जा सकते ! पूर्ण भावुक वे हैं, जो जीवन की प्रत्येक स्थिति के **मर्मस्पर्शी अंश का साक्षात्कार कर सकें** और उसे श्रोता या पाठक के सन्मुख अपनी **शब्द–शक्ति द्वारा प्रत्यक्ष कर सकें**। हिन्दी के कवियों मे इस प्रकार की **सर्वाङ्गपूर्ण भावुकता** हमारे गोस्वामी जी मे ही है, जिसके प्रभाव से रामचरित मानस उत्तरीय भारत की सारी जनता के **गले का हार हो रहा है**।

१. उपर्युक्त अवतरण के मोटे टाइप के स्थलों की व्याख्या करिए।
२. रामचरित मानस की लोक-प्रियता का क्या कारण है ?
३. किस कवि को आप पूर्ण भावुक कह सकते हैं ?
४. कवि किस प्रकार अपने भावों को दूसरों तक पहुँचाता है।
५. हिन्दी कवियों में गोस्वामी जी का क्या स्थान है ?

(७)

दुःख की कोटि में जो स्थान भय का है, आनन्द की कोटि में वही स्थान उत्साह का है। भय में हम **आगामी दुःख के निश्चय से दुखी और प्रयत्नवान भी होते हैं।** मूल दुःख से भय की विभिन्नता प्रयत्नावस्था और अप्रयत्नावस्था दोनों मे स्पष्ट दिखाई पड़ती है, **पर आगामी सुख के निश्चय का प्रयत्न शून्य आनन्द कुछ इतना नहीं जान पड़ता।** यदि किसी भावी आपत्ति की सूचना पाकर कोई एकदम ठस हो जाय, कुछ भी हाथ-पैर न हिलाये, तो भी उसके दुःख को साधारण दुःख से अलग करके भय की संज्ञा दी जायगी, पर यदि किसी प्रिय मित्र के आने का समाचार पाकर हम चुप चाप आनन्दित होकर बैठे रहें वा थोड़ा हँस भी दें तो यह हमारा उत्साह नहीं कहा जायगा। प्रयत्न या चेष्टा उत्साह का अनिवार्य लक्षण है। **प्रयत्न–मिश्रित आनन्द ही का नाम उत्साह है।**

१. उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिए।
२. भय और उत्साह में क्या अन्तर है? स्पष्ट करिए।
३. उत्साह का अनिवार्य लक्षण क्या है?
४. मोटे टाइप के स्थलों का अर्थ स्पष्ट करिए।

(८)

द्विवेदी जी की साहित्य-सेवा का **पुनीत** आदर्श हिन्दी-भाषा का प्रचार करना था। इसकी चिन्ता में वे चौबीसों घण्टे व्यस्त रहते थे। इसी से हिन्दी की अस्थिर लेखन-शैली को स्थिरता प्रदान करने, भाषा-संस्कार, भाषा की काट-छाँट, व्याकरण के नियमों की प्रतिष्ठा, वाक्य-विन्यास की व्यवस्था आदि के साथ-साथ हिन्दी को साधारण बोल चाल की भाषा के निकट लाकर उसमें विचारों के प्राण फूंकने का **भागीरथ** प्रयत्न उन्होंने किया। **प्रेरणा** और प्रोत्साहन के द्वारा अनेकानेक नवीन लेखकों का उन्होंने उत्साह बढ़ाया। अँग्रेजी की ओर झुके हुए हिन्दी **भाषा-भाषियों** को हिन्दी की ओर खींचा, अन्य भाषाओं से ढूँढ ढूँढ कर रत्न निकाले और उनसे हिन्दी का सिंहासन सुसज्जित किया। हिन्दी को उस समय उन्होंने चमकाया जब उसमें कोई चमक नहीं थी।

१. उपर्युक्त गद्य-अवतरण का सार लिखिये।
२. द्विवेदी जी की हिन्दी-सेवा पर अपने विचार प्रकट करिये।
३. उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक दीजिये।
४. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिये।

(६)

काश्मीर के सौन्दर्य-कोष में सबसे मूल्यवान मणि वहाँ के शालामार और निशात बाग माने जाते हैं और वास्तव में सम्राज्ञी नूरजहाँ और सम्राट् जहाँगीर की स्मृति से युक्त होने के कारण वे हैं भी इसी योग्य। शालामार में बैठकर तो अनायास ही ध्यान आ जाता है कि यह **उसी सौन्दर्य-प्रतिमा का प्रमोद-वन रह चुका है** जिसे सिंहासन तक पहुँचने के लिए उसके अधिकारी को स्वयं अपने जीवन की सीढ़ी बनानी पड़ी और जब वह उस तक पहुँच गई तब **उसकी गुरुता से संसार काँप उठा**। यदि ये उन्नत, सघन और चारों ओर **वरद हाथों की तरह** शाखाएँ फैलाये हुए चिनार के वृक्ष बोल सकते, यदि आकाश तक अपने सजल उच्छ्वासों को पहुँचाने वाले फव्वारे बता सकते, तो न जाने कौन सी **करुण-मधुर कहानी** सुनने को मिलती। उन बगीचों की जिन रजकणों पर कभी रूपसियों के **राग-रंजित सुकोमल चरणों का न्यास** भी धीरे-धीरे होता था, उन पर जब आज पर्यटकों एवं यात्रियों के भारी जूतों के शब्द से युक्त कठोर पैर पड़ते है, तब ऐसा लगता है मानो वे पीड़ा से कराह रहे हों।

१. शालामार और निशात बाग किस काल में बने हैं और वे क्यों प्रसिद्ध है?

२. शालामार किस का प्रमोद वन रह चुका है। उसके विषय में आप क्या जानते है?

३. मोटे टाइप के स्थलों का सरलार्थ करिए।

४. उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक दीजिए।

(१०)

आज हमारा देश स्वतन्त्र है। हिन्दी भाषा भारत की राष्ट्र भाषा घोषित हो चुकी है। अतः अन्य भाषा-भाषियों से भी हिन्दी की सेवा होने की सम्भावना

है और आशा है कि भविष्य में अधिक मुसलमान हिन्दी सेवा में अपनी प्रतिभा का परिचय देंगे। भाषा विचारों की वाहिका है। इससे पारस्परिक दूरत्व घट कर नैकट्य बढ़ता है और बीच की भिन्नता समाप्त होती है। अतएव जिन मुसलमान साहित्यकों ने हिन्दी भाषा में अपने विचार व्यक्त करके सहृदयता दिखाई है, उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों को एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया है। अतएव हिन्दी भाषा उनकी चिर-ऋणी है। उनकी साहित्य सेवा को ध्यान में रखकर हम यह निस्सन्देह कह सकते है कि यदि हिन्दू साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य-वृक्ष को रोपा है तो मुसलमान साहित्यकारों ने उसको सिंचित करके पुष्पित और फलित करने मे पर्याप्त योग प्रदान किया है।

१. उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिए।

२. क्या भाषा की एकता द्वारा दो भिन्न जातियों के बीच भिन्नता समाप्त हो सकती है ? इस पर अपने विचार प्रकट करिए।

३. मोटे टाइप वाले स्थलो का सरलार्थ लिखिए।

४. हिन्दी भाषा मुसलमानों की किस बात के लिए चिर-ऋणी है ?

(११)

वर-प्राप्ति और दहेज-सम्बन्धी साधारण कठिनाईयों के उपरान्त विमला की दो बड़ी बहिनों का विवाह हो चुका था। अब विमला ही केवल माता-पिता की चिन्ता का विषय बनी हुई थी। निरन्तर प्रयत्न करते रहने पर भी उन्हें कोई सफलता न मिली थी। विमला जन्म से ही बोलती न थी। लोग समझते थे कि वह न कुछ बोल सकती है और न कुछ समझ सकती है, अतः वे उसके सम्मुख ही उसके भविष्य के विषय में वार्तालाप करते थे। किन्तु विमला ने अपनी शैशवावस्था से ही यह भली प्रकार समझ लिया था कि वह अपने वंश के लिए ईश्वर-प्रेषित एक अभिशाप है, इसलिए वह, जहाँ तक सम्भव होता, लोगों से बचती और एकान्त में रहकर अपने दुःख को भुलाने का प्रयत्न करती थी वह चाहती थी कि लोग उसे भूल जायं, किन्तु कष्ट को कौन भूल सकता है अहर्निशि उसके कारण उसके माता-पिता चिन्तित रहते थे। उसकी माता तो उसको, अपने ही एक अङ्ग होने के कारण, एक व्यक्तिगत कलंक समझती

और उससे घृणा करती थी, किन्तु विमला के पिता जगदीश अपनी इस पुत्री अन्य पुत्रियों से अधिक चाहते थे और प्यार करते थे।

१. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।

२. उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिए।

३. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिए।

४. विमला अपने आपको एक ईश्वर-प्रेषित अभिशाप क्यों समझती थी?

५. निरन्तर, शैशवावस्था, एकान्त और जगदीश शब्दों में सन्धि-विच्छेद करिए।

(१२)

जो भाव जिसे अच्छा लगता है, उसी से वह ईश्वर की अर्चना करता है। कोई ईश्वर को सखा, कोई स्वामी, कोई बालक समझता है और उसी भाव से उसकी उपासना करता है। यहाँ तक किसी-किसी ने शत्रु-भाव से भी उसकी भक्ति की है। इस दशा में यदि गोपियों ने श्रीकृष्ण को पति-भाव से भजा तो उन पर कलङ्क का आरोप क्यों? या तो कृष्ण को साधारण मनुष्य समझिए या गोपियों पर वैसा आरोप करना छोड़िए। दोनों बातें साथ-साथ नहीं हो सकतीं। यदि श्रीकृष्ण परमात्मा थे और गोपियों ने उन्हें पति-भाव से ग्रहण किया तो वे सर्वथा निर्दोष ही नहीं, मंगल-मूर्ति समझी जाने योग्य और समस्त संसार की दृष्टि में पूजनीय हो चुकीं। आप श्रीमद्भागवत को सरसरी दृष्टि से ही पढ़िए। आप देखेंगे कि गोपियों ने अपने इष्टदेव को जहाँ प्रिय, प्रियतम, अङ्ग-सखा इत्यादि शब्दों से संबोधन किया है, वहाँ उन्हें वे बराबर ईश्वर, परमेश्वर और परमात्मा भी कहती आई हैं। अतएव उनके प्रेम के सम्बन्ध में दुर्भावना के लिए बिल्कुल भी जगह नहीं है।

१. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक चुनिए।

२. गोपियों के ऊपर किस बात का आरोप लगाया गया था और क्या वह सच है?

३. श्रीकृष्ण साधारण मनुष्य थे या ईश्वरावतार? अपने विचार प्रकट करिए।

४. क्या शत्रु-भाव से भी भक्ति की जा सकती है? यदि कोई उदाहरण याद हो तो दीजिए।

५. वे कौन सी दो बातें है जो एक साथ नही हो सकतीं?

६. श्रीमद्भागवत क्या है? इस पर एक टिप्पणी लिखिए।

७. शत्रु-भाव, मंगल-मूर्ति, इष्टदेव, दुर्भावना और अङ्ग-सखा शब्दों में समास बताइए और विग्रह भी करिए।

(१३)

चिकित्सा-विज्ञान की नूतन खोजों ने, जो गत दस या बारह वर्षो में ही हुई हैं, भली प्रकार प्रमाणित कर दिया है कि मन और रोगों का विशेष सम्बन्ध है। मानसिक दशाओं का रोगोत्पत्ति पर विशेष प्रभाव पडता है। **मानसिक उद्विग्नता**, चिन्ताएं, परिस्थितियों का भय, ईर्ष्या आदि अनेक रोगों का कारण है। इन दशाओं का हृदय पर जो **तात्कालिक प्रभाव** पड़ता है वह तो अति प्राचीन काल से मालूम था। क्रोध, भय, घृणा, शीत आदि से हृदय की धड़कन का बढ़ना, नाड़ी का वेग से चलना, मुख का लाल हो जाना, माथे पर पसीना आ जाना—ये साधारण बातें तो सब को ज्ञात है। किन्तु वैज्ञानिक अनुसंधान ने प्रमाणित कर दिया है कि **पाचन के विकार**, आमाशय के व्रण, अँतड़ी की सूजन, अम्ल-पित्त, हृदय के रोग, यकृत के विकार, वक्त्र आदि के रोग, डायबिटीज तथा अन्य अनेक रोगों की उत्पत्ति का मूल कारण ये **मानसिक दशाएं** ही होती हैं। उनमें भी रक्तचाप की तो विशेष कर। अभी तक इस रोग के कारण का पता नही चला था, किन्तु अब संसार के सभी बड़े-बड़े विद्वान सहमत है कि यह रोग मानसिक कारणों से उत्पन्न होता है।

१. उपर्युक्त अवतरण में मोटे टाइप के वाक्यांशों की व्याख्या करिए।

२. मन और रोगों का क्या सम्बन्ध है? सहोदाहरण समझाइए।

३. मानसिक दशाएँ किन-किन रोगों की उत्पत्ति का मूल कारण बताई गई हैं?

४. 'रक्तचाप' किस बीमारी का नाम है? इसके सम्बन्ध में यदि आप कुछ जानते हों तो लिखिये।

५. उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक लिखिए।

६. प्रमाणित, मानसिक, तात्कालिक, वैज्ञानिक शब्दों के उन मूल शब्दों को लिखिए जिनसे ये शब्द बने हैं।

(१४)

जम्मू-काश्मीर राज्य के मध्य में राज्य की शीत कालीन राजधानी जम्मू नगर से पच्चीस मील उत्तर में हिमाचल प्रदेश को छूता हुआ भद्रवाह का अति सुन्दर प्रदेश है, जहाँ १४२४१ फुट की ऊँचाई पर श्वेत हिम-शिखरों द्वारा घिरी हुई वासक-कुण्ड नामक झील है। प्रत्येक तीसरे वर्ष रक्षा-बन्धन से दो सप्ताह पश्चात् अमावस्या को प्रदेश के सहस्रों पहाड़ी लोग इस झील के तट पर उत्सव मनाने के लिए एकत्र होते हैं। यह यात्रा वासक नाम की यात्रा कहलाती है। इन अवसर पर नृत्य तथा संगीत के रसिक एवं रंग-बिरंगे वस्त्रों के शौकीन इन भोले पहाड़ी लोगों के रीति-रिवाज देखने में बहुत आनन्द आता है। ये लोग गद्दी कहलाते हैं। देव-भूमि की उपमा जो इस भूमि को दी गई है, वह मिथ्या नहीं है। गगन-चुम्बी **हिम-शिखरों** की प्राकृतिक छटा और उत्तम लकड़ी से युक्त सघन बन, जो कि भद्रवाह के लिए धन का भण्डार है, इस प्रदेश की सुन्दरता में चार चाँद लगाते हैं। यहाँ असंख्य नदी नालों का दुग्ध-सदृश जल जो प्रस्तरों एवं चट्टानों के वक्ष को चीरता हुआ **मद-भरी** गति से आगे को निकल जाता है, गाते हुए झरने, पर्वतीय ढलानों पर चारों ओर विस्तृत सीढ़ियों की भाँति हरे-भरे खेत, प्रत्येक समय छाये रहने वाले सूर्य से आँख-मिचौनी खेलते उमड़ते-घुमड़ते बादल—ये सभी मिल मिल कर इस सुन्दर घाटी को और भी अधिक **मनमोहक** बना देते हैं। इसलिए संस्कृत में भद्रवाह को 'भद्रव-काशी' कहा गया है।

१. वासक यात्रा क्या है और कब की जाती है?
२. काश्मीर को देवभूमि की उपमा किस लिए दी जाती है?
३. भद्रवाह क्या है? संक्षेप में इसकी सुन्दरता का वर्णन करिए।
४. उपर्युक्त अवतरण का उपयुक्त शीर्षक लिखिए।
५. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिए।

६. हरे-भरे, देव-भूमि, असंख्य, दुग्ध-सदृश और मद-भरी शब्दों का सविग्रह समास लिखिए।

(१५)

कबीर मस्त-मौला थे। जो कुछ कहते थे, स्पष्ट कहते थे। जब मौज में आकर रूपक और अन्योक्तियों पर उतर आते थे तब वे जो कुछ कहते थे, **वह सनातन सत्य का शृंगार होता था**। उनकी कविता से कभी सनातन सत्य खंडित नहीं हुआ। वे जो कुछ कहते थे, अनुभव के आधार पर कहते थे। इसीलिए सभी रूपक सुलझे हुए और उक्तियाँ वेधने वाली होती थी। उनके राम जब उनके प्रिय होते हैं तो भी उनकी असीम सत्ता भुला नहीं दी जाती। उनके प्रेम में वह **गलदश्रु भावुकता** नहीं थी जो जरा सी आँच से ही पिघल जाय। उनका प्रेम ज्ञान, नीति और श्रद्धा द्वारा अनुगमित था। वियोग की बात भी वे उसी मौज से कह सकते थे जिस तरह संयोग की। उनका मन जिस प्रेम रूपी मदिरा से मतवाला था, वह ज्ञान के महुए और गुड़ से बनी थी। इसीलिए अन्ध-श्रद्धा, भावुकता और हिस्टीरिक प्रेमोन्माद का उसमें **एकान्त अभाव** था। भक्ति के अतिरेक में कभी उन्होंने अपने को पतित नहीं समझा। सिर से पैर तक वे मस्त मौला थे—बेपरवाह, दृढ़ और उग्र।

१. उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिए।

२. कबीर को मस्त-मौला और मौजी क्यों कहा गया है?

३. रूपक और अन्योक्ति से आप क्या समझते है? उदाहरणों द्वारा समझाइये।

४. कबीर के प्रेम में क्या विशेषता थी?

५. मोटे टाइप के स्थलों की व्याख्या करिए।

६. प्रेमोन्माद, गलदश्रु, अन्योक्ति शब्द का संधि विच्छेद करिए।

(१६)

स्त्री-पुरुष दोनों को अपने भाग्य-निर्धारण का समुचित एवं समान अवसर प्राप्त होना चाहिए। यदि एक बार भूल हो जाती है तो उसके सुधार का मौका दोनों को मिलना चाहिए। यद्यपि मानव समाज के बन्धनों में स्वयं ही

जकड़ा हुआ है, तथापि उसने स्त्री-जाति पर अत्यचार करने में भी कसर नहीं उठा रखी है। उसने त्याग और समर्पण की प्रतिमा देवियों को न केवल सन्देह तथा शंका की दृष्टि से देखा है, प्रत्युत उनके सतीत्व का अपहरण कर उन्हें अपनी हिंसक वृत्ति के कारण घर से अर्ध-चन्द्र भी दिया है। किन्तु पुरुष की कभी न बुझने वाली वासनाग्नि में हँसते-हँसते अपने जीवन को तिल-तिल जलाने वाली इन रमणियों को मनुष्य जाति ने क्या कभी दो बूंद आँसू पाने का भी अधिकारी समझा है ? नहीं, नहीं, कदापि नहीं। मनुष्य ने सीता और सावित्री के ऊँचे आदर्शों पर डटी रहने वाली नारियों को अबला बनाने की ठान ली है, किन्तु यदि स्त्रियाँ अपने शिशुओं को गोद में लेकर साहस से कह दे कि बर्बर पुरुषों ! तुमने हमारा नारीत्व, पत्नीत्व सब कुछ ले लिया, परन्तु आज हम तुम्हे इस अत्याचार का प्रतिफल विवाह-विच्छेद (तलाक) द्वारा देती है, तो स्त्री-जाति पर होने वाले अत्याचारों का नाटकीय अन्त पलक झाँपने से पहले ही हो जाए। इस प्रकार तलाक स्त्री का संकट-मोचन तथा पुरुष की मर्यादा-रक्षा का अमोघ अस्त्र है।

१. उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिये।

२. इस अवतरण के लिये उपयुक्त शीर्षक बताइए।

३. मोटे टाइप के स्थलों की व्याख्या करिये।

४. पुरुष ने स्त्री-जाति पर क्या-क्या अत्याचार किये है ?

५. क्या तलाक से वास्तव में स्त्री का संकटमोचन हो सकता है ?

६. क्या स्त्रियाँ वास्तव में त्याग और समर्पण की प्रतिमा हैं ?

७. भाग्य-निर्धारण, अर्ध-चन्द्र, अबला, वासनाग्नि और संकटमोचन शब्दों का सविग्रह समास लिखिए।

(१७)

योरोप की सामाजिक तथा आर्थिक अवस्था से भारतवर्ष की सामाजिक तथा आर्थिक अवस्था में आकाश-पाताल का अन्तर है। हमारा भारतवर्ष भूमण्डल के मध्य ऊष्ण कटिबन्ध पर स्थित एक कृषि-प्रधान देश है। यहाँ की संस्कृति और प्रकृति मानव जाति में एक ऐसी मनोवृत्ति उत्पन्न करती है जो योरोप के निवासियों की मनोवृत्ति के सर्वथा प्रतिकूल है और उसके कारण भारतवासियों

में एक विशेष प्रकार के जीवन के दृष्टिकोण का निर्माण होता है। हमारे देश में परम्परा से यह शिक्षा चली आ रही है कि **समस्त भौतिक विभूतियाँ निःसार एव निरर्थक हैं,** अतएव सरल जीवन व्यतीत करके धर्म-चिन्तन में समय व्यतीत करना ही मनुष्य का प्रधान कर्त्तव्य है। इस शिक्षा के कारण मनुष्य के हृदय में एक विभिन्न प्रकार की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है और यही एक ऐसी बात है जिसके कारण **पूर्व और पश्चिम कभी नही मिल सकते।** विचारधारा और प्रवृत्ति के ही कारण जब कभी हमारे देशवासी पाश्चात्य सभ्यता तथा रीति नीति का कुछ अंश अस्वभाविक भाव से ग्रहण कर लेते हैं, तब उनसे सामंजस्य नही आता, **उनके उस पूर्व और पश्चिम सम्मिश्रण में तेल और जल का सा पार्थक्य स्पष्ट रूप से विद्यमान रहता है।** वास्तव में हमारे देशवासियों के लिए बहुत ही कठिन बात है कि **पाश्चात्य संस्कारों** को ग्रहण करके अपने जीवन में इस प्रकार मिला लें कि उनमें जरा भी कृत्रिमता न मालूम पड़े। हमारे नागरिक जीवन में धीरे-धीरे पाश्चात्य रीति-नीति की बहुत सी बातें सम्मिलित हो गई हैं तथापि ग्राम्य जीवन में यह बात नही है। देहातों का जीवन नागरिक जीवन से बहुत ही भिन्न प्रकार का है। आज भी देहातों में हमारी कुछ प्राचीन प्रथायें बहुत ही अधिक मात्रा में अपनी प्रभुता स्थापित किये हुए हैं। **ग्रामीण और नागरिक जीवन में इस प्रकार की भिन्नता का कारण है वहां की आर्थिक भिन्नता।**

१. उपर्युक्त अवतरण के लिए उपयुक्त शीर्षक बताइये।

२. भारत और योरोप की अवस्था और विचार पद्धति में क्या अन्तर है और क्यों ?

३. पूर्व और पश्चिम नहीं मिल सकते—इसका आशय स्पष्ट करिये और बताइये कि ऐसा क्यों नही हो सकता।

४. हमारे ग्रामीण और नागरिक जीवन में क्या भिन्नता है ?

५. भारतवासियों का दृष्टिकोण क्या है ?

६. मोटे टाईप के स्थलों की व्याख्या करिये।

७. प्रतिकूल, निरर्थक, व्यतीत, सम्मिश्रण और अस्वाभाविक शब्दों में उपसर्ग और मूल-शब्द-पृथक्-पृथक बताइये।

(१८)

अमेरिका के निवासी अपनी मौलिकता और **नूतन आविष्कार-प्रियता** के लिए समस्त संसार मे प्रसिद्ध है, परन्तु अनुकरण करने मे भी उनसे बढ़ कर कोई नही मिल सकेगा। फल यह होता है कि नये व्यवसाय या आविष्कार की **छीछालेदर**, उसका दुरुपयोग और पतन जितना अधिक वहाँ होता है उतना अन्यत्र नही होता। वहाँ संसार का छोटे-से-छोटा और बड़े से बड़ा व्यापार **नवीनता और मौलिकता के आकर्षक वस्त्रों से ढक दिया जाता है।** ज्योंही दूसरे लोग उसकी सफलता और लाभ को देखते है, त्योंही उस व्यापार मे एक दो नही सहस्रों मनुष्य कूद पड़ते है, वहाँ का व्यापारी जन-समुदाय समुद्र के ज्वार-भाटे की भाँति बड़े वेग से एक ही ओर दौड़ पड़ता है और अन्त मे **सब-के-सब किसी चट्टान से टकरा कर दिवालिये बन जाते है।** भारतीयो मे भी धीरे-धीरे यही प्रवृत्ति घर कर रही है। आज भारतवर्ष के कई नगरों मे वकीलो और डाक्टरो के व्यवसाय की प्रायः यही दशा है। कुछ लघु उद्योग के सम्बन्ध मे भी यही बात लागू है। किसी मनुष्य के बुद्धि-बल द्वारा ढूँढे गये किसी लाभकारी उद्योग मे इस प्रकार की भीड़ करने से उसमे होने वाली आय बहुत अधिक घट जाती है। यह आवश्यक नही कि **विश्वविजयी बनने के लिए कोई नेपोलियन किसी सिकन्दर की पुरानी तलवार को ढूँढता फिरे।**

१. उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिए।
२. मोटे टाइप के स्थलों का अर्थ स्पष्ट करिए।
३. अनुकरण करने से क्या हानि होती है ?
४. अमेरिका किस बात के लिए प्रसिद्ध है ?

(१९)

देश और धर्म, जाति और वर्ग आदि अनेक **संकुचित क्षेत्रों में सीमित एवं कलुषित संघर्षों में संलग्न मानवता,** यदि कहीं इन संकीर्णताओं के ऊपर उठ पाती है, यदि वह पारस्परिक वैमनस्य खोकर मनुष्य-मनुष्य के बीच एकता और आत्मीयता का विकास कर पाती है, तो वह कला के क्षेत्र मे। **कला मानव-मात्र की रचनात्मक-शक्ति की सौन्दर्यमय अभिव्यक्ति**

राम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नही। एक अनोखी मनो-

है। सभी मनुष्यों में समान शक्तियाँ हैं। एक मे जिस शक्ति का विकास होता है, दूसरे में वह कुंठित हो जा सकती है और इसके राजनैतिक, आर्थिक, नैतिक, सामाजिक आदि अनेक कारण हो सकते हैं। किन्तु मानव की किसी रचनात्मक शक्ति की अभिव्यक्ति मानव-मात्र के लिए आकर्षण रखती है। **उसकी उपयोगिता सार्वभौम होती है।** कारण यह है कि कला मनुष्य की उन भावनाओं के स्रोत से उत्पन्न होती है, जहाँ किसी प्रकार की मलीनता नही होती। **ये भावनाएं अथवा मनुष्य की मूलप्रवृत्तियां साधारणतः मानव मात्र में समान होती है,** स्वभावतः सबको वे प्रभावित भी करती हैं। कलाओं का प्रभाव मनुष्य के हृदय और मस्तिष्क दोनों पर पड़ता है। इसलिए कला का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। जो कला जितनी अधिक विकसित होती है, जिसमे उन्नत मानमिक शक्ति तथा भावनाओं का सुन्दर सम्मिश्रण होता है, वह अधिक व्यापक होती है और वही अधिक-से अधिक लोगो को प्रभावित करती है। **कला और जीवन का अभिन्न सम्बन्ध है।** किसी भी युग-विशेष की कला-कृतियो को देखकर उस युग के जीवन की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

१. कला की क्या परिभाषा है ?

२. कला किस प्रकार मनुष्य-मनुष्य के बीच एकता और आत्मीयता का विकास करती है।

३. 'कला मनुष्य की उन भावनाओं के स्रोत से उत्पन्न होती है, जहाँ किसी प्रकार की मलिनता नहीं होती'—इसका आशय स्पष्ट करिए।

४. 'जीवन और कला का अभिन्न सम्बन्ध है'। किस प्रकार ?

५. मोटे टाइप के स्थलों का अर्थ स्पष्ट करिए।

६. 'जो कला जितन अधिक..........प्रभावित करती है'—इस वाक्य का वाक्य-विश्लेषण करिए।

(२०)

काव्य का उद्देश्य हृदय-गत वृत्तियों का परिष्कार है और यह परिष्कार होता है रसमग्न होने से, मन के रमने से। अतः काव्य का स्वरूप ठहरता है भावों का विधान करके रसमग्न करने वाली रचना अथवा थोड़े शब्दों

रमणीयता। उसका चरम उद्देश्य ठहरता है वृत्तियों का शोधन। इस प्रकार काव्य या साहित्य समाज की दृष्टि से महत्वपूर्ण ठहरता है। उसे कोरे मनोरंजन की वस्तु मान कर समाज के लिए गौण या उपयोगी बतलाना हृदयहीन होने का परिचय देना तो है, ही बुद्धिहीन होने का भी डंका पीटना है। जैसे पश्चिम में समाजतत्व की आड़ में आज काव्य या साहित्य कोरी **भावुकता का उद्दीपक** मान कर समाज के लिए अनुपयोगी कहा जाने लगा है, वैसे ही पूर्व में भी धर्म की आड़ में काव्य का वर्जन किया गया था। पर इसके उद्देश्य पर ध्यान देते ही स्पष्ट हो जाता है कि जो धर्म का लक्ष्य है, वही काव्य का भी लक्ष्य है। वृत्तियों का परिष्कार लोक-दृष्टि से धर्म भी करता है और काव्य भी। अन्तर यही है कि पहले मे स्वर्गादि का लोभ तथा नरकादि का भय दिखला कर लक्ष्य की प्राप्ति की जाती है और **दूसरे में लोभ या भय साधन नहीं, वर्ण्य हैं।** फिर लोभ या भय भी तो काव्य के ही मूल तत्व हैं। अतः काव्य या साहित्य का पद धर्म, समाज-तत्व या राजनीति किसी स कम कैसे कहा जा सकता है।

१. उपर्युक्त गद्यांश पढ़कर निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :—

(क) काव्य का उद्देश्य क्या है ?
(ख) पश्चिम तथा पूर्व की काव्य सम्बन्धी धारणाओं में क्या अन्तर है ?
(ग) काव्य तथा धर्म में क्या सम्बन्ध है ?
(घ) काव्य का समाज के लिए क्या उपयोग है ?

२. उपर्युक्त अवतरण के मोटे टाइप के अंशों का अर्थ सरल भाषा में लिखिए।
३. उपर्युक्त गद्यांश का संक्षिप्त सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

(२१)

अब विज्ञान इने-गिने आदमियों तक ही **परिमित** नहीं है। यूनिवर्सिटी और विद्यापीठों में विज्ञान की शिक्षा पाने वालों की संख्या खासी बढ़ी है और बढ़ती जा रही है। अब किसी एक पीढ़ी में जितने वैज्ञानिक मौजूद होते हैं उतने पहले कई-कई पीढ़ियों में भी नहीं हुए। हर देश में कितने ही आदमी विज्ञान की धुन में लगे रहते हैं और इसके लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी करने को तैयार रहते हैं। फिर छापेखानों की सहायता से विज्ञान सम्बन्धी साहित्य घर-घर पहुँच रहा है। कोई आविष्कार बहुत समय तक रहस्य नहीं

आराम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नहीं। एक अनोखी मनो-

रहता। कोई संस्था, जाति या देश अपने आपको हमेशा के लिए उसका एकाधिकारी नहीं कह सकता। इससे जाहिर है कि भविष्य में विज्ञान के ह्रास की आशंका नहीं है। इसकी उन्नति ही होते रहने की आशा है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आदमी ने विज्ञान में बहुत प्रगति की है, फिर भी इसकी वृद्धि और प्रचार के लिए अभी अनन्त क्षेत्र पड़ा है। विज्ञान ने मनुष्य जाति को बहुत सुख और **सुविधाएँ** दी हैं, पर अभी उसे और भी बहुत काम करना है।

उपर्युक्त अवतरण को पढ़ कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :—

१. आज विज्ञान की क्या स्थिति है और मानव उसके लिए क्या करने को तैयार है ?
२. छापेखानों के कारण विज्ञान पर क्या प्रभाव पड़ा ?
३. इस अवतरण का सारांश लिखिए।
४. मोटे टाइप के अर्थ लिखिए।

(२२)

मारना सब जानते हैं, पर मरना जानने वाले सभी युगों में और सभी स्थानों पर बहुत थोड़ी संख्या में हुए हैं। दूसरों को मार कर मर जाना भी बहुत से जानते हैं, इसका भी कोई विशेष महत्व नहीं है, क्योंकि इसमें बदले का नशा होता है, **प्रतिहिंसा** की आग धधकती रहती है, शत्रु का खून पीने के लिए जोश चढ़ा रहता है, परन्तु स्वेच्छापूर्वक मरना वास्तव में सब से कठिन है। स्वेच्छापूर्वक मरने से दुखी होकर **आत्म-घात** करने का अभिप्राय नहीं है। आत्म हनन या आत्म-घात तो लौकिक दृष्टि से महान अपराध और पारलौकिक दृष्टि से महान पाप समझा जाता है और उसमें केवल आत्मा की दुर्बलता का ही पता लगता है। यहाँ मरने का तात्पर्य कुल-मर्यादा देश-रक्षा, विश्व-कल्याण आदि किसी अच्छे उद्देश्य को लेकर **आत्मोत्सर्ग** से है जिसको आत्मा की उदात्त **सात्विक** वृत्ति से प्रेरणा प्राप्त होती है। राजस्थान की वीर रमणियों ने समय समय पर **जौहर** की लपटों में हँसते-हँसते कूद कर जो आत्मोत्सर्ग किया है, वह इस प्रकार के मरने का एक सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। संसार के किसी भी कोने में कोई भी देश या प्रान्त ऐसा न होगा जहाँ इस प्रकार सहस्त्रों की संख्या में स्त्रियों ने एक साथ जौहर की धधकती ज्वाला में स्वेच्छापूर्वक प्रवेश कर आत्मोत्सर्ग किया हो।

उपर्युक्त अवतरण को पढ़ कर निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :—

१. स्वेच्छा पूर्वक मरना सबसे कठिन क्यों है ? यहाँ स्वेच्छा-पूर्वक मरने से क्या अभिप्राय है ?
२. आत्म-घात को क्यों बुरा बताया गया है ?
३. राजस्थान की वीर रमणियों के आत्मोत्सर्ग से क्या तात्पर्य है ।
४. जौहर क्या वस्तु है और कब किया जाता है ?
५. उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए ।
६. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ सरल भाषा में लिखिए ।

(२३)

मनुष्य सुख में हो वा दुःख में वह गाये बिना नहीं रह सकता । सुख में गाकर वह **उल्लसित** होता है और दुःख में गाकर वह दुःख को भूलता है । गान मानव-जीवन का भोजन है, मानव हृदय की स्वाभाविक तान है । मानव आदि काल से गाता चला आया है । हम देखते हैं कि हल चलाने वाले किसान, ऊँट वाले, गाड़ीवाले, भेड़-बकरी चराने वाले, कुँए पर काम करने वाले **बारिए** और कीलिए, ईंट और गारा ढोने वाले मजदूर सभी गान में मस्त होकर जीवन की कठोरता को भूल जाते हैं । गान उनके कार्य को तो सुगम बनाता ही है, उनके जीवन में **सरसता** का भी संचार करता है । आदिम मनुष्य-हृदय के इन्हीं गानों का नाम लोक-गीत है । मनुष्य के समस्त सुख-दुःख की कहानी इन लोक-गीतों में चित्रित है । लोक-जीवन की **माधुरी** और सच्चा **भाव-स्पन्दन** हमें लोक-गीत में ही मिल सकता है । लोक-गीत आदिकाल से चले आरहे हैं और अनन्त काल तक चलते रहेंगे । काल का प्रभाव इन्हें नष्ट नहीं कर सकता । ये अलिखित होते हुए भी अमर हैं । लोक-गीत लोक-जीवन के सच्चे चित्र हैं । लोक-जीवन में जब कभी कोई प्रबल उमंग उठ खड़ी होती है, तभी एक नवीन गीत की सृष्टि हो जाती है । कालान्तर में लोक-गीतों का **वाह्य रूप** परिवर्तित हो जाता है, भाषा का आवरण धीरे-धीरे बदल जाता है, पर भीतरी **प्राणतत्व** में कोई अन्तर नहीं आता ।

उपर्युक्त गद्यांश को पढ़ कर निम्नालिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :-

१. गान किस प्रकार मानव जीवन का भोजन है ?

२. मनुष्य गाये बिना क्यों नहीं रह सकता ?
३. लोक-गीत किसे कहते हैं ?
४. 'लोक-गीत लोक-जीवन का सच्चा चित्र है'—इसका आशय स्पष्ट करिए।
५. लोक-गीतों को अमर क्यों कहा गया है ?
६. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिए।

(२४)

लेखक के लिखने या अपने भाव प्रकट करने का ढंग ही उसकी शैली है। जैसे हम अपने परिचित मित्रों वा सम्बन्धियों की चाल को देख कर या आवाज सुनकर ही उन्हें पहचान लेते हैं, उसी प्रकार अपने परिचित लेखकों के वाक्यों वा छन्दों को सुनकर वा पढ़कर शीघ्र ही पहचान लेते हैं कि यह वाक्य वा छंद अमुक लेखक वा कवि का है। जैसे भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की भिन्न-भिन्न चालें और आवाजें होती हैं, उसी प्रकार प्रत्येक लेखक की शैली भी भिन्न-भिन्न होती है। वास्तव में शैली की कोई निश्चित संख्या नहीं है। जितने लेखक उतनी ही शैलियाँ। जिस प्रकार एक व्यक्ति के चलने वा कहने का ढंग दूसरे से नहीं मिलता, उसी प्रकार एक लेखक के भाव, विचार, अनुभव, कल्पना, आदर्श आदि-आदि दूसरे लेखक से मेल नहीं खाते। जब प्रत्येक लेखक का व्यक्तित्व भिन्न है तो प्रत्येक के लिखने का ढँग भी भिन्न ही होगा। यही कारण है कि एक लेखक के भावों तथा विचारों को प्रकट करने की **प्रणाली** मे दूसरे लेखक से नवीनता वा भिन्नता पाई जाती है और वही उसकी **शैलीगत** विशेषता है। वास्तव मे शैली वह साधन है जिसके द्वारा कोई कलाकार अपने व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण करने में सफल होता है। कला की **प्रेषणीयता** शैली पर ही निर्भर है। कोई सुन्दर भाव वा विचार सुन्दर ढंग से कहे जाने पर ही श्रोता वा पाठक को **प्रभावित** करता है। इसीलिए कहते है कि शैली ही व्यक्ति है।

उपर्युक्त अवतरण को पढ़कर निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :—

१. शैली किसे कहते हैं ?
२. भिन्न-भिन्न लेखकों की भिन्न-भिन्न शैलियाँ क्यों होती हैं ?
३. कला की प्रेषणीयता से क्या अभिप्राय है और उसका शैली से क्या सम्बन्ध है ?
४. 'शैली ही व्यक्ति है'—इसका आशय स्पष्ट करिए।
५. मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ लिखिए।

अध्यात्मिकता एक ऐसी शक्ति है जो मनुष्य में नैतिकता की भावना जागृत रखती है। भौतिकता का वाह्यरूप अत्यधिक आकर्षक है, उसके सामने साधारण जनता के हृदय से आध्यात्मिकता एक दम लुप्त हो गई है। परिणाम स्वरूप आज का मानव इस संसार को ही स्वर्ग समझ बैठा है। येन-केन-प्रकारेण धन-संग्रह और सांसारिक सुखों का उपभोग ही उसके जीवन का उद्देश्य हो गया है। त्याग का स्थान लोलुपता और सन्तोष का स्थान तृष्णा ने ले लिया है। सुरसा के मुख के भांति यह तृष्णा प्रति-दिन बढ़ती है। निर्धनों की तो बात ही क्या, करोड़ों रुपये के अधिपतियों को भी वास्तविक शान्ति उपलब्ध नहीं। ज्यों-ज्यों संसार शान्ति के लिए प्रयत्नशील हो रहा है, त्यों-त्यों वह उससे कोसों दूर भागती जा रही है। वास्तविक बात तो यह है कि भौतिकता के पुजारी के लिए सुख और शान्ति सदा स्वप्न ही बने रहेंगे।

उपर्युक्त गद्य-भाग को ध्यान से पढ़ कर निम्नलिखित प्रश्नो के उत्तर दीजिए :—

(क) आज का मानव संसार को ही स्वर्ग क्यों समझता है ?

(ख) आज जीवन का उद्देश्य क्या हैं ?

(ग) प्रस्तुत अवतरण के मोटे टाइप वाले अंकों का अर्थ सरल भाषा में समझाइए।

(घ) उक्त गद्यांश का कोई सुन्दर शीर्षक चुनिए।

(पद्य–अवतरण)

(१)

"इस ओर देखो, रक्त की यह कीच कैसी मच रही।
है पट रही खंडित हुए बहु रुण्ड–मुण्डों से मही।
कर-पद असंख्य कटे पड़े, शस्त्रादि फैले हैं तथा,
रणस्थली ही मृत्यु की एकत्र प्रकटी हो यथा।
दुर्योधनानुज हैं पड़े ये भीम के मारे हुए,
कम्बोज-नृप वे सात्यकी के हाथ से हारे हुए।
यद्यपि निहत होकर पड़े ये वीर अब निःशक्त है,
पर कौरवों का ताज अब भी कर रहे ये व्यक्त हैं।

आराम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नहीं। एक अनोखी मनो-

बल-विभव में कुरुराज सचमुच दूसरा सुरराज है,
पाई विजय प्रारब्ध से ही पार्थ ! तुमने आज है" ।
श्री कृष्ण के प्रति वचन तब बोले **धनंजय** भक्ति से—
"क्या कार्य कर सकता हरे ! मैं आप अपनी शक्ति से ?
है सब तुम्हारी ही कृपा, हूं नाम का ही वीर मैं,
भूला नही अब तक तुम्हारा वह विराट शरीर मैं" ।

१. उपर्युक्त अवतरण में किस प्रसिद्ध युद्ध की चर्चा है ? यह युद्ध किन-किन के बीच हुआ था ?

२. युद्ध-भूमि मे पड़ी हुई किन-किन वस्तुओं का इस अवतरण में उल्लेख किया गया है ?

३. कुरुराज का वास्तविक नाम क्या था ? किस कारण उसकी तुलना सुरराज से की गई है ?

४. श्री कृष्ण के इस कथन—'पाई विजय प्रारब्ध से ही पार्थ । तुमने आज है' का अर्जुन ने क्या उत्तर दिया ?

५. उपर्युक्त अवतरण में मोटे टाईप के शब्दो का अर्थ लिखिए ।

(२)

रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ, जाने दे उनको स्वर्ग धीर !
पर फिरा हमें गांडीव, गदा, लौटा दे अर्जुन, भीम वीर !
कह दे शंकर से आज करें, वे प्रलय-नृत्य फिर एक बार ।
सारे भारत में गूँज उठे 'हर-हर-बम' का फिर महोच्चार ।
ले अँगड़ाई उठ, हिले धरा, कर निज विराट स्वर में निनाद ।
तू शैल-राट् ! हुंकार भरे, फट जाय कुहा, भागे प्रमाद !
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद रे तपी, आज तप का न काल,
नवयुग शंखध्वनि बजा रहा, तू जाग जाग, मेरे विशाल ।
मेरी जननी के हिम-किरीट ! मेरे भारत के दिव्य भाल ।
जागो नगपति ! जागो विशाल !

१. उपर्युक्त अवतरण मे कौन किससे कह रहा है ?

२. उपर्युक्त अवतरण का आशय अपने शब्दो में लिखिए ।

३. प्रथम दो पंक्तियों में युधिष्ठिर को स्वर्ग जाने देने एवं वीर अर्जुन और भीम को लौटा देने के लिए क्यों कहा गया है ?

४. मोटे टाईप के शब्दों का अर्थ स्पष्ट करिए।

(३)

कृष्ण :—

> भामिनि ! देहुँ द्विजे सब लोक, तजौ हठ, मेरे यहै मन भाई।
> लोक चतुर्दश की सुख-सम्पत्ति लागति विप्र बिना दुखदाई॥
> जाय बसौं उनके गृह में करिहौं द्विज-दम्पत्ति की सेवकाई।
> तो मन माँहि रुचै न रुचै सो, रुचै हमैं तो वह ठौर सदाई॥

रुक्मिणी :—

> नेकु न कानि करो द्विज ने नृग से नृप को **नरकी** करि डारो।
> साप दियो पुनि शंकर को अब लौं मख तैं सिव-भाग बिसारो॥
> विप्रन फेरि विजै-जय को तुम देखत घोर कुयोनि में डारो।
> सो तुम जानि सबै गुन-दोष करौ फिरिहू द्विज को **पतियारो**॥

१. उपर्युक्त अवतरण में श्री कृष्ण ने रुक्मिणी से क्या कहा और रुक्मिणी ने श्री कृष्ण को उसका क्या उत्तर दिया ?

२. उपर्युक्त अवतरण किस प्रसंग के है ?

६. मोटे टाईप के शब्दों का अर्थ लिखिए।

(४)

> सिन्धु-सा विस्तृत और अथाह, एक **निर्वासित का उत्साह**।
> दे रही अभी दिखाई भग्न, मग्न रत्नाकर में वह रहा॥
> धर्म का ले-ले कर लो नाम, हुआ करती बलि, कर दो बन्द।
> हमी ने दिया शान्ति-संदेश, सुखी होकर देकर सानन्द॥
> विजय केवल लोहे की नहीं, धर्म की रही धरा पर धूम।
> **भिक्षु होकर रहते सम्राट्**, दया दिखलाते घर-घर घूम॥
> यवन को दिया दया का दान, चीन को मिली धर्म की दृष्टि।
> मिला था स्वर्ण-भूमि को रत्न, शील की सिंहल को भी सृष्टि॥

राम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नहीं। एक अनोखी मनो-

१. उपर्युक्त अवतरण में वर्णन किये गये भावों का सारांश सरल हिन्दी में लिखिए।
२. उपर्युक्त पद्यांश में मोटे टाईप के अंशों की व्याख्या करते हुए उन पर संक्षिप्त टिप्पणी भी लिखिए।

(५)

चाँदनी का शृंगार समेट अध-खुली आँखों की यह कोर,
लुटा अपना यौवन अनमोल, ताकती किस **अतीत** की ओर ?
जानते हो यह अभिनव प्यार,
किसी दिन होगा कारागार ?
कौन वह है **सम्मोहन** राग, खींच लाया तुमको सुकुमार ?
तुम्हें भेजा जिसने इस देश, कौन वह है **निष्ठुर** कर्त्तार ?
हँसो, पहनों, काँटों के हार,
मधुर भोलेपन के संसार।

१. उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए।
२. मोटे टाईप के शब्दों का अर्थ स्पष्ट करिए।

(६)

नेही महा, ब्रज-भाषा-प्रवीन 'औ' सुन्दरताई के भेद कौ जानैं।
जोग वियोग की रीति में **कोविद**, भावना-भेद-स्वरूप को ठानैं ।।
चाह के रंग में भोज्यो हियो बिछुरे मिले प्रीतम सांति न मानै।
भाषा-प्रवीन, **सुछन्द** सदा रहै सो 'घन' जी के कवित्त बखानैं ।।

१. घनानन्द' कवि के कवित्तों को समझाने के लिए किस प्रकार की योग्यता की आवश्यकता है—उपर्युक्त पद्यांश के आधार पर बताइए ?
२. मोटे टाईप के शब्दों के अर्थ लिखिए।

(७)

कवि अनूठे कलाम के बल से
हैं बड़ा ही **कमाल** कर देते।
बेधने के लिए कलेजों को

हैं कलेजा निकाल धर देते ॥१॥
है निराली निपट अछूती जो
है वही सूझ काम मे लाते।
कम नही है कमाल कवियों में
है कलेजा निकाल दिखलाते ॥२॥
भेद उसने कौन से खोले नही
कौन सी बातें नही उसने कही।
दिल नहीं उसने टटोले कौन से
घुस गया कवि किस कलेजे मे नही ॥३॥

१. उपर्युक्त पद्यांशों का भावार्थ लिखिए।
२. मोटे टाईप की पंक्तियों का अर्थ स्पष्ट करिए।

(८)

कहा रसखानि सुख सम्पति सुमार कहा,
कहा तन जोगी है लगाये तन छार को
कहा साधे **पञ्चानल** कहा सोये बीच जल,
कहा जीति लाए राज सिन्धु आर-पार को
जप बार बार तप **संजम** बयार व्रत,
तीरथ हजार अरे **बुझत लबार** को
कीन्हों नहीं प्यार नही सेयो दरबार चित्त—
चाह्यो न **निहार** जो पै नन्द के कुमार को ॥

१. उपर्युक्त छन्द किस कवि का बनाया हुआ है ?
२. उपर्युक्त छन्द में कवि ने जो कुछ कहा है, उसे अपने शब्दों में लिखिए।
३. मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए।

(९)

भैंसा गाड़ी पर लदा हुआ
जा रहा चला मानव **जर्जर**।
है उसे चुकाना सूद कर्ज
है उसे चुकाना अपना कर

आराम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नहीं। एक अनोखी मनो-

जितना खाली है उसका घर
उतना खाली उसका अन्तर।
नीचे जलने वाली पृथ्वी
ऊपर जलने वाला अम्बर
औ कठिन भूख की जलन लिए
नर बैठा है बन कर पत्थर।
पीछे है पशुता का खंडहर
दानवता का सामने नगर
मानव का कृश कंकाल लिए
चरमर-चरमर चूँ चरर-मरर
जा रही चली भैंसा-गाड़ी

१. उपर्युक्त अवतरण मे किसकी किस दशा का क्या वर्णन किया गया है ? अपने शब्दों मे लिखिए।
२. मोटे टाइप के शब्दो के अर्थ लिखिए।

(१०)

क्रान्ति-धात्रि ! कविते ! जग, उठ, आडम्बर में आग लगा दे।
पतन, पाप, पाखण्ड जले, जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे।
विद्युत् की इस चकाचौंध में देख, दीप की लौ रोती है,
अरी हृदय को थाम, महल के लिए झोंपड़ी बलि होती है॥
देख, कलेजा फाड़ कृषक दे रहे हृदय-शोणित की धारें,
और उठी जाती उन पर ही वैभव की ऊंची दीवारें।
धन-पिशाच के कृषक मेध में नाच रही पशुता मतवाली,
आगन्तुक पीते जाते हैं दीनों के शोणित की प्याली॥

१. उपर्युक्त अवतरण के भावों को अपने शब्दों में लिखिए।
२. इस कविता को आप किस 'वाद' के अन्तर्गत रख सकते है ?
३. मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए।

(११)

जिन ढूँढा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठि।
मैं बपुरा बूड़न डरा, रहा किनारे बैठि ॥१॥
तीर तुपक से जो लड़ै, सो तो सूर न होय।
माया तजि भगती करै, सूर कहावै सोय ॥२॥
लगी लगन छूटै नहीं, जीभ चोंच जरि जाय।
मीठा कहा अंगार मे जाहि चकोर चवाय ॥३॥
पानी केरा बुदबुदा अस मानुष की जाति।
देखत ही छिप जायगी ज्यों तारा परभात ॥४॥

१. उपर्युक्त दोहों का भाव अपने शब्दों में लिखिए।
२. मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए।

(१२)

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जिन तनु दिये ताहि बिसरायो, ऐसो नोन-हरामी ॥
भरि-भरि उदर विषय को धायों जैसे सूकर ग्रामी।
हरिजन छांड़ि हरि विमुखन की निसदिन करत गुलामी ॥
पापी कौन बड़ो है मोतें, सब पतितन में नामी।
'सूर' पतिति को ठौर कहाँ है, सुनिये श्रीपति स्वामी ॥

१. उपर्युक्त पद का सरलार्थ करिए।
२. मोटे टाइप के शब्दों पर टिप्पणी लिखिए।

(१३)

पंचवटी की छाया में है, सुन्दर पर्ण-कुटीर बना,
उसके सम्मुख स्वच्छ शिला पर धीर, वीर, निर्भीक-मना,
जाग रहा यह कौन धनुर्धर, जब कि भुवन-भर सोता है?
भोगी कुसुमायुध योगी-सा बना दृष्टि-गत होता है ॥
किस व्रत में है व्रती वीर यह निद्रा का यों त्याग किये?
राज-भोग के योग्य विपिन में बैठा आज विराग लिए?

म न छोड़ा ता हमारा दशा सुधरन का नहा । एक अनाखा मना-

बना हुआ है **प्रहरी** जिसका उस कुटीर में क्या धन है,
जिसकी रक्षा में रत इसका, तन है, मन है, जीवन है ?

(१) उपर्युक्त अवतरण में किसका किस समय का वर्णन किया गया है ?
(२) मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए ।

(१४)

वह राम-भक्ति का भूखा था, पर अघा गया **श्रीमन्तों** को ।
पय पुण्य प्रेम का पिला गया, नर-नारी, सन्त-असन्तों को ।।
भर गया सभी **आतुर उर** में कुछ भाव गजब का नया-नया ।
कागज के पन्नों को तुलसी तुलसी-दल जैसा बना गया ।।
था भक्त, सुधारक था, कवि था, ज्ञानी था, परहितकारी था ।।
माता हिन्दी के मन्दिर का वह एक **अनन्य पुजारी** था ।।
मृदु, 'मानस' का सर्वज्ञ सुलभ **अक्षय प्रवाह** वह बहा गया ।।
कागज के पन्नों को तुलसी तुलसी-दल जैसा बना गया ।।

(१) उपर्युक्त पद्य-अवतरण में तुलसीदास जी के जिन-जिन गुणों वा विशेषताओं का उल्लेख किया गया है, उन्हें अपने शब्दो में लिखिए ।
(२) मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए ।

(१५)

बारे-बड़े उमड़े सब जैवे को, हौं न तुम्है पठवौं, बलिहारी ।
मेरे तो जीवनु 'देव' यही धनु, या ब्रज पायौ मैं भीख तिहारी ।।
जाने न रीति **अधाइन** की, नित गाइन में बन-भूमि-विहारी ।
याहि कोऊ पहिचाने कहा, कछू जाने कहा मेरो कुंज-बिहारी ।।१।।
जादव-बृद्ध जो लेन पठाये, ततौ धनु **गोधनु** लै सब जैये ।
या लरिकाहि कहा करि है नृप ? गोप-समूह सबै संग हैये ।
तौ लगि जीवन मो ब्रज जौ लगि खेलत साथ लिए बल भैये ।
सर्वसु कंसु हरौ न अबै किन, आँखिन ओट करौ न कन्हैये ।

(१) उपर्युक्त पद्यांशों का सरांश लिखिए ।
(२) यशोदा ने कृष्ण को कंस के पास न भेजने के लिए क्या-क्या दलीलें दी हैं ? अपने शब्दों में लिखिए ।
(३) मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए ।

(१६)

प्रीति करि काहू सुख न लह्यो।
प्रीति पतंग करी दीपक सो, आपै प्रान दह्यो।
अलि-सुत प्रीति करी जल-सुत सो, संपुट माँझ गह्यो।
सारंग प्रीति करी जु नाद सो, सनमुख बान सह्यो।
हम जो प्रीति करी माधव सों, चलत न कछू कह्यो।
'सूरदास' प्रभु बिन दुख दूनो, नैननि नीर बह्यो॥

(१) उपर्युक्त पद मे सूरदास जी ने प्रेम की किस विशेषता का वर्णन गोपियों द्वारा कराया है?
(२) उपर्युक्त पद का आशय अपने शब्दों में लिखिए।
(३) मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए।

(१७)

कर लै सूँघि सराहि कै, सबै रहे गहि मौन।
गंधी अन्ध, गुलाब की गँवई गाहक कौन॥१॥
को कहि सकै बड़ेनु सों, लखे बड़ी हू भूल।
दीन्हें दई गुलाव की, इन डारिन वे फूल॥२॥
जप माला छापा तिलक, सरै न ऐकौ काम।
मन काँचै, नाचै वृथा, साँचे राचे राम॥३॥
नेहु न, नैननि को कछू, उपजी बड़ी बलाइ।
नीर-भरे नित प्रति रहैं, तऊ न प्यास बुझाइ॥४॥

(१) उपर्युक्त दोहों का पृथक्-पृथक् भावार्थ लिखिऐ।
(२) मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए।

(१८)

आते जो यहाँ है ब्रजभूमि की छटा वे देख,
नेक न अघाते होते मोद-मद-माते हैं।
जिस ओर जाते उस ओर मन-भाये दृश्य;
लोचन लुभाते और चित्त को चुराते हैं।

पलभर को वे अपने को भूल जाते सदा,
सुखद अतीत सुखसिन्धु में समाते हैं।
जान पड़ता है उन्हें आज भी कन्हैया यहाँ,
मैया-मैया टेरते हैं, गैया को चराते हैं।

(१) उपर्युक्त पद्यांश का भावार्थ लिखिए।
(२). मोटे टाइप के अंशों का अर्थ समझाइए।

(१६)

भूल कर भी कहीं नहीं लगता
अपने जी को जो हम लगाते हैं।
जलता रहता है जल नहीं जाता
यों किसी का भी जी जलाते हैं।
बेबसी में पड़े तड़फते हैं
हम कुछ ऐसी ही चोट खाते हैं।
जो हमारा जला ही करता है
आँसू कितना ही हम बहाते हैं।
मर मिटेंगे, तुम्हें न भूलेंगे
नेम अपना सभी निभाते हैं।
हम मरेंगे तो क्या मिलेगा तुम्हें
जी-जलों को भी यों सताते हैं?

(१) उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए।
(२) उपर्युक्त अवतरण में कवि ने किस मुहावरे का बार-बार प्रयोग किया है?

(२०)

तुम होगे सुकरात, जहर के प्याले होंगे।
हाथों में हथकड़ी पदों में छाले होंगे।
ईसा-से तुम और जान के लाले होंगे।
होगे तुम निश्चेष्ट, डस रहे काले होंगे।
होना मत व्याकुल कहीं, इस भव-जनित विषाद से।
अपने आग्रह पर अटल रहना बस प्रहलाद से॥

(१) उपर्युक्त अवतरण में कवि ने क्या प्रेरणा दी है ?
(२) सुकरात अथवा ईसा पर एक टिप्पणी लिखिए ।
(३) मोटे टाइप के शब्दों का अर्थ स्पष्ट करिए ।

(२१)

दानी भये नये, मांगत दान हो, जानि है कंस तो बन्धन जैहौ ।
टूट छरा वछरादिक गोधन जो धन है मो सबै धन देहौं ॥
रोकत हो वन मे रसखानि चलावत हाथ, घनो दुख पैहो ।
जैहै जो भूषन काहू तिया को, तो मोल छला के लला न बिकै हो ॥

१. उपर्युक्त पद्य का आशय स्पष्ट करिए ।
२. मोटे टाईप के शब्दो का अर्थ लिखिए ।

(२२)

निर्भय स्वागत करो मृत्यु का,
मृत्यु एक है विश्राम-स्थल ।
जीव जहाँ से फिर चलता है,
धारण कर नव जीवन सम्बल ॥
मृत्यु एक सरिता है जिसमे,
श्रम से कातर जीव नहा कर ॥
फिर नूतन धारण करता है,
काया रूपी वस्त्र वहा कर ॥

१. उपर्युक्त अवतरण का संक्षेप मे आशय स्पष्ट करिए ।
२. उपर्युक्त अवतरण मे किस बात का क्या सन्देश दिया गया है ?
३. मोटे टाइप के शब्दों के अर्थ लिखिए ।

(२३)

यह कांप उठे संसार कही, अँगुली यदि एक उठा दे तू,
गिर जायें गगन के तारे भी, आँखें यदि लाल दिखा दे तू ।
पर्वत भी चूर-चूर होवे, अपना यदि ध्यान जमा दे तू,
क्यों निष्क्रिय होकर खोता है, जीवन अनमोल बता दे तू ।

वेदान्त तुझे कह रहा ब्रह्म, कह जग-वितान अपने को तू,
ए नौ जवान, सुन अमर गान, पहिचान आप अपने को तू ।।

१. उपर्युक्त अवतरण में किसने किसको क्या चेतावनी दी है ?
२. मोटे टाईप के शब्दों के अर्थ लिखिए ।

(२४)

पूर्व चलने के, वटोही, बाट की पहचान कर ले ।
पुस्तकों में है नहीं छापी गई इसकी कहानी,
हाल इसका ज्ञात होता है न औरों की जबानी,
अनगिनत राही गये इस राह से, उनका पता क्या,
पर गये कुछ लोग इस पर छोड़ पैरों की निशानी,
यह निशानी मूक होकर भी बहुत कुछ बोलती है,
खोल इसका अर्थ, पंथी, पंथ का अनुमान कर ले,
पूर्व चलने के, वटोही, बाट की पहचान कर ले ।

१. उपर्युक्त अवतरण में कवि ने किस पथ की ओर संकेत किया है ?
२. उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए ।

(२५)

रण-बीच चौकड़ी भर-भर कर चेतक बन गया निराला था ।
राणा प्रताप के घोड़े से पड़ गया हवा को पाला था ।।
गिरता न कभी चेतक-तन पर राणा प्रताप का कोड़ा था ।
वह दौड़ रहा अरि-मस्तक पर या आसमान पर घोड़ा था ।।
जो तनिक हवा से बाग हिली लेकर सवार उड़ जाता था ।
राणा की पुतली फिरी नहीं तब तक चेतक मुड़ जाता था ।।
कौशल दिखलाय चालों में, उड़ गया भयानक भालों में ।
निर्भीक गया वह ढालों में, सरपट दौड़ा कर वालों में ।।

१. उपर्युक्त अवतरण में किस घोड़े के सम्बन्ध में क्या कहा गया है ? अपने शब्दों में लिखिए ।
२. मोटे टाइप के अर्थ लिखिए ।

सातवां अध्याय

पत्र-लेखन

पत्र रचना भी एक कला है। अन्य कलाओं की भांति इसमें भी कलाकार का व्यक्तित्व पूर्णरूप से प्रकट होना चाहिए। अतः पत्र-लेखक को चाहिए कि वह अपने विचारों को लिपिवद्ध करने से पूर्व, भले प्रकार एकत्र कर ले और उन्हें पत्र में इस ढंग से व्यक्त करे कि पाठक के हृदय पर उनका चित्र-सा अंकित हो जाय। पढ़े-लिखे और अनपढ़ सबको अपने जीवन में पत्र-व्यवहार की आवश्यक पड़ती हैं। जिस व्यक्ति के प्रति कुछ कहना हो, यदि वह सम्मुख ही उपस्थित हो, तो परस्पर संभाषण वा बातचीत से ही काम चल जाता है, परन्तु उसकी अनुपस्थिति में अपने विचारों को उस तक पहुँचाने का एक मात्र साधन पत्र ही है।

पत्र की परिभाषा—पत्र उस सरल और संक्षिप्त रचना को कहते हैं जिसमें मनुष्य अपने व्यक्तिगत विचारों को लिखित रूप में दूसरों पर प्रकट करता है वा दूसरों के पास भेजता है।

पत्र के प्रकार—पत्र कई प्रकार के होते हैं और प्रत्येक के लिखने की पद्धति भी भिन्न भिन्न होती है। सुभीते के लिए हम पत्र के निम्नांकित प्रकार कर सकते हैं:—

१. व्यक्तिगत वा निजि पत्र—जो पत्र अपने किसी सम्बन्धी (माता-पिता आदि), मित्र, गुरु और विशिष्ट परिचित व्यक्ति को लिखा जाय।

२. सरकारी वा प्रार्थना पत्र—जो उच्च अधिकारी को लिखा जाय और जिसमें नोकरी, अवकाश, वा अन्य किसी वात के लिए प्रार्थना की गई हो।

३. अर्ध-सरकारी पत्र—जो पत्र जनता वा व्यक्ति विशेष द्वारा किसी अधिकारी को लिखा जाय जिसमें कोई शिकायत हो वा किसी अन्य वात के लिए उससे प्रार्थना की गई हो।

४ व्यावसायिक वा व्यापारिक पत्र—जो लेन-देन क्रय-विक्रय आदि के सम्बन्ध में किसी फर्म वा व्यापारी को लिखा जाय।

५. विविध पत्र--निमंत्रण-पत्र, सूचना पत्र, विज्ञापन आदि-आदि।

पत्र के अङ्ग—प्रत्येक पत्र में निम्नांकित छः बातें अवश्य किसी न किसी रूप में लिखी जानी चाहिए।

१. पत्र भेजने वाले का पता।
२. पत्र लिखने की तिथि।
३. प्रशस्ति वा सम्बोधन।
४. समाचार वा मुख्य विषय।
५. समाप्ति वा निवेदन।
६. पत्र प्राप्त करने वाले का पता।

घरेलू वा निजी पत्रों में निम्नलिखित बातें निम्न प्रकार लिखी जानी चाहिए :—

१. मांगलिक शब्द—पत्र के सिरे पर बीचों-बीच ओ३म्, श्रीः, श्रीहरिः, श्री गणेशाय नमः, आदि लिखा जाय। आजकल लोग इस ओर कम ध्यान देते हैं।

२. प्रेषक का पता तथा तिथि--पत्र के सिरे पर दाहिनी ओर भेजने वाला अपना पूरा पता तथा उससे नीचे तिथि लिखे।

३. संबोधन—पत्र के बाईं ओर किनारे पर पूज्यपाद, प्रियवर, पूजनीय, प्रिय मित्र आदि कोई आदर सूचक वा स्नेह-सूचक शब्द लिखकर व्यक्ति-विशेष का नाम यदि आवश्यक हो तो लिखा जाय।

४. अभिवादन—संबोधन के नीचे की पंक्ति में थोड़ा सा हट कर प्रणाम, नमस्कार, नमस्ते, जयहिंद, प्रसन्न रहो, चिरायु हो आदि लिखा जाय।

५. समाचार वा मुख्य विषय--अभिवादन के नीचे की पंक्ति से पत्र का मुख्य विषय लिखा जाय।

६. निवेदन—पत्र के मुख्य विषय के समाप्त होने पर उससे नीचे की पंक्ति में दाहिनी ओर 'आपका आज्ञाकारी', भवदीय, विश्वासप्राप्त, आपका मित्र, तुम्हारा पिता' आदि लिखा जाय और ठीक उसके नीचे अपना नाम।

७. पता—लिफाफे वा कार्ड पर पता लिखा जाय जहाँ कि पत्र भेजना है।

सूचना (१)—प्रार्थना-पत्रों में प्रार्थी को चाहिए कि 'मांगलिक शब्द' न लिखे, अपना पता पत्र के ऊपर के सिरे पर दाहिनी ओर न लिख कर पत्र समाप्त होने पर निवेदन के नीचे लिखे। इसी प्रकार तिथि भी पत्र के सिरे पर न लिख कर निवेदन के बांई ओर जो स्थान रिक्त रहे, वहाँ लिखे।

सूचना (२)—व्यावसायिक पत्रों में प्रेषक अपना पता लिखने के साथ-साथ, जहाँ पत्र भेजना है, वहाँ का पता भी पत्र के सिरे पर ही बांई ओर लिख देता है।

नमूना

(१) श्री गणेशाय नमः

(२) शान्ति-सदन,
जौहरी बाजार,
जयपुर।

(३) प्रिय रमेश, दि० १५ सितम्बर, सन् १९६२ ई०

(४) प्रसन्न रहो।

(५) आज तुम्हारा पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई...पत्र का उत्तर शीघ्र देना, भूल न करना।

(६) तुम्हारा शुभ-चिन्तक
सुरेश

(७) पता (लिफाफे पर)

टिकिट

श्री रमेशचन्द्र जैन,
कक्षा ग्यारही बी (कला)
जैन सुबोध इन्टर कालेज,
जयपुर,
(राजस्थान)

किसको क्या लिखा जाय ?

१. अपने से बड़े सम्बन्धियों को

संबोधन में—पूजनीय, पूज्य, श्रद्धेय, मान्यवर, पूज्यपाद आदि।

अभिवादन में—प्रणाम, नमस्कार, सादर नमस्ते, चरण-स्पर्श आदि।

निवेदन में—आपका आज्ञाकारी, आपका स्नेह-भाजन, चरण-सेवक, आपका प्रिय भ्राता आदि।

२. छोटे सम्बन्धियों, बराबर वालों वा मित्रों को

संबोधन में—प्रिय, प्रियवर, प्रियतम, प्राणनाथ, मित्रवर्य, आयुष्मान्, चिरंजीव, प्रिय बहिन आदि।

अभिवादन में—नमस्ते, शुभाषीः, आशीर्वाद, जय जिनेन्द्र, जय हिन्द, प्रसन्न रहो, चिरंजीव रहो आदि।

निवेदन में—तुम्हारा हितैषी, तुम्हारा शुभ-चिन्तक, तुम्हारा मित्र, तुम्हारा जेष्ठ भ्राता, आपकी सहचरी आदि।

३. परिचित एवं अपरिचित व्यक्तियों को

संबोधन में—प्रिय महाशय, महोदय, श्रीमन्, श्रीमतीजी, महोदया आदि।

अभिवादन में—नमस्ते, नमस्कार, जय गोपाल जी की, राम-राम आदि।

निवेदन में—आपका दर्शनाभिलाषी, भवदीय कृपाकांक्षी, आदि।

प्रार्थना-पत्रों में

संबोधन में-श्रीमान्, मान्यवर, आदरणीय, माननीय, महाशय आदि।

अभिवादन में—प्रार्थना-पत्रों में कुछ नहीं लिखा जाता।

निवेदन में—भवदीय, आज्ञाकारी, आपका विश्वास-प्राप्त, प्रार्थी, कृपा पात्र, आपका कृपाकांक्षी आदि।

अब विभिन्न प्रकार के पत्रों के नमूने नीचे दिये जाते हैं। छात्रों को चाहिए कि इन्हें पढ़कर वे भली प्रकार समझ लें और अभ्यास में दिए जाने वाले

पत्रों को दिए हुए नमूनों के आधार पर स्वयं लिखकर पत्र-रचना का अभ्यास करें।

१. व्यक्तिगत वा निजी-पत्र

(१) पुत्र की ओर से पिता को

॥ श्रीहरि ॥

श्याम भवन,
चौड़ा रास्ता,
जयपुर।
१७ सितम्बर, सन् १९६२ ई०

पूज्य पिताजी,

सादर प्रणाम।

आज आपका कृपा-पत्र मिला। यह पढ़ कर अत्यन्त हर्ष हुआ कि रमेश और सुरेश दोनों ने ही अच्छे अंको से आठवी कक्षा पास कर ली है। दोनों ही भाई मुझे होनहार प्रतीत होते हैं। मैं चाहता हूँ कि मैं दोनों को अपने ही पास रख कर योग्य बनाऊं। मैं चाहता हूं कि मैं रमेश को डाक्टर और सुरेश को इञ्जिनियर बनाऊं। आप इन्हें यहाँ भेज दीजिए, मैं इनकी भावी शिक्षा का समुचित प्रबन्ध कर दूंगा। आपके यहां यद्यपि हायर सेकेन्ड्री स्कूल है, तथापि वहाँ का वातावरण और व्यवस्था ठीक नहीं, इसके अतिरिक्त अध्यापकों का अभाव तो प्रायः वहाँ बना ही रहता है। ऐसी स्थिति में इन्हें वहाँ पर ही रख कर शिक्षा दिलाना मैं उचित नहीं समझता। फिर जैसी आपकी इच्छा।

पूज्य माताजी को चरण-स्पर्श कहें तथा मुन्नी और चुन्नू को प्यार करें। कृपा-पत्र शीघ्र देने की कृपा करें।

आपका प्रिय पुत्र,
महेश

(२) पिता की ओर से पुत्र को

साहित्य-सदन,
न्यू कॉलोनी, बनारस।
दि० २०-९-६२ ई०

प्रिय रमेश,

चिरंजीव रहो ।

इन दिनों तुम्हारा कोई कुशल-पत्र नहीं आया, इसलिए हम सबको बड़ी चिन्ता हो रही है । अतः पत्र पढ़ने के साथ ही अपनी कुशलता के समाचार भेजना, भूल न करना, जिससे हम सब लोगों की चिन्ता दूर हो ।

यहाँ हम सब सानन्द हैं तथा आशा करते हैं कि तुम भी वहाँ सकुशल अध्ययन कर रहे होंगे । तुम्हारी परीक्षा समीप है । यही समय अध्ययन करने का है । अतः अपना अधिक समय पढ़ने में लगाना जिससे अच्छी श्रेणी में उत्तीर्ण हो सको । तुम सदा से परिश्रमी रहे हो और परीक्षा में अच्छे अंकों से सफलता पाते रहे हो, किन्तु इस परीक्षा में अच्छे अंकों से सफलता प्राप्त करने पर ही तुम्हारा भावी जीवन अच्छा बन सकता है, क्योंकि आज का युग प्रतियोगिता का है, इसमें वही व्यक्ति सफल होता है जो सब प्रकार से योग्य हो ।

प्रिय पुत्र, अध्ययन के साथ-साथ अपने स्वास्थ्य का भी पूर्ण ध्यान रखना नियमित रूप से भोजनोपरान्त सायंकाल के समय टहलना जारी रखना । दूध, बादाम आदि पौष्टिक पदार्थों एवं फलों का सेवन करते रहना । रुपये पैसे की चिन्ता मत करना । मैंने आज ही सौ रुपये मनिआर्डर द्वारा तुम्हारे पास भेजे हैं । यदि अधिक की आवश्यकता हो तो और मंगवा लेना, मैं शीघ्र ही भेज दूंगा ।

परीक्षा समाप्त होते ही घर चले आना । मैंने एक महिने की छुट्टी ले ली है । ग्रीष्मावकाश में अब की बार आबू पहाड़ पर चलने का इरादा है । सब के सब चलेंगे, ध्यान रहे । लौटती डाक से पत्र लिखना न भूलना ।

तुम्हारा पिता,
मुरली मनोहर

(३) बहिन की ओर से छोटे भाई को

श्री हरिः

लक्ष्मी-निवास
उदयपुर
दिनांक २१-९-६२ ई०

प्रिय विमल,

आशीर्वाद।

बहुत समय से तुम्हारा पत्र नही आया, इस कारण मुझे बड़ी चिन्ता है। पत्र पढ़ते ही उत्तर देना जिससे चिन्ता दूर हो। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है कि तुम पत्र लिखने में बड़े आलसी हो। प्रिय भाई, क्या तुम्हें यह नहीं मालूम कि विदेश में गये हुए व्यक्तियों का मिलन तो पत्र द्वारा ही होता है। यहाँ तुम्हारा पत्र विलम्ब से आने पर सब घरवालों को बड़ी चिन्ता हो जाती है और विशेषतः माताजी को। माताजी एक तो रुग्ण रहती है, दूसरे तुम्हारा पत्र विलम्ब से आता है तो वे और भी व्याकुल हो जाती है। तुम बुद्धिमान होते हुए भी पत्र समय पर क्यों नहीं भेजते हो ? माताजी बार बार मुझ से तुम्हारे पत्र के विषय में पूछती रहती है।

मैं अभी यहां एक मास और रहूंगी। मुझे भी तुम से मिले हुए बहुत समय हो गया है। यदि अवकाश मिल सके तो कुछ दिनों के लिए आजाना, मिलना हो जायगा। साथ में बच्चों को भी लेते आना। मुझे छोटा मुन्ना याद आता है। यदि हो सके तो पचास रुपये तक का एक बढिया सा शाल लेते आना, रुपया मैं यहाँ दे दूंगी। पत्र देने में विलम्ब मत करना।

तुम्हारी बहिन,
सरला 'विदुषी'

२. प्रार्थना-पत्र

(१) छुट्टी के लिए प्रधानाध्यापक को

श्रीमान् हैड मास्टर साहब,
जयसिंह हायर सेकेन्ड्री स्कूल,
खेतड़ी

मान्यवर,

सविनय निवेदन है कि मेरे ज्येष्ठ भ्राता का शुभ विवाह दि० १८ मार्च सन् १९६२ ई० को होना निश्चित हुआ है। अतः मेरा घर जाना अनिवार्य

हो गया है। इस लिए सादर प्रार्थना है कि दिनांक १५ मार्च से २१ मार्च तक ए सप्ताह का मुझे अवकाश प्रदान करें इस कृपा के लिए मैं आपका आभारी रहूँगा

आपका आज्ञाकारी शिष्य,

दिनांक १५ मार्च, १९६२ ई०

प्रभुदयाल गुप्ता
कक्षा ग्यारह

(२) सभापति, जिला कांग्रेस की ओर से जिलाधीश को

श्रीमान् जिलाधीश,
पाली (राजस्थान)

महोदय,

यह निवेदन करते हुए अत्यन्त दुःख होता है कि आजकल पाली जिले में अन्न-वितरण व्यवस्था बड़ी खराब है। राशन की दुकानों पर ठीक समय पर अन्न का आयात नहीं होता और जो अन्न विलम्ब से आता भी है, उसमें कूड़ा-कचरा और मिट्टी अत्यधिक मात्रा में मिले हुए रहते हैं। जब दुकानदारों से साफ करके देने को कहा जाता है तो वे अनसुनी करते हैं, बिचारी भूखों मरती हुई जनता को जैसा जो कुछ मिलता है, खरीदना पड़ता है। इसके अतिरिक्त राशन के दुकानदार भी पक्षपात से बनाये जाते हैं।

अतः आपसे प्रार्थना है कि जिले की अन्न-वितरण-व्यवस्था शीघ्र सुधरनी चाहिए जिससे जनता के कष्ट का निवारण हो। राशन की दुकानें सच्चे और ईमानदार व्यक्तियों को दी जानी चाहिए। अन्न का आयात ठीक समय पर हो और यदि उसमें कूड़ा वा मिट्टी हो तो वह साफ किया जा कर बेचा जाय। मुझे पूर्ण विश्वास है कि श्रीमान् जनता की प्रार्थना पर अवश्यमेव ध्यान देकर तथा तत्संबंधी आवश्यक जाँच-पड़ताल करके जनता को इस सामयिक कष्ट से मुक्त करेंगे। इस कृपा के लिए जनता आपकी आभारी रहेगी।

आपका हितैषी

दिनांक १७-६-१९६२ ई०

नटवर बिहारीलाल माथुर,
एम. ए., एल एल बी.,
सभापति, जिला कांग्रेस,
पाली (राजस्थान)

(३) शुल्क माफ कराने के लिये अध्यक्ष महोदय को

अध्यक्ष महोदय,
जैन सुबोध कालेज,
जयपुर ।

मान्यवर,

सेवा में सविनय निवेदन है कि मै आपके कालेज में गत दो वर्ष से पढ़ रहा हूं । इस वर्ष दशम कक्षा पास करके मैं पी० यू० सी० कक्षा में आया हूं । अब तक मैं बराबर फीस देता रहा हूं । परन्तु इस वर्ष एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई हैं जिसके कारण मै फीस देने में असमर्थ हूं । मेरे पिता, जो एक थड़ी-होल्डर थे, अचानक हृदय की गति रुक जाने के कारण एक महिने पूर्व स्वर्ग सिधार गए । परिवार के छः व्यक्तियों के भरण-पोषण का सब भार उन्हीं के कन्धों पर था । मैं ही उनका ज्येष्ठ पुत्र हूं । अब घर का खर्च चलाना ही कठिन हो गया है । मैंने पन्द्रह रुपया महीने की एक ट्यूशन लगा ली है जिससे मै अपना निजी खर्च चला सकूं । इस वर्ष विश्वविद्यालय की परीक्षा देनी है, इसलिए मैं और अधिक समय अध्ययन के सिवाय अन्य किसी कार्य के लिए देना नही चाहता । ऐसी स्थिति में मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप कालेज की मासिक एवं अन्य फीस से मुझे मुक्त कर दें ।

आशा है आप मेरी दीन दशा पर अवश्य ध्यान देंगे और मुझे फीस से मुक्त कर मेरे जीवन को बनाने के भागी बनेंगे ।

आपका आज्ञाकारी शिष्य,
दि० ७ जुलाई, १९६२ ई० चूहामल
प्री–यूनीवर्सिटी कक्षा (बी)

(४) नौकरी प्राप्त करने के लिये प्रार्थना-पत्र

श्रीयुत् सेक्रेटरी महोदय,
पब्लिक सर्विस कमीशन,
अजमेर ।

मान्यवर,

'राजस्थान राज-पत्र दि० ११–९–६२ ई० में प्रकाशित एक विज्ञापन देख कर मुझे ज्ञात हुआ है कि राजकीय हाई स्कूलों एवं मिडिल स्कूलों में विभिन्न विषयों को पढ़ाने के लिए कुछ ग्रेज्युएट अध्यापकों की आवश्यकता है। अतः उक्त स्थानों में से एक के लिए मैं भी अपना निवेदन-पत्र भेजता हूं।

मेरी योग्यता का विवरण निम्न प्रकार है—

मैंने राजस्थान विश्वविद्यालय से गत वर्ष बी० ए० की परीक्षा द्वितीय श्रेणी में महाराजा कालेज से पास की है। मेरे विषय—अंग्रेजी साहित्य, अर्थ-शास्त्र और इतिहास थे। मैंने सन् १९६१ में साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'साहित्य-रत्न' की परीक्षा भी द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण कर ली है।

अपने कालेज जीवन में मैं एक अच्छा खिलाड़ी और वक्ता रहा हूं। मैंने पाठनेतर सभी प्रवृत्तियों में भाग लिया है। वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में मैंने कई बार कालेज का प्रतिनिधित्व किया है।

मैं गत वर्ष जैन श्वेताम्बर तेरापंथी हाई स्कूल में अध्यापन कार्य कर चुका हूं। मैं २२ वर्ष का एक स्वस्थ नवयुवक हूं मुझे अध्यापक-कार्य से विशेष रुचि है।

इस प्रार्थना–पत्र के साथ मैं अपने प्रमाण–पत्रों एवं प्रशंसा–पत्रों की प्रतिलिपियाँ भेज रहा हूं, आशा है वे मेरे उपर्युक्त कथनों को प्रमाणित करेंगे।

आशा है श्रीमान् सहानुभूतिपूर्वक मेरे निवेदन–पत्र पर विचार करेंगे। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं अपने कार्य एवं आचरण से अपने अधि–कारी वर्ग को संतुष्ट रखूंगा।

भवदीय

शान्ति स्वरूप शर्मा, बी० ए०
द्वारा श्री श्रीनिवास शर्मा
लाल भवन, चौड़ा रास्ता,
जयपुर।

दि० २० जून, १९६२ ई०

३. अर्ध-सरकारी पत्र

(१) पोस्ट मास्टर जनरल को शिकायत-पत्र

पोस्ट मास्टर जनरल महोदय,
अजमेर ।

मान्यवर,

यह लिखते हुए हमें अत्यन्त खेद हो रहा है कि स्थानीय ब्रांच पोस्ट मास्टर साहब का व्यवहार जनता के साथ बहुत ही बुरा है। वे अपनी इच्छानुसार काम करते हैं। डाकखाना न निश्चित समय पर खुलता है और न बन्द होता है। डाक-वितरण की व्यवस्था भी असंतोषप्रद है। मनि-आर्डर के रुपए लोगों को एक-एक महीने बाद मिलते हैं। लोगों के साथ पोस्ट-मास्टर साहब का बर्ताव भी ठीक नहीं है। कभी-कभी तो सज्जनों के साथ भी वे अभद्र व्यवहार कर बैठते हैं। ग्राम के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने पोस्ट-मास्टर साहब को निजी रूप से समझाने का भी प्रयत्न किया, परन्तु सब प्रयत्न व्यर्थ रहे। अतः आपसे प्रार्थना है कि आप हमारी उक्त शिकायतों को शीघ्रातिशीघ्र दूर करें। इसके लिए हम आपके आभारी रहेंगे।

भवदीय

दि० जून २०, सन् १९६२ ई०

१. सेठ रतनलाल सोढ़ाणी
२. अमृतलाल वकील
३. रामस्वरूप बी. ए.
चिलवाड़ा (अजमेर)

(२) पंचायत बोर्ड के सरपंच को

सरपंच महोदय,
ग्राम-पंचायत बोर्ड,
सादड़ी (जोधपुर)

श्रीमान्,

सादर निवेदन है कि सादड़ी ग्राम की गलियां बड़ी अस्वच्छ रहती हैं

रात्रि के समय इनमें पूर्ण अन्धकार रहता है। गलियों में कुत्ते भी बहुत फिरा करते हैं। कभी-कभी तो कुत्तों के कारण आने-जाने वालों को बड़ी परेशानी हो जाती है। वर्ष में दो-चार बार पागल कुत्ते के काटने की घटनाएं भी घटती रहती हैं।

अतः आपसे सानुरोध प्रार्थना है कि आप अति शीघ्र पंचायत बोर्ड के तत्वावधान में गलियों में रात्रि के समय प्रकाश का प्रबन्ध करें, कुत्तों को पकड़वा कर अन्यत्र छुड़वाने की व्यवस्था करें, गलियों में सड़कें और नलियां बनवा कर पूर्ण सफाई का प्रबन्ध करें। ग्राम की सब प्रकार से उन्नति करने का दायित्व आप पर ही है। आप जिस प्रकार का सहयोग हमसे लेना चाहें हम देने को तत्पर हैं। आशा है आप हमारे निवेदन पर शीघ्र ध्यान देकर ग्राम के इस सार्वजनिक कष्ट का निवारण करेंगे।

भवदीय
मुरारीलाल शर्मा,
मंत्री, नवयुवक मंडल
सादड़ी (मारवाड़)

दि० १८ जून, १९६२ ई०

४. व्यावसायिक पत्र

ग्राम-सेवा-उद्योग-मन्दिर को

१६ गांधी उद्यान,
अहमदाबाद।
दि० जून २३, सन् १९६२ ई०

श्रीयुत् व्यवस्थापक,
राजस्थान ग्राम-सेवा-उद्योग-मन्दिर,
अजमेर।

प्रिय महोदय,

इस वर्ष से इस विद्यालय में कृषि की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। आपका सूची-पत्र देखने से ज्ञात होता है कि आपके उद्योग-मन्दिर से कृषि सम्बन्धी सामग्री हमें उचित मूल्य पर प्राप्त हो सकती है। हमें आशा है कि आप

जो सामान भेजेंगे, वह हमें ठीक दशा में यहां प्राप्त होगा। कृपया निम्नलिखित कृषि-सम्बन्धी उपकरण रेलवे द्वारा शीघ्र भिजवाने की व्यवस्था करें।

१. हल साधारण	२ नग
२. हल मरेटन	२ नग
३. फावड़े (बड़े)	१० नग
४. कुदाली	१२ नग
५. खुरपियां (बड़ी)	१५ नग
६. खुरपियां (छोटी)	२० नग

भवदीय,
कृष्णवीर सिंह गौड़
प्रधानाध्यापक
राजकीय कृषि विद्यालय
अहमदाबाद।

(४) निमन्त्रण-पत्र (उत्सव में सम्मिलित होने के लिये)

ॐ

श्रीयुत पं० लक्ष्मीधर शर्मा,

आपको यह जानकर परम हर्ष होगा कि सदा की भांति इस वर्ष भी हम कला-संस्थान का वार्षिकोत्सव दि० १७ जुलाई रविवार, सन् १९६२ ई० को मना रहे हैं। अतएव आपसे प्रार्थना है कि आप अपने इष्ट मित्रों के साथ उत्सव में सम्मिल्लित होकर हम लोगों को प्रोत्साहन देने की कृपा करें।

भवदीय
कलाधर पांडे
अध्यक्ष कला-संस्थान
जयपुर।

स्थान—जैन सुबोध कालेज, जयपुर।

समय—सायंकाल ५-३० से ११-० बजे तक।

पुनश्च—

कला संस्थान के कलाकारों के अतिरिक्त नगर के अनेक लब्ध-प्रतिष्ठ कलाकार भी इस उत्सव में सक्रिय भाग लेंगे।

(६) सूचना–पत्र

आर्य–समाज, जयपुर

संख्या १२३

जयपुर,
दि० १८–९–६२ ई०

प्रिय महाशय,

यह सूचित करते हुए परम हर्ष हो रहा है कि आज प्रातः काल ८ बजे आपके नगर में आर्य-समाज के प्रकाण्ड विद्वान स्वामी विरजानन्दजी पधारे हैं। वे यहां केवल दो दिन ठहरेंगे। आज और कल दोनों ही दिन सायंकाल छः बजे आर्य-समाज भवन के सामने किशनपोल बाजार में 'धर्म और समाज' विषय पर उनका व्याख्यान होगा। आपको अपनी शंकाओं के समाधान के लिए भी समय दिया जायेगा। कृपया पधारने का कष्ट कर अनुगृहीत करें।

भवदीय

कृष्ण–वल्लभ आर्य
मन्त्री–आर्य–समाज,
जयपुर।

कार्ड के ऊपर पता

श्रीमान् पं० शंखधर शर्मा, ए० ए०,
ज्ञान–मंदिर, जयपुर।

(७) प्रशंसा पत्र

कामर्स कालेज,
शाहपुरा (राजस्थान)।
दि० १२–६–६२ ई०

मुझे यह प्रमाणित करते हुए बड़ा हर्ष है कि श्री राममाथ शर्मा के सुपुत्र श्री प्रेमनाथ ने इस कालेज में गत वर्ष अध्ययन किया है। यह अपनी कक्षा में सदैव उच्चतम विद्यार्थियों में से रहा है। अध्ययन में तत्पर रहने के अतिरिक्त इसने गत वर्ष 'हिन्दी–साहित्य–समाज' के मन्त्री–पद पर भी कार्य किया है। वाद–विवाद–प्रतियोगिता, निबन्ध प्रतियोगिता और कालेज मैगेजिन के प्रकाशन का कार्य इसने बड़ी योग्यता के साथ सम्पादन किया है। शिक्षा सम्बन्धी बातों के

अतिरिक्त खेल–कूद में भी इसने बराबर भाग लिया है, और कितने ही पारितोतोषिक प्राप्त किये हैं।

ऐसे सदाचारी, कार्य–निपुण और होनहार युवक को मैं किसी उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर देखकर प्रसन्न हूंगा।

बनारसी प्रसाद त्रिवेदी
अध्यक्ष,
कामर्स कालेंज,
शाहपुरा।

(८) मान-पत्र (अभिनन्दन-पत्र)

सेवा में,

श्रीमान् नित्यानन्द देव, एम० ए०, बी० टी०
अध्यक्ष–शिक्षा विभाग, राजस्थान।

मान्यवर,

आज हम दौसा-वासी अत्यन्त हर्ष और आदर के साथ आपका स्वागत करते हैं। आपके शिक्षा विभाग में पदार्पण करने के उपरान्त शिक्षा की जो चतुर्मुखी उन्नति हुई हैं, उसका श्रेय केवल आपको है। आपने अनेक कठिनाइयों के होते हुए भी शिक्षा को सबके लिए सुलभ बना दिया है। कोई ग्राम, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, ऐसा न होगा जहां राजकीय शिक्षालय न हो।

शिक्षा-प्रेमी,

शिक्षा के क्षेत्र में नवीन प्रयोगों द्वारा नई शिक्षा-पद्धतियां प्रचलित कर आपके जो शिक्षा-क्षेत्र में परिवर्तन किया है, वह सराहनीय ही नहीं, शिक्षा के स्तर को भी ऊँचा उठाने वाला है। शिक्षा-प्रणाली में सुधार, शिक्षकों में नवीन स्फूर्ति और शिक्षा-विभाग के कर्मचारियों में कार्य-तत्परता ला देने का श्रेय आपको ही है।

उदार-चेता,

आपने अपने अधीनस्थ कर्मचारियों एवं अध्यापक-वृन्द का कभी बुरा नहीं किया। उनकी ओर से गलतियां होने पर भी आपने कभी उन पर क्रोध प्रकट नहीं किया, क्योंकि आप मानव-कमजोरियों से भली प्रकार परीचित हैं।

आपने सदा ही उन लोगों के साथ कृपा-पूर्वक उदारता का ही भाव रखा। यही कारण है कि आज शिक्षा-विभाग का प्रत्येक कर्मचारी आपका गुण गाता है।

सच्चरित्र,

आप प्रकांड विद्वान् होते हुए भी निरभिमानी, सत्ताधारी होते हुए भी धैर्यवान, तथा सज्जन, विनम्र और दयालु हैं। वयोवृद्ध होते हुए भी आप शिक्षा के प्रसार में सदा लगे रहते हैं। यह आप की कर्मठता नहीं तो और क्या ?

आदरणीय,

हम हृदय से आपका स्वागत करते हैं और ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि आप सदा स्वस्थ और सुखी रहें।

हम हैं,
आपके विनीत
शुभाकांक्षी,
दौसा वासी

दौसा,
१२ जौलाई, १९६२ ई०

(९) शोक–प्रस्ताव

शोक ! शोक !! महा शोक !!!

राजकीय विद्यालय लाडनूं के अध्यापक तथा छात्रों की यह सभा श्री निर्मल कुमार जी कौशिक, एम् ए., बी. टी., प्रधानाध्यापक, की पूज्य मातेश्वरी के स्वर्ग-वास होने पर हार्दिक शोक प्रकट करती है एवं परमपिता परमात्मा से यह प्रार्थना करती हैं कि वह दिवंगत आत्मा को चिर-शान्ति एवं कुटुम्बियों को को वियोग-जन्य कष्ट सहने की क्षमता प्रदान करें।

विद्यालय-भवन
दि० १२–९–६२ ई०

हम हैं,
आपके विद्यालय के अध्यापक तथा छात्र

(१०) आवश्यकता

आवश्यकता है एक ऐसे अनुभवी शिक्षक की जो हाई स्कूल परीक्षा में इसी वर्ष सम्मिलित होने वाले दो क्षात्रों को हिन्दी तथा गणित का सन्तोषप्रद अध्ययन करा सके। अध्यापक बी० ए० या एम० ए० होना चाहिए। शुल्क योग्यतानुसार। जो सज्जन यह कार्य करना चाहें, वे निम्न पते पर स्वयं किसी भी दिन प्रातः ९ से ११ बजे तक मिलने का कष्ट करें।

सेठ माणकचन्द मिनारिया,
४२, वी स्ट्रीट,
हरिसन रोड, कलकत्ता।

(११) विज्ञापन

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि दि० २० जनवरी सन् १६६२ ई० को सायं काल ४ बजे माणक चौक में विद्यालय का पुराना सामान नीलाम किया जायगा। अतः जिन महानुभावों को कोई सामान (जैसे दरी, टेबिल, कुर्सी, पुरानी टाइप की मशीन, खेल का पुराना सामान आदि-आदि) खरीदना हो, वे नियत समय पर पधारने का कष्ट करें।

पुनश्च—

सामान पुराना होते हुए भी बड़ा उपयोगी और टिकाऊ है।

भवानी शंकर, एम० ए०
प्रधानाध्यापक,
मारवाड़ी विद्यालय,
कलकत्ता

(१२) निबन्धात्मक पत्र

नोट—

निबन्धात्मक पत्रों में आरंभ और अन्त तो पत्र जैसा होता है, केवल पत्र के मध्य भाग में घरेलू विवरण के स्थान में निबन्ध (बिना रूप रेखा के) लिख दिया जाता है। इस बात का पूर्ण ध्यान रखा जाना चाहिए कि वाता-वरण तो सर्वथा पत्र के अनुरूप और घरेलू हो, किन्तु पृष्ट विषय का विवेचन भी अच्छी तरह हो जाना चाहिए। उदाहरण-स्वरूप एक-दो नमूने यहाँ दिये जाते हैं।

१—बम्बई-निवासी शिवचरण लाल (पिता) की ओर से उनके पुत्र के नाम एक पत्र लिखिए, जिसमें व्यायाम के महत्व का विस्तृत वर्णन हो:—

कालबादेवी रोड,
बम्बई

प्रिय पुत्र,

चिरायु हो।

कल तुम्हारा पत्र मिला और आज तुम्हारे मित्र हरीश का। दोनों पत्रों के पढ़ने से मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि आजकल तुम्हारा स्वास्थ्य गिर रहा है और उसका प्रमुख कारण है तुम्हारा अत्यधिक अध्ययन-शील होना। अध्ययन करना और उत्तम श्रेणी मे उत्तीर्ण होना बुरा नहीं है, किन्तु स्वास्थ्य खोकर तुम्हें कोई काम नहीं करना चाहिए। क्या तुमने अपनी पढ़ी हुई कहावत Healthy mind in a healthy body भुला दी? यह मैं मानता हूँ कि अब तुम्हारी वार्षिक परीक्षा निकट आ रही है, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि तुम खाना, पीना, निद्रा लेना और व्यायाम करना बन्द कर दो। तुम्हारा सब आहार-विहार नियमित होना चाहिए। प्रत्येक कार्य में नियमितता आवश्यक और अपेक्षित है। सुन्दर स्वास्थ्य बनाये रखने के कितने ही सिद्धान्त और नियम हैं, मैं उन्हें यहाँ लिखना पसन्द नहीं करूंगा। मैं तुम्हें यहाँ केवल व्यायाम के विषय में विस्तृत जानकारी दे रहा हूं।

व्यायाम शब्द का अर्थ है वह कार्य जिसमें विशेष श्रम करना पड़े। शरीर व बुद्धि से नियमित रूप से परिश्रम करना व्यायाम कहलाता है। व्यायाम का ही दूसरा नाम कसरत है। शरीर से जो नियमानुसार श्रम किया जाता है, वह शारीरिक व्यायाम कहलाता है और मन व बुद्धि के द्वारा जो नियमानुसार श्रम किया जाता है, वह मानसिक व बौद्धिक व्यायाम कहलाता है। जिस व्यायाम का प्रभाव शरीर के समस्त अंगों पर व मन की सम्पूर्ण वृत्तियों पर समान रूप से पड़े, वह साधारण व्यायाम कहलाता है और जिसका प्रभाव केवल अंग विशेष व वृत्ति विशेष पर ही पड़े, वह विशेष व्यायाम कहलाता है।

शारीरिक व्यायाम करने के कई तरीके हैं—नियमित रूप से सांय-प्रातः दो-चार मील टहलना, घुड़-सवारी, तैरना, फुटबाल, वालीबाल आदि खेल खेलना, कुश्ती लड़ना, मुग्दर घुमाना, दण्ड-बैठक आदि लगाना। मानसिक व्यायाम में चिंतन, मनन, अध्ययन, प्राणायाम आदि हैं। विद्यार्थियों का मानसिक व्यायाम तो पर्याप्त मात्रा में होता रहता है, किन्तु शारीरिक व्यायाम

दिन प्रातः ६ से ११ बजे तक मिलने का कष्ट करें।

की ओर वे उपेक्षा कर जाते हैं। मानसिक श्रम के साथ शारीरिक श्रम की भी बड़ी आवश्यकता है, क्योंकि इन दोनों का घनिष्ट सम्बन्ध है। मानसिक और शारीरिक शक्तियों में संतुलन रहना चाहिए। शरीर के दुर्बल रहने पर मानसिक शक्ति का भी पूर्ण विकास नहीं हो पाता है। अतः छात्रावस्था में शारीरिक व्यायाम अत्यावश्यक है।

व्यायाम करते रहने से अनेक लाभ हैं। व्यायाम से शारीरिक और मानसिक शक्तियों का विकास होता है। व्यायाम करने से शरीर सुडौल बनता है और अंग पुष्ट होते हैं, शरीर में स्फूर्ति आती है, आरोग्यता बढ़ती है, मांस-पेशियाँ मजबूत होती हैं, फेफड़े ठीक काम करते हैं, शरीर से दूषित वस्तुएं पसीना, चिकनाहट आदि बाहर निकल जाते हैं। व्यायाम करने से पाचन शक्ति तीव्र होती है, भूख खूब लगती है, जो कुछ खाया जाता है, सब हजम हो जाता है। निद्रा अच्छी आती है। चित्त शान्त और प्रफुल्ल रहता है। मस्तिष्क ठीक-ठीक काम करता है। चित्त डॉवाडोल नहीं होता, उसमें एकाग्रता आती है। आलस्य और शैथिल्य दूर भाग जाते हैं, आशा और उत्साह का संचार होता है। इस प्रकार व्यायाम से शरीर और मन दोनों को अनेक लाभ हैं।

व्यायाम करने का भी एक ढंग होता है। आरम्भ में व्यायाम थोड़ा २ करना चाहिए, तदन्तर उसे धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। यदि एक दम अधिक श्रम किया जायगा तो थकान आ जायगी और हतोत्साह कर देगी। इसलिए व्यायाम को क्रमशः बढ़ाना चाहिए। व्यायाम उतना ही किया जाना चाहिए। जितना आवश्यक है, जितना शरीर सहन कर सकता है। यदि आवश्यकता से से अधिक व्यायाम किया जायगा तो हानि होने की संभावना है, क्योंकि अति सब की बुरी है। व्यायाम में नियमितता होनी चाहिए। यदि व्यायाम नियमित रूप से न किया जायगा तो लाभप्रद न होगा। दो-चार दिन व्यायाम किया, फिर दो-चार दिन नहीं किया—इस तरह व्यायाम नहीं किया जाता। व्यायाम प्रतिदिन एक निश्चित समय पर ही किया जाना चाहिए। व्यायाम करने के अनन्तर थोड़ा विश्राम करना चाहिए। व्यायाम करते ही स्नान करना वर्जित है। व्यायाम करने के घन्टे-आधे घण्टे पश्चात् स्नान करना चाहिए और तब दूध, नाश्ता आदि लेना चाहिए।

प्रिय पुत्र, तुम स्वयं समझदार हो, अधिक क्या लिखूं । व्यायाम कं नित्य-नैमेत्तिक कर्म करना चाहिए । व्यायाम मनुष्य को सदा स्वच्छ और निरोग रखता है । व्यायाम करने वाले के मुख-मंडल पर एक दिव्य ज्योति झलकती रहती है, वह सदा प्रसन्न-मुद्रा में रहता है ।

यहाँ हम सब कुशल-पूर्वक हैं । तुम्हारी माताजी ने तुमको आशीर्वाद तथा चुन्नू-मुन्नू ने तुमको प्रणाम लिखवाया है । लल्ली तुम्हें बहुत याद करती है । किसी बात की चिन्ता मत करो । पैसे बीत गये हों तो और मंगवालो । अध्ययन खूब करो, मैं मना नही करता, किन्तु अपने स्वास्थ्य का पूर्ण ध्यान रखो ।

तुम्हारा शुभेच्छुः
शिवचरण लाल

अभ्यास

१. अपने पिता को एक पत्र लिखिए, जिसमें उनसे स्कूल की फीस तथा पुस्तकों के लिए रुपये भेजने की प्रार्थना की गई हो ।
२. एक पत्र अपने विपत्ति-ग्रस्त मित्र को लिखिए, जिसमें उससे सहानुभूति प्रकट करते हुए सहायता भेजने की प्रतिज्ञा की गई हो ।
३. अपने बड़े भाई को पत्र द्वारा सूचना दीजिए, कि तुम हाई स्कूल में पास हो गये हो और अब कालेज में प्रवेश चाहते हो । विषयों के चुनाव में भी उनसे सम्मति मांगिए ।
४. नियम-बद्ध व्यायाम करने के लाभ अपने एक अस्वस्थ मित्र को पत्र द्वारा लिखिए ।
५. अपनी बड़ी बहिन को बुलाने के लिए उसके सुसर को एक पत्र लिखिए ।
६. अपने छोटे भाई को, जो पढ़ने में मन न लगा कर अपना अमूल्य समय खेल-कूद में व्यतीत करता हो, एक पत्र लिखिए जिसमें विद्याध्यन के लाभ वर्णन किये गये हों ।
७. किसी पुलिस अधिकारी को एक पत्र लिखिए जिसमें चोर-डकैतों से गांव की रक्षा के लिए निवेदन किया गया हो ।
८. स्वयं निर्धन और असहाय होने के कारणों का उल्लेख करते हुए अपने

विद्यालय के प्रधानाचार्य को फीस माफ करने के लिए एक प्रार्थना-पत्र लिखिए।

९. किसी फर्म के व्यवस्थापक को एक पत्र लिखिए जिसमें माल के नमूने और मूल्य-सूची मँगाने के लिए कहा गया हो।

१०. अपने कालेज के अध्यक्ष महोदय को एक प्रार्थना-पत्र लिखिए जिसमें अपना सर्टिफिकेट (प्रमाण-पत्र) मँगवाने के लिए निवेदन किया गया हो।

११. किसी स्थानीय कालेज के अध्यक्ष को एक आवेदन-पत्र लिखिए जिसमें प्रथम वर्ष कला में भरती होने की प्रार्थना की गई हो।

१२. अपने ग्राम के पञ्चायत-बोर्ड के सरपंच को एक प्रार्थना-पत्र लिखिए जिसमें अपने ग्राम में एक सार्वजनिक वाचनालय खोलने के लिए उपयुक्त सुझाव हों।

१३. कमिश्नर साहब को एक प्रार्थना-पत्र लिखिए जिसमें जिलाधीश की कठिनाइयों का विवरण हो।

१४. किसी पत्र के सम्पादक को एक पत्र लिखिए जिसमें अश्लील विज्ञापनों को रुकवाने के लिए कहा गया हो।

१५. किसी बड़े व्यापारी को पत्र लिख कर उससे ग्राम की सहयोग-समिति के लिए ग्रामोपयोगी वस्तुएँ मँगवाइए।

१६. आपके नगर में किसी महान् नेता के आगमन पर उनके कार्य-क्रम की सूचना जनता को दीजिए।

१७. अपने मित्र को, उसके पिता के स्वर्गवास हो जाने पर, एक समवेदना-पत्र लिखिए।

१८. देश के किसी महान् पुरुष की निधन-तिथि के लिए श्रद्धांजलि लिखिए।

१९. अपने चाचा को एक पत्र लिखिए जिसमें अपनी भावी योजना के लिए उनसे परामर्श लिया गया हो।

२०. अपने मित्र को पुत्र होने के उपलक्ष्य में पत्र द्वारा बधाई-संदेश भेजिए।

२१. अपने किसी अध्यापक को उसके स्कूल छोड़ने के अवसर पर मान-पत्र लिख कर भेंट करिए।

२२. किसी उत्सव में सम्मिलित होने के लिए किसी परिचित व्यक्ति को आमन्त्रित करिए।

२३. 'नव भारत टाइम्स' के सम्पादक को एक पत्र लिखिये जिसमें उससे अपने विज्ञापन को छापने की प्रार्थना की गई हो। 'विज्ञापन' साथ में दीजिये।

२४. अपने मनि-आर्डर की रसीद न मिलने पर स्थानीय पोस्ट मास्टर को एक पत्र लिखिए।

२५. ठीक समय पर 'पत्र' न मिलने के कारण 'पत्र-हाट' के व्यवस्थापक के पास एक शिकायत-पत्र लिखकर भेजिए।

२६. अपने मित्र को नौकरी दिलवाने के लिए अपने एक उच्चपदाधिकारी सम्बन्धी को सिफारिशी-पत्र लिखिए।

२७. अपने प्रिय शिष्य को एक पत्र लिखिए जिसमें अधिक सिनेमा देखने का सकारण उल्लेख किया गया हो।

२८. लगान माफी के लिए ग्राम वालों की ओर से कलक्टर को एक प्रर्थना-पत्र लिखिए जिसमें लगान माफ करने के लिए ठोस कारण भी प्रस्तुत किये गये हो।

२९. अपनी माता को एक पत्र लिखिए जिसमें किसी आनन्द-यात्रा का वर्णन हो।

३०. अपने मित्र को पत्र लिखिए जिसमें आने वाली छुट्टियों में साथ-साथ रहने और घूमने का उल्लेख किया गया हो।

३१. आगरा के रमेश गर्ग की ओर से महाराजा कालेज जयपुर के प्रधानाचार्य के नाम उसी विद्यालय में टी० डी० सी० प्रथम वर्ष में प्रवेश पाने के निमित्त एक प्रार्थना-पत्र लिखिए।

३२ झालावाड़-निवासी कमलेश्वर भारद्वज की ओर से उनकी पुत्री के नाम एक पत्र लिखिए जिसमें 'विद्यार्थी और राजनिति' विषय का विस्तृत विवेचन हो।

३३. जयपुर के सुरेश माथुर की ओर से प्रयाग-निवासी उनके पिता के नाम एक पत्र लिखिए जिसमें अपने विद्यालय की विशेषताओं का विस्तृत उल्लेख हो।

आठवां अध्याय

निबन्ध-रचना

निबन्ध और उसके भेद

निबन्ध शब्द की परिभाषा देना बड़ा कठिन है। विभिन्न आलोचकों और विद्वानों ने निबन्ध की विभिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं। निबन्ध गद्य की कसोटी है। 'निबन्ध' शब्द संस्कृत का है जिसका व्युत्पत्ति-लभ्य अर्थ है विशेष प्रकार से बंधा हुआ। निबन्ध वह संक्षिप्त और सीमित गद्य-रचना है जिसमें हृदयस्थ भावों एवं विचारों का वर्णन हो। निबन्ध की सफलता की कसौटी है पाठक के साथ उसका मधुर आत्मीय सम्बन्ध। निबंध ही निबन्धकार की आत्माभिव्यक्ति को खुलकर प्रकट होने का पूर्ण अवसर मिलता है। इसलिए निबन्ध में वैयक्तिक प्रवाह होता है। उसमें न व्यवस्था है और न पूर्णता, न तर्क-पद्धति है और न औपचारिकता। निबन्ध में निबन्धकार अपने को लक्ष्य करके जीवन की व्याख्या करता है। वह अपनी सुनाता है, पाठक उसे अपनी समझता है, यही सहज आत्मीयता का भाव निबन्ध की सफलता है। निबन्धकार जीवन को इतिहासकार की तरह नहीं देखता, दार्शनिक की तरह उसे नहीं जांचता, कवि की तरह कल्पनालोक में उसे नहीं ढूंढता। वह हो इन सब को मिलाकर जीवन को अर्थात् अपने को खोलकर सामने रख देता है। परन्तु वह बात स्मरण रखनी चाहिये कि उत्तम निबन्ध वही समझा जाता हैं जिसमें विचारों की प्रधानता हो, कल्पना और भावों को निबन्ध में गौण स्थान मिलना चाहिए।

निबन्ध किसी भी विषय पर लिखा जा सकता है। चींटी से लेकर हाथी तक, पृथ्वी से लेकर आकाश तक—मूर्त-अमूर्त सभी विषयों पर एवं मनोवेगों पर निबन्ध लिखा जा सकता है। रचना गद्य-विधान, लेख, संदर्भ, प्रबन्ध आदि रूप और आकृति में निबन्ध जैसे ही लगते है, किन्तु इन्हें निबन्ध नहीं कहा जा सकता क्योंकि ये निबन्ध का पूरा-पूरा भाव प्रकट नहीं करते हैं।

निबन्ध लिखना भी एक कला है। केवल प्रतिभाशाली व्यक्ति निबन्ध लिखने में सफल होते हैं। अच्छा निबन्ध वही लिख सकता हैं जिस प्रतिभा के साथ साथ सूक्ष्म निरीक्षण और गम्भीर अध्ययन करने का उत्तम गु भी हो। इसमें अनुभव और अभ्यास की भी महती आवश्यकता है। निबन्ध लिखते समय मुख्यतय उसको तीन भागों में बाँटा जाता है–प्रस्तावना (विप प्रवेश) विवेचना (विस्तार) और उपसंहार। निबन्ध को विचार, कल्पना औ मनोंवेगों से सुसज्जित करने के लिए लेखक को भाषा, शब्द-योजना और शै पर भी पूर्ण ध्यान देना चाहिए तभी वह अपने निबन्ध में प्रभावोत्पादकता सकता हैं।

निबन्ध कितने प्रकार के हैं–यह कहना कुछ कठिक सा है। निबन्धों प्राप्त होने वाली विशेषताओं के आधार पर उनको विषय, वस्तु और शैली, आधार पर कितनी ही श्रेणियाँ की जा सकती है। साहित्य के मूल आधा भाव और विचार हैं, अत: निबन्धों के भी मूलत: दो ही भेद किये जाने चाहिए भावात्मक और विचारात्मक। किन्तु अधिकांश विद्वानों ने निबन्ध के पाँच प्रका स्वीकार किये है- (१) विचारात्मक वा विवेचनात्मक (२) भावात्मक (३ व्याख्यात्मक वा आत्मव्यंजक (४) वर्णनात्मक और (५) विवरणात्मकवा कथ त्मक। कुछ विदानों ने केवल विषय को लक्ष्य करके निबन्ध के केवल तीन भेद स्वीकार किये है–वर्णनात्मक, विवरणात्मक और विचारात्मक। विचारात्म निबन्ध के अन्तर्गत ही उन्होंने भावात्मक और व्याख्यानात्मक निबन्ध को भी लिया है, क्यों कि उनमें भी विवेचन की ही प्रधानता रहती है। अब निबन्ध विभिन्न प्रकार तथा उनके स्वरूप की व्याख्या की जाती है।

(१) विचारात्मक—(विवेचनात्मक)–जिन निबन्धों में यथातथ्य विवेचन एवं विचारों का बाहुल्य होता है वे विचारात्मक कहलाते हैं। ऐसे निबन्धे की भाषा शुद्ध तथा परिमार्जित, शब्द नपे-तुले एवं वाक्य छोटे होते है विचार धारा कुछ गूढ़ और गुम्फित होती है। इनमें हृदय की अपेक्षा बुद्धि का योग अधिक रहता है। इस प्रकार के निबन्धों का उद्देश्य प्रतिहाद्य विषय एवं विचारों का स्पष्टीकरण होता है किसी वस्तु का गुण-दोष-विवेचन किसी क विवा लेखक की आलोचना, किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन, विज्ञान

मनोविज्ञान तर्क, दर्शन-शास्त्र आदि की व्याख्या इस प्रकार के निबन्धों के मुख्य विषय हैं।

(२) भावात्मक—जिन निबन्धों में लेखक अपने या दूसरों के हृदय के सूक्ष्म भावों का वर्णन करता है, वे भावात्मक कहलाते है। ऐसे निबन्धों की भाषा लाक्षणिक, सरल और सरस होती है और शैली मे थोड़ा आवेग पाया जाता है इन निबन्धो का उद्देश्य अपने हृदय के सूक्ष्म एवं तरल भावों के प्रभाव को पाठकों को अनुभव कराना है। इन निबन्धों में बुद्धि की अपेक्षा हृदय से अधिक सम्बन्ध होता हैं। श्रेष्ठ निबन्धकार अपने भावों की अभिव्यक्ति में लक्षणाशक्ति का अधिक उपयोग करता है। इस प्रकार के लिखे गये उत्तम निबन्ध कविता का सा आनन्द देते है और बड़े प्रभावोत्पादक होते है।

(३) व्याख्यानात्मक (आत्म-व्यंजक)-व्याख्यान-दाता की भाँति तार्किक शैली पर उक्ति-वैचित्र्य के साथ विषय विशेष का चमत्कारपूर्ण वर्णन जिस निबन्ध में किया जाता है, वह व्याख्यानात्मक कहलाता है। ऐसे निबन्धों मे भाव और विचार दोनों का ही मिश्रण रहता है। इन निबन्धों में भाषा कही सरल कही टेड़ी मेढ़ी ओजगुणप्रधान रहती है। लेखक उदाहरण, दृष्टान्त, पुनरुक्ति, सादृश्य आदि के सहारे तर्क पूर्ण उक्तियो से अपने विषय का इस प्रकार प्रतिपादन करता है कि वह पाठक को आत्मसात् हो जाता है। इस प्रकार के निबन्धों में लेखक को छूट है कि वह किसी भी विषय को चुने और किसी भी शैली को अपनाये।

(४) वर्णनात्मक—-जिन निबन्धों मे निबन्धकार संसार के नाना दृश्यों वस्तुओं वा व्यापारों को अपनी कल्पना मे उपस्थित कर पाठक के हृदद पर उनका व्योरेवार वर्णन अंकित करना चाहता है, वे वर्णनात्मक निबन्ध कहलाते है। इस प्रकार के निबन्धों में प्रकृति, नगर, भवन, त्योहार मेले आदि का वर्णन होता है। जिस किसी वस्तु का अंकन किया जाय वह संक्षिप्त, सजीव और वास्तविक हो। इन निबन्धों में उन्हो विषयों का वर्णन किया जाता है जिनका बोध लेखक को स्वयं व्यक्तिगत रूप से होता है अथवा जिनकी वह यथार्थ कल्पना कर सकता है।

(५) विवरणात्मक (कथात्मक)—जिन निबन्धों मे अतीत की घटनाओं, कथाओं, युद्धों, यात्राओं जीवनियों, सम्मेलनों वृत्तान्तों आदि का वर्णन होता

[illegible] दूसरे की भलाई करना ही है। दूसरे की भलाई करना ही परोपकार कहलाता है।

है, वे विवरणात्मक निबन्ध कहलाते हैं। इनमें वर्ण्य विषय का क्रम-बद्ध व्यवस्थित और विस्तृत वर्णन किया जाता है। ऐसे वर्णनों में लेखक का कर्त्तव्य है कि वह अपनी कल्पना का उपयोग कर विचार-शृंखला एवं घटना-क्रम को इस तरह सजावे कि निबन्ध में आदि से अन्त तक रोचकता बनी रहे।

शैली और उसके भेद

लेखक के लिखने वा अपने भाव प्रकट करने का ढंग ही उसकी शैली है। जैसे हम अपने परिचित मित्रों वा सम्बन्धियों की चाल देख कर वा आवाज सुनकर ही उन्हें पहचान लेते हैं, उसी प्रकार अपने परिचित लेखकों के वाक्यों वा पद्यों को सुनकर वा पढ़कर तुरन्त पहचान लेते हैं कि यह वाक्य वा पद्य अमुक लेखक वा कवि का है। जैसे प्रत्येक व्यक्ति की चाल और आवाज पृथक्-पृथक होती है, दूसरे व्यक्ति की चाल और आवाज से मेल नहीं खाती, उसी प्रकार प्रत्येक लेखक की शैली भी दूसरे लेखकों से पृथक होती है—भिन्न-भिन्न लेखकों की भिन्न-भिन्न शैलियाँ। इसलिए शैली के वास्तव में न कोई प्रकार हो सकते हैं और न संख्या ही निश्चित की जा सकती है। बात यह है कि जिस प्रकार एक व्यक्ति के चलने और कहने का ढंग दूसरे से नहीं मिलता है, उसी प्रकार एक लेखक के भाव, विचार, अनुभव, कल्पना आदर्श, मान्यताएं आदि दूसरे लेखक से नहीं मिलते। जब प्रत्येक का व्यक्तित्व भिन्न-भिन्न है, तब प्रत्येक के लिखने का ढंग भी भिन्न-भिन्न ही होगा। यही कारण है कि एक लेखक के भावों और विचारों को प्रकट करने की प्रणाली में दूसरे लेखक से भिन्नता पाई जाती है और यही लेखक की शैली की मौलिकता है।

शैली ही वह साधन है जिसके द्वारा कोई कलाकार अपने व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण करने में सफल हो सकता है। कला की प्रेषणीयता (प्रभावित करने की शक्ति) शैली पर ही निर्भर है। कोई सुन्दर भाव वा विचार सुन्दर ढंग से कहे जाने पर श्रोता या पाठक को प्रभावित करता है।

शैली के दो अंग हैं—एक आंतरिक और दूसरा वाह्य। आंतरिक दृष्टि से शैली का संबंध लेखक के विचारों, भावों और कल्पना से है तथा वाह्य दृष्टि से शैली का सम्बन्ध भाषा, शब्दचयन, वाक्य-विन्यास, प्रवाह व्यंग्य आदि से है आंतरिक दृष्टि से विचार करने पर शैली में विचारों की संगति तथा क्रम होन

चाहिए। भावों में सचाई और प्रभावोत्पादकता होनी चाहिए। यत्र-तत्र यत्किंचित् कल्पना का पुट भी होना चाहिए। वाह्य दृष्टि से विचार करने पर भाव और विचार से अनुकूल भाषा होनी चाहिए। शैली के कितने ही भेद हैं, जैसे सरल शैली, गुम्फित शैली, परिचयात्मक शैली, वर्णनात्मक, गवेषणात्मक, व्याख्यात्मक, आलोचनात्मक आदि।

कुछ ध्यान देने योग्य बातें

विद्यार्थियों को निबन्ध लिखते समय नीचे लिखी हुई बातों पर पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए:—

१—प्रत्येक निबन्ध के लिखने से पहले विषय पर पूर्णतया विचार करके उसकी संक्षिप्त रूप-रेखा तैयार कर लेनी चाहिए। ऐसा कर लेने से लेख पर पूर्ण प्रभाव डालने और लिखने में बड़ी सरलता हो जाती है।

२—भाव और विचारों के साथ-साथ रचना बदलती जाय और उनका यथा-क्रम वर्णन हो।

३—भाषा सुबोध और प्रवाह-युक्त हो।

४—लेख लिखने से पहले समय का भी ध्यान कर लेना चाहिए और समय के अनुसार ही लेख की रूपरेखा को विभाजित करके लिखना चाहिए।

५—परिच्छेदों व विराम चिह्नों का उचित ध्यान रक्खा जावे और लेख अनावश्यक व निरर्थक प्रश्नों का उल्लेख न किया जावे।

६—प्रत्येक लेख के आरम्भ, विस्तार और अन्त का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

७—संयोजक,—वियोजक अव्ययों का प्रयोग करने में सावधानी रक्खी जावे। लेख में 'कि' 'तो' 'चूंकि' 'और' 'यानी' का प्रयोग बराबर नहीं करना चाहिए क्योंकि बार-बार प्रयोग करने से लेख भद्दा लगता है।

८—एक बार कही हुई बात को बार-बार नहीं दुहराना चाहिए।

९—लेख समाप्त कर देने पर कम से कम उसे एक बार अवश्य दुह लेना चाहिए और जहाँ-जहाँ त्रुटियां रह गई हों उन्हें शुद्ध कर देन चाहिए।

आदर्श निबन्ध

(१) दिवाली (दीपावली)

१—भूमिका

२—कब मनाया जाता है ?

३—मनाने के कारण

४—कैसे मनाया जाता है ?

५—उपयोगिता

६—त्रुटियां

७—उपसंहार

संसार के सब देशों में किसी-न-किसी रूप में जातीय त्यौहार मानाये जाते हैं। ये त्यौहार जातीय तथा राष्ट्रिय एकता एवं संगठन के प्रमुख साधन हैं। भारतवर्ष में भी प्राचीन काल से कई त्यौहार मनाये जाते आ रहे हैं। इन त्यौहारों में मुख्य चार माने जाते है—रक्षा-बन्धन, दशहरा, दिवाली और होली। प्राचीन भारत में चार वर्ण थे—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। प्रत्येक वर्ण का एक त्यौहार से विशेष सम्बन्ध माना जाता था अथवा यों कहिए कि चार वर्णों में चार त्योंहार बंटे हुए थे। रक्षा-बन्धन ब्राह्मणों का, दशहरा क्षत्रियों का, दिवाली वैश्यों का और होली शूद्रों का त्यौहार माने जाते थे। किन्तु ऐसी बात न थी कि एक वर्ण के लोग दूसरे वर्ण के त्यौहार को न मनायें। ये त्यौहार राष्ट्रिय जीवन के प्रतीक है, इस लिए सभी लोग आनन्द और उल्लास से इन्हें मनाते है। वर्ण-व्यवस्था भंग होने एवं जातिबन्धन ढीले पड़ते जाने के कारण अब ये त्यौहार वर्ण-विशेष के न रहकर सब के लिए समान महत्व रखते हैं।

दिवाली शब्द संस्कृत के दीपावली (दीप+अवली) शब्द का तद्भव रूप है, जिसका अर्थ है दीपकों की पंक्ति। यह त्यौहार कार्तिक मास की अमावस्या को प्रधानतः मनाया जाता है। दिवाली का त्यौहार कार्तिक कृष्णा १३ से कार्तिक शुक्ला २ तक बराबर पांच दिन तक चलता रहता है। त्रयोदशी का दिन

'धन तेरस' कहलाता है। इस दिन दूकानदार अपनी दूकानों को खूब सजा कर रखते हैं जिससे वर्तनों आदि की अच्छी बिक्री हो। इस दिन यमराज का पूजन होता है और गृहस्थी दीपक जला कर अपने-अपने घरों के द्वार पर रखते हैं। चतुर्दशी 'रूप चौदश' या छोटी दिवाली कहलाती है, इसे 'नरक चौदस' भी कहते हैं, क्योंकि इस दिन भगवान श्रीकृष्ण ने नरकासुर का वध किया था। इसी दिन भगवान विष्णु ने नृसिंह का रूप धारण करके हिरण्यकश्यप का वध कर प्रह्लाद की रक्षा की थी। इस दिन सायंकाल के समय घर घर में दीपक जलाते हैं। अमावस्या दीपावली महोत्सव का प्रधान दिवस है। इस दिन घरों में और बाजारों में खूब सजावट होती हैं और लक्ष्मी-पूजन होता है। प्रतिपद् को गोवर्द्धन पूजन होता है और अन्नकूट उत्सव भी मनाया जाता है। द्वितिया का दिन 'यम द्वितिया' कहलाता हैं और इस दिन स्त्रियां 'भैया-दूज' मनाती है। स्त्रियां अपने भाइयों को मिष्ठान्न खिलाती हैं और भाई अपनी बहिनों को उपहार देते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र लंका के राजा रावण का वध करके अयोध्या लौटे थे। इसलिए अयोध्या वासियों ने श्रीरामचन्द्र जी के पुनः अयोध्या पधार आने पर घी के दीपक जला कर एवं नगर को सजा कर उनका स्वागत किया था और अपने हृदय के उल्लास को व्यक्त किया था। जैनियों के अन्तिम तीर्थांकर महावीर स्वामी भी कार्तिक कृष्णा अमावस्या को ही मोक्ष पधारे थे और इसी दिन आर्य-समाज के प्रवर्तक श्रीमद्-यानन्द सरस्वती ने भी निर्वाण प्राप्त किया था। अतः भारत के प्रायः सभी प्रमुख धर्मावलम्बी इस त्यौहार को बड़ा पवित्र तथा महत्वपूर्ण मानते हैं। भारतीय वैश्य समाज का व्यापारी संवत् इसी दिन से आरम्भ होता है।

इस त्यौहार के कुछ दिन पूर्व से ही लोग अपने घरों एवं दूकानों की मरम्मत, सफाई, रंग, सफेदी आदि करवाना आरम्भ कर देते हैं और उनको सुन्दर चित्र, झाड़-फानूस, ध्वजा-पताका, बिजली आदि से सजाने लगते हैं। अमावस्या को संध्या के समय अपने घरों और दूकानों को दीप-मालाओं से प्रकाशित करते हैं। स्त्री-पुरुष सब सुन्दर वस्त्र धारण करके अपने सम्बन्धियों से मिलते हैं, उनको मिठाई खिलाते हैं। बाजार की सजावट और रोशनी देखने योग्य होती है। बच्चे अनेक प्रकार के बारूद के खिलौने छुड़ाते हैं। रात्रि

के समय शुभ मुहूर्त में लक्ष्मी का पूजन किया जाता है। सबके चेहरे पर प्रसन्नता की लहर दौड़ती दिखाई देती है।

दिवाली का त्यौहार स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़े महत्व का है। वर्षा समाप्त हो जाती है, शरद की सुहावनी छटा छाई रहती है। न अधिक शीत पड़ता है और न अनसुहावनी गर्मी। वर्षा-काल में जिन मकानों में सील आजाती है, वा वे टूट-फूट जाते हैं, उन सबकी मरम्मत हो जाती है। सफाई और सफेदी होने से मकान स्वच्छ हो जाते हैं। अनेक प्रकार के कीटाणु जो वर्षा ऋतु के कारण जन्म ले लेते हैं, नष्ट हो जाते हैं। मनुष्यों की रुचि स्वच्छता की ओर बढ़ती है। बारूद के खिलौने बच्चों का मनोरंजन तो करते ही हैं, साथ ही वे अपने धुआँ से वायुमंडल के कीटाणुओं का भी नाश करते हैं। इस त्यौहार से पारस्परिक प्रेम और सहयोग की भावना जागृत होती है। राष्ट्र में एकता आती है। यह त्यौहार जातीय जीवन का जीता-जागता उदाहरण है।

इस त्यौहर से लाभ ही लाभ है, हानि कुछ भी नहीं। केवल एक जुआ-खेलने की कु-प्रथा ने इसको कलंकित कर रखा है। दिवाली के दिनों मे जुआ खेलना और अपने भाग्य को आजमाना कुछ लोग आवश्यक समझते हैं परन्तु यह उनकी मिथ्या धारणा है। इस कु-प्रथा से जुए की बुरी टेव पड़ जाती है और कितने ही व्यक्ति धनी से रंक बन जाते हैं। कितने ही सब-कुछ खोकर जेल की हवा खाते हैं। बारूद के खिलौनों से भी कभी-कभी बच्चे जल जाते हैं और घरों में आग लग जाती है।

कुछ भी हो, यह त्यौहार भारतीय आर्य-संस्कृति का उज्ज्वल तथा अनुपम स्मारक है। यदि इस दिन जुआ आदि बुरे खेल खेलने के बदले कोई श्रेष्ठ प्रतिज्ञा की जाय अथवा कोई देश-सेवा का व्रत लिया जाय वा कोई उत्तम कार्य प्रारम्भ किया जाय तो जीवन में कितना सुख और शान्ति प्राप्त हो और राष्ट्र की उन्नति हो।

(२) स्वर्ण-मुद्रा की आत्म कथा

१. भूमिका—सोते हुए स्वप्न देखना।

२. स्वर्ण-मुद्रा का बालिका में परिवर्तित होना।

३. जन्म से लेकर अब तक की अपनी आत्म-कहानी कहना।

४. स्वप्न का अन्त—उपसंहार।

सर्दी के दिन थे। कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा था। दिसम्बर का महीना था। रात्रि को दस बजे थे। मैं अपने कमरे में लिहाफ में लिपटा हुआ पड़ा था। पास ही रखी हुई एक कुर्सी पर मैंने अपना कोट उतार कर रख दिया था। उसकी अन्दर की जेब में एक स्वर्ण-मुद्रा रखी हुई थी जो मैंने उसी दिन अपनी पत्नी के लिए लाकिट बनवाने को खरीदी थी।

मुझे ज्ञात नहीं, पत्र पढ़ते-पढ़ते कब मेरी आँख लग गई। मैं निद्रा-देवी की गोद में किलोलें करने लगा। स्वप्न में देखता क्या हूँ कि स्वर्ण-मुद्रा जेब से निकल कर कुर्सी पर गिर पड़ी। धीरे-धीरे उसकी चमक बढ़ने लगी। थोड़ी ही देर में न जाने कब और कैसे वह एक सुन्दर बालिका बन गई। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। जब मैंने उसकी ओर टकटकी लगाकर देखा तब वह मुस्कराने और कहने लगी—

मेरा घर पृथ्वी के गर्भ में था। मैं स्वर्ण के रूप में मैसूर की खान में अपनी सहचरी मिट्टी के साथ क्रीड़ा करती थी। एक दिन जब मैं विश्राम कर रही थी तब मैंने ऊपर से भूमि के खोदे जाने की आवाज सुनी। मेरा हृदय धक् धक् करने लगा। दूसरे दिन सचमुच कुछ लोग कुदाल और फावड़े लिये हुए वहाँ आ पहुँचे। हमें खोद-खोद कर बोरों मे भरा गया और बाहर निकाल कर एक कारखाने में पहुँचा दिया गया। वहाँ मुझसे मिट्टी तथा अन्य वस्तुएँ जो मेरे साथ थी, अलग कर दी गईं। मुझे गला कर एक शलाका में ढाला गया। वहाँ से फिर मैं बम्बई की टकसाल में भेज दी गई। मेरी वहां पुनः अग्नि-परीक्षा हुई। मुझे गोल बना कर और कुछ अक्षर खोदकर सिक्के (मुद्रा) का रूप दिया गया। आप मानें या न मानें, वह मेरा रूप इतना आकर्षक और चमकता हुआ था कि मैं स्वयं अपने उस रूप पर मोहित थी। मैं अपने भाग्य की सराह रही थी। मुझे क्या पता था कि मेरा यह रूप और नाम (स्वर्ण-मुद्रा) मेरे लिए अहितकर सिद्ध होंगे।

मैं अब स्वर्ण-मुद्रा थी, नई-नई और यौवन-मद से इठलाती हुई। मुझे अब सिवाय सैर-सपाटे और जीवन के मजे लूटने के काम ही क्या था। मैंने

कितने ही प्रसिद्ध नगरों की सैर की। जहाँ भी मैं जाती, वहाँ लोग घूर-घूर कर मुझे देखते, मेरे आलिंगन के लिए लालायित हो उठते। दुर्भाग्यवश एक बार मैं एक ऐसी जगह जा फँसी जहाँ से बड़ी कठिनाई से मेरा उद्धार हुआ। एक भले मानुष ने मुझे मेरी कुछ बहनों के साथ एक डिब्बे में बन्द कर गोदरेज की तिजोरी में कैद कर लिया। मेरी रक्षा के लिए बन्दूकधारी सैनिक नियुक्त था यह स्थान मेरे लिए कारागार से कम न था। मैं अन्यमनस्क होकर वहाँ दिन रात पड़ी रहती। मैं गिन-गिन कर दिन काटने लगी। मेरा दम घुटने लगा। मैं अपने निस्तार के लिए ईश्वर से प्रार्थना करने लगी।

एक दिन भगवान ने मेरी प्रार्थना सुन ली। अचानक मैं तिजोरी से निकाली गई और एक धनी व्यक्ति को सौंप दी गई। धनी बड़े आदर के साथ मुझे अपने घर ले गया। वहाँ जाकर मैंने देखा कि मेरी निन्यानवें बहनें वहाँ पहले से मौजूद थी—मुंह लटकाए हुए और चिन्तित। यह देखकर मै सन्न रह गई। उस धनी को अपनी नव-विवाहिता पत्नी के लिए नये डिजाइन के आभूषण बनवाने थे परिणाम यह हुआ कि मेरी बहनों को जौहर की ज्वाला में जलकर जेवर के रूप में परिणत होना पड़ा। वे अब आभूषण बनकर धनी पत्नी के कोमलांगों की शोभा बढ़ा रही हैं। मेरा सौभाग्य था कि धनी ने मुझे लक्ष्मी-पूजन के लिए रख लिया। कुछ समय तक मैं धनी के घर निवास करती रही। दीपावली के दिन जब लक्ष्मी को मिष्ठान्न का भोग लगाया गया, मेरा भी मुंह खूब मीठा हुआ, किन्तु रात्रि को प्रसाद के साथ-साथ मुझे भी एक चूहा उठा ले गया और उस धनी के पड़ोसी एक निर्धन के झोंपड़े में डाल आया।

प्रातःकाल जब निर्धन मनुष्य की स्त्री ने मुझे चमचमाते हुए पड़ी हुई देखा तो उसके आश्चर्य और आनन्द की सीमा न रही। रात्रि को वह लक्ष्मी से प्रार्थना करके सोयी थी कि वह उन लोगों पर भी थोड़ी कृपा किया करें। स्त्री ने मुझको अपने पति के सम्मुख उपस्थित किया। पति मुझको पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला—'आज लक्ष्मी देवी तू ही है'। पति-पत्नी बड़े प्रसन्न थे, बार-बार लक्ष्मी की कृपा का बखान करते थे। उन्होंने बड़े यत्न से मुझे सम्भाल कर रखा। मेरा गुण और रूप लोगों को शीघ्र ही आकर्षित कर लेता है। मुझे पाकर लोग अपने को सुखी समझने लगते हैं, परन्तु मैं चंचल हूं, ठहरती किसी

पास नहीं। उस निर्धन-दम्पत्ति ने यह विचार करके कि मैं कहीं भाग न जाऊं, मुझे कुछ रजत मुद्राओं के साथ खड्डा खोदकर भूमि में गाड़ दिया। मेरी सब आशाओं पर पानी फिर गया। वहाँ मुझे कई वर्ष तक कैद रहना पड़ा। बैंक के कारावास से भी मुझे वहाँ अधिक दुःख मालूम हुआ। बिना स्वच्छ वायु के मेरे चेहरे का रंग बदलने लगा। मैं घुल-घुल कर मरने ही वाली थी कि एक चोर ने मेरा उद्धार किया। वहाँ से निकाल कर चोर ने मुझे एक मदिरा बेचने वाले को दे दिया। वहाँ से मैं केवल एक सप्ताह पूर्व ही सर्राफ की दूकान पर पहुंची। सर्राफ के यहाँ से आपने मुझे कल खरीद लिया और आज में अपका मन प्रसन्न कर रही हूं। आप से अब यही प्रार्थना है कि मुझे गलाना मत, नहीं तो मेरा अस्तित्व ही समाप्त हो जायगा। मैंने देखा सचमुच उस बालिका की आँखों में आँसू छलछला रहे थे। मैं उसे सान्त्वना देने के लिए उठा तो मेरी आँख खुल गई, देखा तो वहाँ कोई बालिका नहीं थी। मैं शीघ्रता से उठा और जेब सम्भाली। मुद्रा जेब में सुरक्षित पड़ी हुई थी।

(३) तुलसी सन्त-सुअम्ब-तरु, फूल-फलैं परहेत

१. उक्ति का अर्थ और स्पष्टीकरण।
२ उक्ति का मुख्य भाव 'परोपकार'।
३. परोपकार की आवश्यकता और महत्व।
४. परोपकारी पुरुषों के कुछ उदाहरण।
५. उपसंहार।

यह उक्ति हिन्दी साहित्य गगन के प्रचण्ड-मार्तण्ड गोस्वामी तुलसीदास जी की है, जिनकी अविश्रान्त लेखिनी द्वारा हमारी मातृ-भाषा की अनुपम वृद्धि तथा अपूर्व कल्याण हुआ है। महानुभावों की उक्तियाँ बड़ी सारगर्भित होती हैं, जिनका यदि ध्यानपूर्वक मनन और अनुसरण किया जाय तो कदाचित् ही कोई अभागा संसार में महापुरुष होने से वंचित रहे। इस उक्ति में 'तुलसी' ने बतलाया है कि इस संसार में सन्त पुरुष और स्वादिष्ट फल-युक्त वृक्ष दूसरों के लिए ही उत्पन्न होते है। दूसरे शब्दों में हम इस बात को इस प्रकार कह सकते हैं कि प्रकृति तथा मानव जीवन का लक्ष्य दूसरे की भलाई करना ही है। दूसरे की भलाई करना ही परोपकार कहलाता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज से पृथक् मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं। अतः मनुष्य और समाज का नित्य सम्बन्ध है। मनुष्य की व्यक्तिगत भावनाओं की सामाजिक भावनाओं से टक्कर होना अनिवार्य है। मनुष्य की भावनाओं का आधार उसकी मनोवृत्तियाँ हैं। यदि हम मनुष्य की मनोवृत्तियों का विश्लेषण करें तो हमें उसमें दो प्रबल और मुख्य वृत्तियाँ दिखाई देती हैं—एक स्वार्थ मनोवृत्ति और दूसरी परमार्थ मनोवृत्ति। जब मनुष्य प्रथम वृत्ति के अधीन होता है, तब वह कभी कभी ऐसे काम कर बैठता है कि उसे लोग पाशविक कहने तक में नहीं चूकते; परन्तु जब मनुष्य परमार्थ-मनोवृति में लीन होता है, तब उसकी भावनाओं में स्वार्थ का नितान्त अभाव हो जाता है, और वह प्राणीमात्र के लिए दुःख सहने और उनके हित-साधन के लिए सब प्रकार से तैयार रहता है। वास्तव में इस अवस्था में मनुष्य देवस्वरूप हो जाता है और कविवर गुप्तजी की यह उक्ति—'आभूषण नर-देह का बस एक पर-उपकार है' पूर्णतः चरितार्थ होती है।

परोपकार मनुष्य का आभूषण है। मनुष्य की मनुष्यता इसी में है कि वह इस नैसर्गिक आभूषण से अपने मनुष्यत्व की शोभा बढ़ावे। भारतीय सभ्यता का यह परम्परागत आदर्श है कि मनुष्य अपनी नैतिक उन्नति करे तथा अपने आचार को उच्च बनाये। मनुष्य जाति को इन आचार-सम्बन्धी भावनाओं को उत्कर्ष देने में परोपकार का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। जब तक मनुष्य स्वार्थ के संकुचित वायु-मण्डल से ऊंचा न उठेगा, तब तक उसकी आध्यात्मिक उन्नति होना कठिन है। अतः मनुष्य हृदय में त्याग, बलिदान, अहिंसा, सत्य और न्याय की भावनाओं का वास्तविक प्रेरक परोपकार ही है, जिसके वशी-भूत होकर मनुष्य अपने मानवीय धर्म—प्राणी मात्र पर दया, दुःखी के साथ हार्दिक सहानुभूति निःस्वार्थ प्रेम, पतितों का उद्धार आदि—का पालन करता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि उस मनुष्य से अधिक भाग्यहीन कौन होगा, जो मानव शरीर पाकर भी परोपकार-तरणी द्वारा इस अगाध भवसागर को पार करने की चेष्टा नहीं कर सकता।

भारतीय-साहित्य ऐसे पूज्य महापुरुषों से भरा पड़ा है जिन्होंने परोपकारार्थ अपने प्राणों तक की बाजी लगाने में कभी आगा-पीछा नहीं सोचा।

महाराजा शिवि ने छद्म-वेष धारी कपोत के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। जीमूतवाहन ने यशार्थ अपना शरीर देकर परोपकार का ज्वलन्त आदर्श उपस्थित किया। महर्षि दधीचि ने अपनी हड्डियाँ हँसते-हँसते देवताओं को सौंप दीं। कहाँ तक लिखा जाय, भारत के तो जटायु जैसे वन के पक्षी ने भी सती सीता की रक्षार्थ अपने प्राण गंवा दिये। आधुनिक काल में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी आदि अनेक महापुरुष इसके जीते जागते उदाहरण हैं।

अस्तु, निष्कर्ष स्वरूप यही कहना पर्याप्त होगा कि देश और जाति के उद्धार के लिए परोपकार के समान दूसरी कोई वृत्ति नहीं। यदि मानव हृदय से परोपकार की उदार भावना लोप हो जाय तो समाज का अस्तित्व ही असंभव हो जायगा। अतः मनुष्यमात्र का कर्त्तव्य है कि वह अपने व्यक्तिगत लाभ को न देखकर समष्टिगत लाभ की ओर ध्यान दे, जिससे देश, जाति तथा राष्ट्र का कल्याण हो। हमारे धर्म शास्त्रों का तो सार ही यह है।

अष्टादश-पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम।
परोपकारः पुण्याय पापाय पर-पीड़िनम् ॥

(४) आलस्य

१. भूमिका—समस्त दुर्गुणों का जनक
२. मनुष्यों को काम-चोर बनाने वाला
३. उन्नति में बाधक
४. मानव की सम्पूर्ण शक्तियों को कुण्ठित करने वाला
५. उपसंहार

'अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गए, सबके दाता राम।'

उपर्युक्त दोहा आलसियों के मुख से प्रायः सुना जाता है। आलस्य ... का सबसे प्रबल शत्रु है—'आलस्यं ही मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः'। यह एक दुर्गुण ही ही नहीं, अन्य बड़े-बड़े दुर्गुणों का जनक भी है। जहां आलस्य ने डेरा डाला वहां उत्तम गुण नहीं ठहर सकते। आलस्य पाप को प्रोत्साहन देता

है, इसलिए आलसी का जीवन भी पापमय हो जाता है। यद्यपि वह शरीर से कुछ श्रम नही करता, तथापि उसका मस्तिष्क सदैव बुरे विचारों से भरा रहता है। कहा भी है–'An empty mind is a Devil's workshop'.

मनुष्य प्रकृति से ही कामचोर है, वह श्रम से बचना चाहता है। वह सदा यही चाहता है कि वह कम से कम काम करे और अधिक से अधिक पारिश्रमिक प्राप्त करे। कार्य करने मे लगन और उत्साह होना चाहिए, आलसी में उनका सर्वथा अभाव है। इसलिए वह जो कुछ करता है, वह भी विवश होकर। इसका परिणाम यह होता है कि वह सदा मलिन-मुख रहता है। प्रसन्नता उसके समीप नही आती। प्रसन्नता कार्य करने से प्राप्त होती हैं, आलसी कार्य से मुंह छिपाता है, अत: वास्तविक प्रसन्नता से वह सदा वंचित रहता है। जीवन का आनन्द वही व्यक्ति उठाता है जो श्रमशील और कष्ट-सहिष्णु होता है। आलसी के भाग्य में आनन्द का उपभोग कहाँ? इसलिए आलसी होना महान् अपराध है।

आलस्य की टेव बचपन से ही पड़ती है। जो बालक-बालिकाएं बचपन में आलसी होते है, वे वयस्क होने पर भी आलसी ही बने रहते हैं। युवावस्था में भी उनसे कुछ नही होता-जाता। आलस्य-वश वे अपनी उन्नति के कितने ही अवसरों को खो देते हैं। उनका शरीर तो बेकार हो ही जाता है, साथ ही बुद्धि भी नष्ट हो जाती है, क्योंकि वे उससे काम नही लेते। इसलिए मनुष्य को कुछ न कुछ निरन्तर करते ही रहना चाहिए। जब एक काम समाप्त हो जाय, तब तुरन्त दूसरा काम, जो पहले वाले काम से भिन्न प्रकार का हो सकता है, आरम्भ कर देना चाहिए। यह कहना मूर्खता का द्योतक है कि मेरे पास कोई कार्य नहीं है। कार्य का क्षेत्र अपरिमित है। संसार श्रम-उपासकों को चाहता है, आलसियों को नही। इसलिए आलस्य से कोसों दूर रहना चाहिए।

कुछ लोग दो कार्यों के बीच विश्राम लेना आवश्यक समझते हैं, परन्तु यह विश्राम भी शनैः शनैः आलस्य का रूप धारण कर लेता है, क्योंकि विश्राम करने के बाद फिर काम करने को जी नहीं चाहता। काम करना भी एक प्रकार का नशा है, जोश है, यदि यह एक बार उतर गया तो फिर आसानी से चढ़ता नही। इसलिए मनुष्य को सदा कार्यरत रहना चाहिए। कुछ धनी और रईस

व्यक्ति आलसी होने का बुरा आदर्श प्रस्तुत करते हैं, किन्तु क्या उनके लिये काम का अभाव है ? यदि उनको अपने जीवन-यापन के लिए कार्य करने की आवश्यकता नहीं तो उन्हें चाहिए कि वे दुखी और पीड़ित जनता को सुखी बनाने के लिए कठोर परिश्रम करना सीखें। ऐसा करने स उनका स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा और दूसरे लोगों के अधिक सम्मान के भाजन भी वे बन सकेंगे।

आलसियों को यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि संसार में बिना पुरुषार्थ के कौन बड़ा बनता है, बिना उद्यम के क्या वस्तु प्राप्त हो सकती है, बिना श्रम के कौनसा कार्य सिद्ध होता है–'उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि, न मनोरथैः।' आलसी केवल सुखद कल्पना कर सकता है, शेख-चिल्लियों के से खयाली पुलाव पका सकता है, किन्तु वह सिद्धि-जन्य आनन्द को नहीं प्राप्त कर सकता। लक्ष्मी आलसी से दूर रहती है, वह श्रमशीलों का ही आलिंगन करती है। भाग्य भी उन्हीं का फैलता है जो आलस्य त्याग कर श्रम करते हैं। जो व्यक्ति अकर्मण्य होते है, वे भाग्य को व्यर्थ दोष देते हैं, क्योंकि वे उपयुक्त अवसर पर काम न करके प्राप्य लाभ को भी खो देते है। आलसी समय के महत्व को नहीं समझता, इसलिए वह जीवन का मूल्य नही जानता। समय नष्ट कर देने का अर्थ है शक्ति और सामर्थ्य का नाश और चरित्र का पतन। इसलिए जीवन का एक भी क्षण आलस्य में नही बिताना चाहिए।

निष्कर्ष यह है कि आलस्य एक महान् दुर्गुण है, वह मनुष्य को अधोगति की ओर ले जाता है। उदात्त और श्रेष्ठ वृत्तियों का विनाश करके आलस्य मनुष्य को अकर्मण्य और अस्वस्थ बना देता है। आलस्य मनुष्य को सच्चे सुख और शान्ति से वंचित रखता है। आलसी मनुष्य उस भिख-मंगे के समान है जो परिश्रम करके जीविकोपार्जन नहीं करता, वह दूसरों के सामने सिर नीचा किये हुए याचना करता है। आलसी व्यक्ति भी स्वयं कुछ न कर दूसरों से सहायता प्राप्त करने के लिए उनके मुख की ओर देखा करता है। आलसियों की इससे बड़ी दयनीय स्थिति क्या होगी ? भगवान ने हाथ-पैर दिये है कि वे काम करें, किन्तु वे हाथ-पैर होते हुए भी दूसरों की दया के पात्र बनते हैं–इससे बढ़कर और लज्जा-जनक क्या होगा ? आलसियों से सब दूर रहते हैं, संसार में उनका कोई सम्मान नहीं करता। आलस्य मानव शक्तियों को कुंठित कर देता है। मनुष्य

को आत्म-ग्लानि और घृणा का पात्र बना देता है । अतः जो व्यक्ति जीवन मे सुख, शान्ति और आनन्द चाहता है, उसे आलस्य रूपी शत्रु पर विजय प्राप्त करनी चाहिये ।

(५) वर्तमान परीक्षा–प्रणाली के दोष

१. भूमिका-परीक्षा का उद्देश्य
२. अंक-प्रदान में दोष
३. श्रेणी-विभाजन मे दोष
४. विषय के सांगोपांग अध्ययन का अभाव
५. मौखिक परीक्षा को कोई स्थान नही
६. सदोष प्रश्न-पत्र और उनमे वैकल्पिक प्रश्नो की भरमार
७. परीक्षा-केन्द्रों मे गोलमाल
८. बहुमूल्य समय का नाश
९. उपसंहार

किसी देश की शिक्षा-प्रणाली ही जब दोष-पूर्ण हो, तब परीक्षा-प्रणाली दोष-मुक्त कैसे हो सकती है । वर्तमान परीक्षा-प्रणाली के अनुसार शिक्षार्थी का एक मात्र लक्ष्य है परीक्षा पास करना और शिक्षक का परीक्षार्थी को परीक्षा पास करा देना । बौद्धिक विकास, योग्यता-वृद्धि और पाठ्य विषयों के सम्पूर्ण अंगों के सम्यक परिशीलन को प्रचलित परीक्षा-प्रणाली मे कोई स्थान नही है । परीक्षा शब्द की व्युत्पत्ति है—'परि+ईक्ष+अ', जिसका अर्थ है किसी भी वस्तु वा विषय के गुण-दोषो की सर्वतोभावेन जांच करना । वर्तमान परीक्षा-प्रणाली परीक्षार्थियों के पल्लवग्राही ज्ञान के अल्पांश को ही कतिपय प्रश्नों द्वारा पूछ कर योग्यायोग्य का निर्णय कर उन्हें प्रमाण-पत्र प्रदान कर देने में ही अपने कर्तव्य की इति-श्री समझती है, किन्तु परीक्षा का जो वास्तविक ध्येय है, उससे वह कोसों दूर है ।

आप अंक-प्रदान-क्रिया (Awarding of Marks) को ही लीजिये । परीक्षकों के द्वारा परीक्षार्थियों के लिखित उत्तरो का जो मूल्यांकन करे उन्हें अंक-प्रदान किया जाता है, वह लेश-मात्र भी न्याय-पूर्ण नहीं कहा जा सकता । एक ही प्रश्न को पृथक-पृथक परीक्षक विभिन्न दृष्टिकोणों से जांचते है और

मन-माने ढंग से अंक प्रदान करते हैं। किसी परीक्षार्थी को एक प्रश्न के उत्तर में एक परीक्षक से दस में से चार अंक प्राप्त होते हैं तो दूसरे से उसी प्रश्न के उत्तर में छः और तीसरे से केवल तीन ही। वस्तुतः अंक प्रदान करने की कोई खास प्रक्रिया या कसौटी नही है जिसके द्वारा उत्तरों का ठीक-ठीक मूल्यांकन किया जा सके। प्रायः यह देखने मे आता है कि उत्तर-पुस्तकों को जांचते समय परीक्षक की केवल मनोभावना व तरंग (The whim and Caprice of the examiner) ही काम करती है। जो परीक्षार्थी एक परीक्षक के द्वारा फेल कर दिया जाता है, किन्तु यदि उसकी उत्तर-पुस्तक दूसरे परीक्षक से जंचवाई जाय, तो वह पास हो जाता है। यह कैसा मखौल है।

वर्तमान परीक्षा-प्रणाली का श्रेणी विभाजन भी ठीक नही कहा जा सकता। श्रेणियाँ दो ही होनी चाहिए, तीन नही। तृतीय श्रेणी (Third Class) तो नाम ही बुरा। वास्तव में यदि देखा जाय तो तृतीय श्रेणी प्राप्त करने वाले छात्रों में कोई योग्यता भी नही पाई जाती है। यह बात समझ में नहीं आती कि केवल ३३ प्र. श. अंक प्राप्त करने वाले छात्र को किस प्रकार योग्य मानकर पास कर दिया जाता है जबकि उसमें प्रत्यक्षरूपेण ६७ प्र.श. योग्यता का सर्वथा अभाव रहता है। अब तक छात्र ५० प्र. श व इससे अधिक अंक प्राप्त न कर ले, तब तक उसको पास करके योग्यता का प्रमाण-पत्र देना कदापि न्याय-संगत नही माना जा सकता।

परिचलित परीक्षा-प्रणाली में सबसे बड़ा दोष यह है कि परीक्षार्थी विषय का पूर्ण (विषय के समस्त अंगों और उपांगों का) अध्ययन न करके केवल उत्तीर्ण होने लिए उन्ही अंगों वा अंशों का अध्ययन करते है जो उन्हें पास करा दें। इसका परिणाम यह होता है कि विषय के अन्य उपयोगी अंग वा अंश, जिनका ज्ञान छात्र के लिए परमपयोगी और अपेक्षित है, छोड़ दिये जाते हैं। ऐसी दशा मे छात्रो में वास्तविक योग्यता कैसे उत्पन्न हो सकती है? उदाहरण के लिए किसी भी विषय को लिया जा सकता है। गणित, इतिहास, भूगोल, हिन्दी, अंग्रेजी सभी विषय ऐसे हैं जिनका केवल ५०% अध्ययन करके ही विद्यार्थी सरलता से अच्छे अंकों से पास हो जाते हैं। हमारे पाठ्यक्रम-विधाता भी इस बात की भूल करते आ रहे हैं कि वे पाठ्य-क्रम में विषय के

विविध अंगों के लिए पहले से ही निश्चित अंक निर्धारित कर देते हैं। ऐसी स्थिति में विद्यार्थी और शिक्षक दोनों ही पाठ्य विषय के केवल उन्हीं अंगों वा अंशों को पढ़ते-पढ़ाते हैं जो सरल हों, जिनके अध्ययन-अध्यापन में अधिक श्रम न करना पड़े और जिसमें आसानी से अच्छे अंक प्राप्त हो सकें इनका प्रत्यक्ष प्रमाण आजकल के छात्रों की योग्यता ही प्रकट कर रही है कि उनका शिक्षास्तर कितना नीचे गिरता जा रहा है।

प्रचलित परीक्षा-प्रणाली में यह भी एक दोष है कि सब परीक्षाएं प्रायः लिखित ही होती है, मौखिक परीक्षा को इसमें कोई स्थान नहीं है। विषय कितना ही गम्भीर और महत्वपूर्ण क्यों न हो, प्रश्न-पत्र में मुद्रित केवल पाँच-सात प्रश्नों के द्वारा ही परीक्षार्थी की जाँच करली जाती है। दो-अढ़ाई घंटे के समय में केवल कुछ प्रश्नों का संतोष-प्रद उत्तर ही परीक्षार्थी के लिए सफलता सूचक बन जाता है। इसके अतिरिक्त इनमें सबसे बड़ा दोष यह है कि जो छात्र लेखन-कला में प्रवीण हैं, और जिन्हें परीक्षकों को भले प्रकार झांसा देना आता है, वे फेल नहीं होते चाहे उन्हें पाठ्य विषय का ज्ञान स्वल्प मात्रा में ही हो इसके विपरित वे छात्र, जिन्होने उस विषय के विविध अंगों का सम्यक् अध्ययन और मनन किया है, यदि वे लेखन-कला में दक्ष नहीं हैं, तो उनके पास होने में भी संशय रहता है।

प्रश्न-पत्र निर्माताओं (Paper Setters) द्वारा छांटें गये प्रश्न-पत्र भी कभी कभी बड़े बेढ़ंगें और ऊटपटांग आते हैं। उनमें या तो पिष्ट-पेषण पाया जाता है या आवश्यकता से अधिक छांटने वालों की अक्लमन्दी। इसके दो कारण हैं—एक तो यह है कि जो प्रश्न-पत्र-निर्माता नियुक्त किये जाते हैं, उन्हें उस विषय की और विद्यार्थियों के स्तर की ठीक ठीक जानकारी नहीं होती। ये प्रायः बड़े लोग होते हैं, उच्च कक्षाओं को पढ़ाते है। दूसरा कारण यह है कि कुछ प्रश्न-पत्र-निर्माता होते ही ऐसे हैं जिनका ध्येय ही यह रहता है कि छात्र अधिक संख्या में फेल हों। उक्त दोनों ही प्रकार के प्रश्न-पत्र-निर्माता अवांछनीय हैं। वास्तव में प्रश्न-पत्र-निर्माता ऐसा होना चाहिए जो छात्रों की स्थिति योग्यता आदि से पूर्णतया परिचित हो तथा उसे उस कक्षा के पाठ्यक्रम की भी पूर्ण जानकारी हो।

वर्तमान परीक्षा–प्रणाली में यह भी एक दोष है कि प्रश्न–पत्र में दिये गये प्रश्नों में विकल्प वा छूट (Alternatives or Choice) आवश्यकता से अधिक आती है। प्रश्नों में अधिक विकल्प देना अथवा छात्रों को इस प्रकार की छूट देना कि निम्नांकित (तेरह) प्रश्नों में से केवल पांच प्रश्न करो— विद्यार्थियों के लिये किसी भी प्रकार हितकर नही कहा जा सकता। इसका परिणाम प्राय: यह होता है कि छात्र, जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, प्रथम तो विषय का पूर्ण अध्ययन करते ही नहीं, केवल पास होने के योग्य अंकों वा अंशों का अध्ययन कर लेते हैं, दूसरे, प्रश्नों में इस प्रकार विकल्प और छूट देना छात्रों को और भी निकम्मा और आलसी बना देता है। पाठ्य विषय के विविध अंगो का विश्व-विद्यालय वा बोर्ड द्वारा अङ्क-निर्धारण जिस प्रकार छात्रों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करता है कि वे विषय के किसी भी अंग वा अंश को निःसंकोच छोड़ सकते हैं, उसी प्रकार प्रश्न-पत्र में छांटे गये प्रश्नों में विकल्प वा छूट देना उन्हें गारंटी के साथ इस बात का प्रोत्साहन देना है कि पास होने के लिए उनको विषय के सांगोपांग अध्ययन की कतई आवश्यक नहीं है। क्योंकि केवल चुनी हुई बातों (Selected Studies) को ही तैयार करके पास हो सकते है और वास्तव में ९० प्रतिशत होता भी यही है। वर्तमान छात्रों में योग्यता और ज्ञान का अभाव इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

परीक्षाएं निश्चित केन्द्रों पर होती है। यहां सैकड़ों छात्र एक साथ पास-पास बैठकर परीक्षा देते हैं। निरीक्षकों (Invigilators) के द्वारा भले प्रकार निरीक्षण-कार्य-होते रहने पर भी छात्र अपने साथ छिपा कर लाई हुई पुस्तकों और पंजिकाओं से टीपने तथा अपने साथियों की पंजिकाओं से नकल करने में संकोच नही करते हैं। इन साधनों वा उपायों को काम में लाकर कभी-कभी सर्वथा अयोग्य छात्र भी अच्छी श्रेणी से पास होते देखे हैं। कभी-कभी निरीक्षक भी किन्ही कारणों से परीक्षार्थियों से दब जाता है (लाभ वा भय, दो ही कारण हो सकते हैं) और वह परीक्षा भवन में गोलमाल होते हुए भी परीक्षार्थियों को कुछ कहने का साहस नही करता। बलिहारी है ऐसी परिक्षा-प्रणाली की।

सब से बड़ा दोष इस प्रचलित परीक्षा-प्रणाली में यह है कि यह

हमारे होनहार युवकों की आयु का बहुमूल्य भाग व्यर्थ खो रही है। घण्टों की मंजिल को यह दिनों में नहीं, महीनों में तै करा रही है। भारतियों की औसत आयु २५-२६ वर्ष है और यह देखा जाता है कि हमारे यहां के नवयुक २०-२५ वर्ष तो विद्याध्ययन में ही बिता देते हैं। प्रति वर्ष हम देखते हैं कि कालेजों और स्कूलों में वर्ष भर में केवल पांच छः महिने पढ़ाई होती है, शेष सब समय अवकाश ही अवकाश। इसलिए हमारा सुझाव है कि कक्षोत्तीर्ण परीक्षाएं (Class promotions) वर्ष मे दो बार होनी चाहिएं। बिना किसी दिक्कत के आसानी के साथ बीच में एक महिने का अवकाश देकर वर्ष में दो बार कक्षोत्तीर्ण परीक्षाएं ली जा सकती है। ऐसा करने से यह होगा कि जो छात्र योग्य और कुशाग्र-बुद्धि हैं वे शीघ्र उन्नति कर सकेंगे और जो मंद-बुद्धि है, उनको भी इससे हानि नहीं होगी, कुछ लाभ ही होगा। सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि समय की बचत होगी और १५-१६ वर्ष की अवस्था तक ही योग्य छात्र उपाधि-परीक्षा पास कर सकेंगे।

आशा हैं कि हमारे यहां के शिक्षा- शास्त्री उपर्युक्त दोषों को दूर कर कोई ऐसी नवीन परीक्षा-प्रणाली निकालेंगे जो हमारे छात्रों के लिए सर्वथा उपयोगी और हितकर सिद्ध होगी।

(६) मनोरंजन के साधन

१. भूमिका – मनोरंजन की आवश्यकता
२. मनोरंजन के साधन—प्राचीन और अर्वाचीन
३. आधुनिक साधन—सिनेमा, रेडियो, ग्रामोफोन, खेल-तमाशे आदि
४. उपसंहार।

जीवन-यापन के लिए, अपनी भावी रक्षा के लिए और जीवन में सुख एवं शान्ति प्राप्त करने के लिए मनुष्य को शारीरिक एवं मानसिक श्रम करना पड़ता है। इस वैज्ञानिक युग में जीवन की आवश्यकताएं पहले की अपेक्षा अधिक बढ़ गई हैं, इसलिए आज के मानव को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए श्रम भी पहले की अपेक्षा अधिक करना पड़ता है। परिश्रम कैसा भी किया जाय, उसमें शक्ति का ह्रास होता ही है। मनुष्य निरन्तर काम करते रहने पर थकावट महसूस करता है; क्योंकि उसकी कार्य-क्षमता कम होती जाती है।

अतः अपनी कार्य-क्षमता को बनाये रखने के लिए एवं नष्ट हुई शक्ति की पूर्ति के लिए मनुष्य को विश्राम की महती आवश्यकता होती है। जिस प्रकार थके हुए शरीर को विश्राम देना पड़ता है। थके हुए मन को एक विषय से हटाकर अपनी रुचि के अनुकूल विषय में लगाना ही मनोरंजन की आवश्यकता है। यदि वे मनोरंजन न करें तो शीघ्र ही वे मानसिक रोगों के शिकार हो जायेंगे इसलिए दिन भर में कुछ समय के लिए मनोरंजन भी करना चाहिए जिससे हम थोड़ी देर के लिए अपनी दैनिक चिन्ताओं को भूल जाँय और मन को ठीक अवस्था में रख सकें।

मनोरंजन कई प्रकार से किया जाता है और यह अपनी-अपनी रुचि के ऊपर निर्भर है। किसी को ताश-चौपड़ खेलने में आनन्द आता है तो किसी को सैर-सपाटे में, किसी का मन संगीत में लगता है तो किसी का चित्र-कला में, किसी का मनोरंजन किस्से-कहानियों से होता है तो किसी का चित्र-पट देखने से। प्राचीन काल में मनोरंजन के प्रमुख साधन थे—ताश, चौपड़, शतरंज आदि घरेलू खेल; कठ-पुतली, रास, नाटक आदि, देशाटन, आनन्द-यात्राएँ, प्रकृति-निरीक्षण आदि; घुड़-दौड़, रथ-दौड़, जानवरों की लड़ाई मल्ल-युद्ध आदि; संगीत, चित्र-कला आदि में रुचि; खेल-तमाशे, मेले, सार्वजनिक उत्सव आदि। आधुनिक समय में विज्ञान की उन्नति ने मनोरंजन के साधनों में पर्याप्त परिवर्तन कर दिया है। आज के युग में प्राचीन समय से चले आ रहे मनोरंजन के साधन तो उपलब्ध हैं ही, साथ ही चित्रपट, रेडियो, ग्रामोफोन, विभिन्न प्रकार के खेल-कूद और तमाशे, प्रदर्शनियाँ, सरकस, कार्नीवाल आदि लोगों का मनोरंजन करते हैं।

मनोरंजन के आधुनिक साधनों में चित्रपट (सिनेमा) का प्रमुख स्थान है। चित्रपट मनोरंजन के क्षेत्र में विज्ञान का एक वरदान है। चित्रपट से जितने लोग अपना मनोरंजन करते हैं, उतना अन्य किसी साधन से नहीं, और इसका कारण है इसकी सुलभता। गरीब और अमीर दोनों के लिए यह अपना द्वार खुला रखता है। अमीर लोग तो रेडियो से भी अपना मनोरंजन कर सकते हैं, किन्तु गरीबों के लिए तो चित्रपट ही एकमात्र उत्कृष्ट साधन है जिससे वे थोड़े से पैसों में अपना मनोरंजन कर सकते हैं। आज नाटक का स्थान चित्रपट ने ले

लिया है। चित्रपट में अभिनेता और अभिनेत्रियां स्वयं रंगमंच पर नहीं आते, केवल उनके छाया-चित्र आते हैं। आधुनिक युग में फोटोग्राफी की कला में अत्यधिक विकास होने के कारण अब चित्रपट के पर्दे पर वास्तविक अभिनय के सभी अङ्ग ज्यों के त्यों दिखा दिये जाते हैं। चित्रपट में क्या चीज ऐसी है जो मनोरंजन नहीं करती। कहानी, नृत्य, गायन, प्राकृतिक दृष्य सभी कुछ सिनेमा में एक साथ मिल जाते है। वास्तव में चित्रपट के आविष्कार ने मानव-जाति का वड़ा उपकार किया है। मनोरंजन करने के साथ-साथ चित्रपट मनुष्य को अनेक प्रकार की शिक्षाएँ देता है और उसके ज्ञान और अनुभव को बढ़ाता है।

रेडियो भी चित्रपट की भाँति मनोरंजन का एक उत्कृष्ट साधन है, किन्तु यह अमीरों के लिए है, सर्वसाधारण के लिए नहीं। देश के वड़े-वड़े नगरों में रेडियो स्टेशन बने हुए हैं जहां से निश्चित समय के अनुसार विभिन्न कार्यक्र प्रसारित होते रहते हैं। विदेशों के सब कार्यक्रम भी रेडियो द्वारा सुने जाते हैं अपने कमरे में कुर्सी पर आराम से वैठे हुए या पलंग पर लेटे हुए हम अने प्रकार के कार्यक्रमों का आनन्द ले सकते हैं। सुई घुमाने की देर है कि हम गाने, समाचार, रेडियो नाटक, वार्तालाप, देहाती प्रोग्राम आदि जो चाहें, सुन सकते हैं। कभी-कभी तो रेडियो में इस प्रकार के प्रोग्राम आते हैं कि हम हँसते-हंसते लोटपोट हो जाते हैं। मनोरंजन के अतिरिक्त रेडियो हमारे सामान्य ज्ञान की वृद्धि करता है। इससे राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक, धार्मिक, सांस्कृतिक सभी प्रकार के विषयों के कार्यक्रम सुनने को मिलते हैं जो हमारा ज्ञान-वर्द्धन करते हैं। तत्काल और सीधी खवरें प्राप्त करने का रेडियो ही एकमात्र साधन है। धीरे-धीरे रेडियो का प्रसार हो रहा है। अब पहले की अपेक्षा यह मूल्य में सस्ता होता जा रहा है और जनसाधारण भी इसे अपने घर में लगाने के लिए उत्सुक हो रहा है। आशा है कुछ समय पश्चात् रेडियो घर-घर में स्थान प्राप्त कर लेगा।

ग्रामोफोन भी मनोरंजन का एक अच्छा साधन रहा है, किन्तु चित्रपट और रेडियो के सामने अब इसे कोई नहीं पूछता। रेडियो की अपेक्षा यह बहुत कम मूल्य में आता है और इसमें न बिजली की आवश्यकता है और न बैटरी की। ऐसे स्थान में जहां रेडियो नहीं है, वहां ग्रामोफोन ही मनोरंजन करता

हैं। यह हर कहीं ले जाया जा सकता है। इससे हम केवल मन-चाहे गाने ही सुन सकते हैं, अन्य किसी प्रकार का मनोरंजन नहीं कर सकते।

खेल-कूद, खेल-तमाशे, मेले, प्रदर्शनियां, कार्नीवाल, धार्मिक एवं सामाजिक समारोह भी मनोरंजन के अच्छे साधन हैं, किन्तु ये दैनिक नहीं, समय-समय पर ही इनका आयोजन किया जाता है। हॉकी; क्रिकेट, फुटबाल, घुड़दौड़, खेलकूद आदि से सहस्रों की संख्या में स्त्री और पुरुष दोनों ही अपना मनोरंजन करते हैं। कहीं हॉकी या क्रिकेट का मेच हो रहा हो वहां आप दर्शकों की भीड़ देखिए। कुछ दर्शक तो खेल देखकर इतने भावावेश में हो जाते हैं कि अपनी टोपियां और रूमाल उछालने और बुरी तरह समर्थन अथवा विरोध में चिल्लाने लगते है। समय समय पर आयोजित प्रदर्शनियां भी कम मनोरंजन नहीं करतीं। मेले और सामाजिक समारोह तो होते ही मनोरंजन के केन्द्र हैं। सरकस और कार्नीवाल में विविध प्रकार के व्यायाम और कलामिश्रित शक्ति प्रदर्शन देखकर किसका मनोरंजन नहीं होता। घरघुस व्यक्ति जो बाहर नहीं जाते, घरेलू खेलों—ताश, चौपड़, शतरंज, पिंगपौंग, कैरम आदि से ही मनोरंजन करते हैं।

ललित कलाएं भी मनोरंजन के अच्छे साधन प्रस्तुत करती हैं। कोई संगीत की स्वर लहरी में मस्त है तो कोई चित्र में रंग भर रहा है। कोई कविता बना रहा है तो कोई मूर्ति में प्राण निहित करने का प्रयास कर रहा है। फोटो ग्राफी भी मनबहलाव का अच्छा साधन है। कुछ लोगों का मनोरंजन पुस्तकों से होता है। वे उपन्यास, कहानी, नाटक, प्रहसन आदि पढ़कर मनोरंजन करते है। पत्र पत्रिकाएं भी मनोरंजन के साथ साथ पाठकों को संसार की वर्त्तमान गति विधियों से परिचित कराती हैं। पढ़ेलिखे लोगों के लिए अध्ययन से बढ़कर आनन्द नहीं। इसी उद्देश्य से आजकल स्थान स्थान पर वाचनालय और पुस्तकालय स्थापित किये जा रहे हैं।

मनोरंजन किस के लिए आवश्यक नहीं? साधारण मनुष्य से लेकर महापुरुष तक को मनोरंजन की आवश्यकता होती है। अपने अवकाश के क्षणों को सभी मनोरंजन में बिताना चाहते हैं। बड़े बड़े व्यक्ति (दार्शनिक, विज्ञानवेत्ता, राजनीतिज्ञ आदि) अवकाश के समय अपनी अपनी रुचि के अनुसार मनोरंजन

करते हैं—कोई तबला बजाता है, कोई शतरंज खेलता है, कोई वाइलिन की शरण लेता है और कोई बच्चों के साथ ही मनोरंजन करता है। सारांश यह है कि हमारे दैनिक जीवन में मनोरंजन की बहुत आवश्यकता है। मनोरंजन से ही मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त होता है। इतना अवश्य ध्यान देने योग्य है कि मनोरंजन सीमा के भीतर हो, सामर्थ्य और रुचि के अनुकूल हो और मन की प्रसन्नता के साथ-साथ स्वास्थ्य के लिए हितकर हो।

(७) संस्कृति और साहित्य

१. भूमिका—संस्कृति का अर्थ और साहित्य से सम्बन्ध
२. साहित्य की परिभाषा
३. साहित्य समाज का दर्पण
४. संस्कृति विभिन्न आदर्शों की समष्टि है
५. उपसंहार

संस्कृति शब्द इतना गूढ़ और व्यापक है कि ठीक-ठीक शब्दों में इसकी परिभाषा नहीं दी जा सकती। किसी जाति-विशेष की रहन-सहन, बोल-चाल, आचार-विचार, रुचि-अरुचि तथा धर्म, कला, साहित्य, नैतिकता आदि के प्रति उसका दृष्टिकोण सभी कुछ इसके भीतर आ जाता है। भिन्न-भिन्न जातियों के आदर्श भिन्न-भिन्न होते हैं, अतः उनकी संस्कृति भी भिन्न-भिन्न होती है। जाति-भेद के अनुसार एक ही देश में कई प्रकार की संस्कृतियों का होना सम्भव है। संस्कृति समाज का वह परम्परागत प्रचलित भाव है जो एक व्यक्ति को अन्य जाति वालों से केवल वेषभूषा, बोलचाल और रहन-सहन आदि में ही भिन्न नहीं बनाता, अपितु उसके विचार और भावनाएं भी भिन्न ही होती हैं। संस्कृति क सीधा सम्बन्ध हृदय से है, मस्तिष्क से नहीं। शनैः-शनैः सामाजिक आदर्शों वे परिवर्तित होने पर संस्कृति में भी परिवर्त्तन होता रहता है। संस्कृति का रक्षक साहित्य है। साहित्य के द्वारा ही हम किसी जाति विशेष की सांस्कृतिक दशा क ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इसी कारण साहित्य संस्कृति का प्रतिबिम्ब कहलाता है

महापुरुष अपने अनुभवों और ज्ञान को संचित कर छोड़ जाते हैं, वही उस जाति का साहित्य है। कवि और लेखक समाज के मुख-स्वरूप हैं। जो भाव-धारा समाज में ओतप्रोत है, वही कवि और लेखक की वाणी द्वारा प्रकट होती है। समाज के चिरंतन भावों और प्रचलित धारणाओं का उद्घाटन करना ही सत्कवियों और समर्थ लेखकों का कार्य है। कवि और लेखक प्राप्त परिस्थितियों से संघर्ष करते हैं और नवीन परिस्थितियों का निर्माण करते हैं। उनका ज्ञान परिस्थितियों के सहारे ही विकसित होता है। अतः कवि, लेखक और सुधारक अपने समय की परिस्थितियों के फलस्वरूप और नवीन परिस्थितियों के पुष्पस्वरूप होते हैं।

इसमें किंचित भी अत्युक्ति नहीं कि साहित्य समाज का दर्पण है।

सभ्य और असभ्य समाज की कसौटी उसका साहित्य ही है। साहित्य ही समाज में प्रचलित भाव-धारा की व्याख्या करता है, उसके स्वरूप में संशोधन कर उसे स्थिर बनाता है। साहित्य के द्वारा ही समाज में सद्भावों की जागृति और असद्भावों का विनाश होता है। काल-विशेष की विभिन्न सामाजिक, राजनैतिक आदि परिस्थितियों का दिग्दर्शन केवल साहित्य में ही सम्भव है। विनाशकारी रूढ़ियों का उत्पादन कर समयोचित धार्मिक व राष्ट्रीय भावनाओं का प्रचार करना साहित्य ही का काम है। साहित्य ही क्रान्ति-विधाता और शान्ति-दूत है। साहित्य के द्वारा ही समाज की सौंदर्य-भावना पोषित और वर्द्धित होती है। साहित्य ही समाज को वीर, विलासी और कर्त्तव्य-परायण बनाने वाला है। अन्तः प्रकृति और बाह्य प्रकृति का यथार्थ ज्ञान कराने वाला साहित्य ही है। मनोवृत्ति ही समाज के आदान-प्रदान और आचार-व्यवहार ये मुख्य वस्तु है, और इस मनोवृत्ति का विकास और परिमार्जन केवल साहित्य पर ही अवलम्बित है। सुसंस्कार और सत्प्रवृत्तियों का मूल साहित्य ही हो सकता है। व्यक्ति विशेष पर जितना प्रभाव साहित्य का पड़ता है, उतना कदाचित् ही अन्य किसी वस्तु का पड़ता हो। हमारे उत्थान और पतन का पूर्ण उत्तरदायित्व साहित्य पर ही निर्भर हैं।

जाति-विशेष में प्रचलित विश्वास और उनके अनुकूल आचरण ही संस्कृति हैं। जिस जाति की जैसी संस्कृति होती है, उसके विधानों और

पुरुषों के विचार भी वैसे ही होते है। वे अपने उन विचारों द्वारा संस्कृति के पलभाव को रक्षा करते हैं, नवीन भावों से उसे पुष्ट करते हैं और अन्त में उसे उन्नतावस्था में पहुँचा देते हैं। हमारे विश्वास और आदर्श साहित्य की रक्षा में अहर्निशि प्रयत्नशील हैं। रामायण, महाभारत आदि में हिन्दु-संस्कृति के चित्रों के अतिरिक्त और है क्या ? कालिदास और तुलसीदास इतने आदरणीय क्यों बने हुए हैं ? उनके ग्रन्थों में उल्लिखित आदर्शों का प्रभाव हिन्दु जाति पर किस तरह कितना और कैसा पड़ रहा है ? साहित्य, चाहे वह किसी भी काल का हो, अपने समय के सांस्कृतिक विकास का प्रतिविम्ब है। किन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि वह अपने समय का केवल प्रतिविम्ब ही बन कर नहीं रह जाता, वह उसका पथ-प्रदर्शन भी करता है।

जाति-विशेष की सभ्यता क्या है ? उसमें प्रचलित आचार-विचार तथा उसके आदर्श और विश्वास ही तो हैं। इन्हीं आदर्शों और विश्वासों के आधार पर साहित्य का निर्माण किया जाता है। सामयिक प्रभाव से साहित्य अछूता नहीं रह सकता। विभिन्न परिवर्तनों का कारण साहित्य में सन्निहित है और साहित्य ही समय समय पर अनेक क्रान्तियों को जन्म देता हैं, साहित्य के द्वारा ही उनका विकास और प्रचार होता हैं। जाति विशेष ने किस समय में कितनी अवनति वा उन्नति की और क्यों की ? इसका उत्तर हमें केवल साहित्य द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। संस्कृति के मूल आदर्शों और भावों की रक्षा, वृद्धि और परिमार्जन-सब का आधार साहित्य ही है। अतः साहित्य की रक्षा, उसका सृजन उसकी वृद्धि और उसका शाश्वत चिन्तन करना हमारा परम कर्त्तव्य है।

(८) किसी ऐतिहासिक यात्रा का वर्णन

१. भूमिका—यात्रा कब और क्यों की ?
२. यात्रा का विवरण एवं स्थानों का वर्णन
३. उपसंहार

दशहरे का तेरह दिन का अवकाश आने वाला था। हमारे इतिहास के प्रवक्ता ने हमें सूचना दी कि दशहरावकाश में कालेज का एक छात्र दल वीर भूमि मेवाड़ के भ्रमणार्थ जायगा, अतः जो छात्र जाना चाहे, अपना नाम और मार्गव्यय भोजन आदि के लिए पच्चीस रुपये कल तक जमा करा दें। मैंने भी

पिताजी की स्वीकृति लेकर अपना नाम नोट करवा दिया। ३० दिसम्बर को निश्चित समय पर हमारा दल कालेज-प्रांगण में एकत्र हो गया। हमारे साथ हमारे इतिहास प्रवक्ता और पं० भगवती चरण शर्मा थे।

प्रातः कालीन गाड़ी से हमने अजमेर के लिए प्रस्थान किया और दोपहर एक बजे हम वहाँ पहुँच गये। चित्तौड़ जाने वाली गाड़ी वहाँ से रात्रि को १०–३० पर रवाना होती है, इसलिए समय का सदुपयोग करने के लिए हमने यहां दर्शनीय स्थानों को देखने का निश्चय किया। सर्व प्रथम हमने ख्वाजा साहब की दरगाह देखी जो एक भव्य मस्जिद है और मुसलमानों का एक पवित्र तीर्थ मानी जाती है। तदन्तर हमने वहाँ के प्रसिद्ध जैन मन्दिर 'नसियाँ' को देखा जो कला का एक सुन्दर नमूना प्रस्तुत करता है। इसके बाद हमने 'अढ़ाई दिन का झोंपड़ा' और आनासागर देखा। रात्रि के आठ बज गये थे अतः हम शीघ्र ही वापस लौट आये। भोजनादि से निवृत्त होकर हम ठीक १०–३० बजे चित्तौड़ जाने वाली गाड़ी मे बैठ गये। प्रातः काल ५–३० पर गाड़ी चितौड़ स्टेशन पर पहुँच गई। गाड़ी से उतर कर हमने समीपस्थ एक धर्मशाला में अपना सामान रखा और शौच आदि से निवृत हो कर नाश्ता किया। तदनन्तर हम चित्तौड़ गढ़ देखने के लिए चल दिये।

चौबीस मील के विस्तृत क्षेत्र मे निर्मित भारत का गौरव चित्तौड़-दुर्ग अपनी पूरी शान से एक छोटी सी पहाड़ी पर अटल खड़ा है। दुर्ग के ठीक नीचे १६५४ ई० में बसाया गया चित्तौड नगर इस दुर्ग पर से देखने पर एक घरौंदा-सा प्रतीत होता है। दुर्ग मे प्रवेश करने से पूर्व सात द्वारों को पार करना पड़ता है। प्रथम दो द्वार पहाड़ी काट कर बनाये गये हैं। तृतीय द्वार से किले का प्रमुख परकोटा (प्राचीर) प्रारम्भ होता है। तृतीय और पंचम द्वारों के कपाट अटूट हैं जिनमें अंकुशरूपेण लोहे की भारी भारी शलाकाएँ गड़ी हुई हैं। प्रत्येक दरवाजे पर गौरी-पुत्र गणेश की मूर्ति तथा मार्ग में बनी हुई विभिन्न देवताओं की मूर्तियां मन्द मुस्कराहट के साथ मूक-भाषा में उस काल के महाराजाओं क हिन्दू-प्रेम प्रकट कर रही हैं। दुर्ग के ये सातो दुर्गम द्वार एवं दृढ़ प्राचीर ही दुर्ग की दुर्गमता को दशों दिशाओं में दरसा देते हैं। इन्ही दुर्गम द्वारों में से प्रथमा द्वार पर वीर भगरावत, द्वितीय एवं तृतीय द्वार के मध्य अमर सेनानी जयमल

तथा सप्तम द्वार के भीतर बालक पत्ता ने अकबर की विशाल वाहिनी से सन् १५६७ ई० में युद्ध करते हुए वीर-गति प्राप्त की थी, वहां प्रत्येक स्थान पर एक स्मारक बना हुआ है जो उनके वीर बलिदान का आज भी स्मरण कराता है।

सप्तम द्वार को पार करने पर एक जैन आश्रम है और उसके समीप ही दुर्ग का एक प्रसिद्ध टांका (कुन्ड) है। दाहिनी ओर दुर्ग का गन प्लेटफार्म हैं जो समुद्र-तल से १८५० फुट ऊंचा है। कुछ आगे बढ़ने पर एक पीपल के वृक्ष के नीचे अनगिनती जैन एवं वैष्णव मूर्तियों के संकलित खंडहर पड़े हैं। संभवतया रानी पद्मनी के न प्राप्त होने पर अलाउद्दीन खिलजी द्वारा क्रोधावेश में तोड़े गये मन्दिरों से मूर्तियां एकत्र कर के वहां डाल दी गई हैं। सन् १३०३ ई० में खिलजी सम्राट् अलाउद्दीन द्वारा तोड़े गये भगवान आदिनाथ् के मन्दिर के समीप ही बहुत सी प्राचीन तोपों के भग्नावशेष अरक्षित दशा में पड़े हैं। यहीं पर एक जैनमन्दिर और एक पातालेश्वर महादेव का मन्दिर भी है। किले के एक ओर राणा कुम्भा का पन्द्रहवीं शताब्दी में निर्मित महल अपनी जर्जर अवस्था में उस वीर गाथा-काल की स्मृति मानस-पटल पर अंकित कर देता है। कहते हैं इसी महल की लम्बी सुरंग में पद्मिनी ने अन्य वीर क्षत्राणियों के साथ जौहर की लपलपाती लपटों में कूद कर अपनी कुल-मर्यादा की रक्षा की थी। इसी महल में 'पन्ना धाय' ने अपने एक मात्र औरस पुत्र का बलिदान देकर स्वामी भक्ति का परिचय दिया था।

महाराणा कुम्भा के महल के अवशेषों के कुछ पास ही 'फतह प्रकाश महल है जिसका निर्माण केवल तीन शताब्दियों पूर्व ही हुआ है। फतह प्रकाश के बाईं ओर ग्याहवीं शताब्दी का 'सतबीस देवड़ी' नामक प्रसिद्ध जैन-मन्दिर है जिसके समीप ही 'मीरा' का 'कृष्ण मन्दिर' है। इसी मन्दिर के पास मीरा का स्वयं का बनवाया हुआ 'गिरधर गोपाल' का वह मन्दिर है जहां से विषपान के तुरन्त पश्चात् वह मूर्ति लेकर सदा के लिए वृन्दावन चली गई थी इसी लिये वह मन्दिर आज तक मूर्ति-विहीन होने के कारण मीरा के विष-पान की घटना को ताजा कर देता है। इनके अतिरिक्त दुर्ग में महाराणा कुंभा द्वारा बनवाया गया नव खण्ड का कीर्ति-स्तंभ है और उसके समीप ही एक जैन स्तूप और गोमुख कुण्ड है। चितौड़ दुर्ग का कण-कण शौर्य-गाथाओं से भरा हुआ

भूमि [illegible]

मार्गव्यय भोजन आदि के लिए पच्चीस रुपये कल तक जमा करा दें। मन मा

है। पथ-दर्शक प्रत्येक महल, मन्दिर, स्तूप आदि के विषय में आवश्यक जानकारी तथा तत्संबंधी वीर गाथा कह कर हमारी जिज्ञासा को शान्त कराता जाता था। आगे बढ़ते-बढ़ते हम जयमल और पत्ता के महलों तक पहुँच गये। समय अधिक हो जाने के कारण हम लौट आये, किन्तु मन हमारा अभी तक किले के पवित्र मन्दिरों और महलों में ही रम रहा था। भोजन आदि से निवृत होकर हम उदयपुर जाने वाली गाड़ी में जा बैठे।

पहाड़ियों में होती हुई, गुफाएं पार करती हुई हमारी ट्रेन उदयपुर पहुँच गई। स्टेशन से तागों द्वारा हम हाथी पोल धर्मशाला पहुँचे। दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर बारह बजे तक समस्त कार्यों से निवृत्त होकर हम लक्ष्मी-निवास, सहेलियों की बाड़ी एवं विद्या-भवन देखने के लिए गये। इनमें से प्रत्येक स्थान रमणीय, और महत्वपूर्ण था। दूसरे दिन प्रातः ५-३० बजे ही हमने केशरिया नाथ जी के लिए प्रस्थान कर दिया। हमारी मोटर नौ-दस जगह चौकियों पर भीलों को कर देने के लिए रुकी। सम्पूर्ण मार्ग पाहाड़ियों एवं वनों से सुशोभित था। केशरिया नाथजी का एक जैन मन्दिर है, किन्तु पूजा ब्राह्मण पुजारियों द्वारा की जाती है। केशरिया नाथजी पर दिनभर में बीसियों रुपये की केशर चढ़ती है। केशरिया नाथ जी के दर्शन करके हम पुनः उदयपुर लौट आये, जहां हमने राणाजी के महल, चिड़िया-घर और बीछूला झील देखी। उदयपुर की यह सर्वोत्तम प्राकृतिक सुन्दर झील है जो सहस्त्रों यत्रियों को आर्कषिक करती रहती हैं। हमने भी इस झील में नौकाविहार का आनन्द लूटा। सम्पूर्ण झील कई भागों में विभक्त है जिसके नाम, स्वरूप-सागर, फतह-सागर आदि हैं। इस झील का प्राकृतिक सौन्दर्य अनुपम और-हृदय-ग्राही है। झील से लौट कर हमने उदयपुर के महाराणा से भी मुलाकात की।

दूसरे दिन हम प्रातः काल मोटर द्वारा 'नाथद्वारा' के लिए चल पड़े। मार्ग पहाड़ी और चक्करदार है। मार्ग में कैलाशपति शंकर भगवान की कैलाशपुरी एकलिंग का मन्दिर यात्रियों को रुकने के लिए बाध्य कर देता है। इस मन्दिर के साथ भी खिलजी-सम्राट् अलाउद्दीन के भीषण अत्याचारों की रोमांचकारी घटनाएं संलग्न हैं। मन्दिर के दर्शन करके हम आधे घन्टे में ही नाथद्वारा पहुँच गये। श्री नाथ.जी के मन्दिर में प्रतिदिन तीन चार हजार रुपयों का भोग

प्रसाद आदि मे व्यय होता है। वहां भारत के अन्य पवित्र तीर्थ-स्थानों की तरह यात्रियों की सदा ही भीड लगी रहती है। यही से एक सड़क प्रसिद्ध हल्दी घाटी की ओर जाती है। पूरे चौबीस घन्टे उस देव-भूमि में रहकर हम कांकरोली आये जहां हमने रायसमुद्र नामक एक विस्तृत तालाब देखा। कांकरोली से जोधपुर के लिये जब हम गाड़ी मे रवाना हुए तो मार्ग के रमणीय दृश्यों ने हम लोगों के हृदय को अत्यधिक आकर्षित कर लिया।

चौदह घन्टो तक निरन्तर रेल द्वारा यात्रा करते हुए हम प्रातः ६ बजे जोधपुर पहुँच गये। लाल पत्थर की अधिकता के कारण सम्पूर्ण जोधपुर लाल-लाल दिखाई दे रहा था। यद्यपि बाजार अधिक चौड़ा नही है तथापि नगर सुन्दर है जोधपुर मे दर्शनीय स्थान मंडोर, बालसमद, हवाई अड्डा एवं किला है। पूर्ण दिन जोधपुर भ्रमण करने के पश्चात् रात्रि को १० बजे ट्रेन से हमने वापस जयपुर को प्रस्थान किया और दूसरे दिन दोपहर बारह बजे हम सकुशल अपने-अपने घर आ पहुँचे।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हमारी यह यात्रा बहुत महत्वपूर्ण रही। जिन बातों को केवल पुस्तको मे पढा करते थे, जिन स्थानों के केवल नाम मात्र से परिचित थे, उन्ही स्थानो को एवं उनसे सम्बन्धित कथाओं को प्रत्यक्ष देखा एवं कानों से सुना तो बीते युग की सब घटनाएं सदा के लिए मानस-पटल पर अंकित होगईं जो भुलाये नही भुलाई जा सकती। आज भी हृदय यही चाहता है कि वीर-भूमि मेवाड़ का एक बार फिर भ्रमण किया जाय और उन सतियों को, शूरवीरो को नतमस्तक हो प्रणाम किया जाय जिन्होने कुल-मर्यादा और अप[illegible] स्वतन्त्रता के लिए हंसते हंसते मृत्यु का आलिंगन किया है। वे ऐतिहासिक स्थ[illegible] आज भी हमे देश पर बलि होने की प्रेरणा देते हैं।

(६) विवाह विच्छेद या तलाक

१. विवाह–विच्छेद का अर्थ।
२. तलाक को प्रोत्साहन देने वाले कारण।
३. तलाक की आवश्यकता।
तलाक से लाभ एवं हानि।

परिवार में विवाह अति आवश्यक है। हिन्दुओं के विवाह का आदर्श धार्मिक और सामाजिक है। विवाह का वास्तविक उद्देश्य स्त्री तथा पुरुष के मधुर समन्वय से दोनों को पूर्णता सिद्ध करना तथा सांसारिक सुख-शान्ति प्राप्त करना है। इस प्रकार विवाह-द्वारा परिवार एक सफल संस्था बन जाती है। परन्तु परिवार में स्त्री-पुरुष यह अनुभव करने लगें कि उनका विवाह असफल रहा या है तो इसका क्या उपाय? इसका उत्तर स्पष्ट है कि वे पृथक् हो जायं। विवाह-विच्छेद दोनों ही के लिए समान मार्ग की व्यवस्था करता है जिसको किसी असह्य परिस्थिति आने पर ग्रहण किया जा सकता है। विवाह-विच्छेद दो तरह का हो सकता है—परित्याग तथा तलाक। परित्याग का अर्थ है स्त्री-पुरुष स्वेच्छा से पृथक् हो जायं। इसमें कानून की आवश्यकता नहीं पड़ती। गरीब लोगों में इसी प्रथा का प्रचलन है। तलाक का अर्थ है कानूनी तौर पर विवाह-सम्बन्ध को छोड़ देना। तलाक वैवाहित जीवन की गलतियों को दूर करता है, अतः जहां-जहां विवाह की प्रथा प्रचलित हैं, वहां-वहां किसी-न-किसी रूप में तलाक भी पाया जाता है।

विवाह कोई गुड्डे-गुड्यों का खेल नहीं है। इसमें दो व्यक्तियों को आजन्म साथ रहने के लिये जीवन-साथियों के रूप में बांधा जाता है। धार्मिक दृष्टिकोण भी यही है कि इस सम्बन्ध को दुनिया का कोई कानून नहीं तोड़ सकता, परन्तु ऐसा नहीं होता। इस रोग की सारी जड़ हमारा समाज-विधान ही है। छोटे-छोटे बालक-बालिकाओं का विवाह कर दिया जाता है, जिन्हें अभी यह भी ज्ञान नहीं कि विवाह किस चिड़िया का नाम है। उनका भावी जीवन बड़ा अन्धकारमय सा हो जाता है। विवाह करते समय भी बड़े-बूढ़े लड़के-लड़की की स्वीकृति की परवाह नहीं करते। उनकी प्रकृति एवं रुचि का कोई ध्यान नहीं रखा जाता। फल यह होता है उनका सामाजिक जीवन बड़ा अस्त-व्यस्त सा और नीरस व्यतीत होने लगता है। धन के लोभी माता-पिता, योग्य, स्वस्थ एवं सम-वयस्कता का ध्यान रखे बिना ही अपने लड़के-लड़कियों का विवाह सम्पन्न करा देते हैं। परिणाम यह होता है कि उनका विवाहित जीवन नरक-तुल्य बन जाता है। कभी-कभी विवाह अपने से कई गुना ऊंचे घराने में हो जाता है। वहां परिणाम यह होता है बात-बात में स्त्री-पुरुष अपने-अपने

घर की डींग मारते हैं, शेखियां वघारते हैं, एक अपने को दूसरे से ऊंचा समझता है। ऐसी स्थिति में पति-पत्नी अपने विवाह–सम्बन्ध के लिये अपने कुलवालों को कोसा करते हैं। इन सब बातों से ऐसा प्रतीत होता है कि विवाह के सम्बन्ध में अधिक त्रुटियां माता-पिता या बड़े-बूढ़ों द्वारा ही होती है, किन्तु ऐसी बात नहीं है। आधुनिक समय में रोमान्टिक लव मैरिज युवकों की एक नवीन समस्या है। प्रारम्भ की स्वर्णिम कल्पनाएं प्रणय–बन्धन में बंधते ही कागज के महल की तरह धराशायी हो जाती हैं और उनको अपने किये पर जीवन भर पश्चाताप करना पड़ता है। ऐसी अवस्था में जहां प्रति दिन पति-पत्नी कुत्ते–बिल्ली की तरह घुर्र घुर्र ही किया करते हों, परिवार के आनन्द को चकनाचूर करते हों, वहां तलाक की व्यवस्था के सिवाय और इलाज ही क्या बच रहता है।

तलाक की आवश्यकता को विश्व के समस्त राष्ट्रों ने अनुभव किया है भारत के पूर्व कालीन धर्म-शास्त्रों का अध्ययन करने से पता लगता है कि तत्का-लीन समाज में तलाक को मान्यता थी। मनु का कथन है कि उन्मत्त, पतित, क्लीव और असाध्य रोगों से ग्रसित पति क' त्याग देने में स्त्री अपराधिनी नहीं होती। कौटिल्य ने भी अपने अर्थ-शास्त्र में तलाक को विशेप परिस्थियों में मान्यता दी है। तलाक केवल स्त्री की ओर से ही हो, ऐसी बात नहीं। पूर्वोक्त आधारों पर पुरुष-पक्ष को भी तलाक का उतना ही अधिकार है जितना स्त्री-वर्ग को। परन्तु गये समय में एक नया आदर्श स्थापित किया गया। स्त्री को जहां गृह–लक्ष्मी समझा जाता था, उसे पांव की जूती समझा जाने लगा। उसको जितना नीचे ढकेल सकते थे, ढकेला गया। यहां तक कि तुलसीदास जैसे महान् कवि स्त्री के प्रति "ढोल, गंवार शूद्र पशु, नारी ये सब ताड़न के अधिकारी" ऐसी रचनाएं करने लगे। इस युग में स्त्री का अधःपतन अन्तिम सीमा तक पहुँच गया। जिस प्रकार समय परिवर्तनशील है, उसी प्रकार संसार की प्रत्येक वस्तु भी परिवर्तनशील है। स्त्री स्वयं अपनी अवस्था से कराह उठी। उसने समझ लिया कि उसके स्वयं जागे बिना काम नहीं चलेगा। आज इसी का फल है कि भारतीय संसद में स्त्री के अधिकारों की रक्षा-हेतु तलाक को कानून रूप से स्वीकृत कर लिया गया है। कुछ प्रगतिशील लोगों ने इसकी आवश्यकता पर बल दिया है और पुरजोर शब्दों में उसकी मांग की है।

प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहता है । वह चाहता है कि उसका पारिवारिक जीवन सुखमय हो । किन्तु किन्ही कारणों-वश यदि ऐसा नहीं होता तो मानव अपने जीवन से ऊब उठता है । मनुष्य को सबसे अधिक सुख शान्ति दम्पत्ति जीवन से ही प्राप्त होती है । वह गरीब से गरीब होकर भी अपने वैवाहिक जीवन को आनन्द मय बिताना चाहता है । किन्तु दुखःमय दम्पत्ति जीवन से वह विश्व का स्वामी बन कर भी सुखी नही रहता । परिणाम यह होता है कि आये दिन आत्म-हत्याएं, हत्या–कान्ड और अत्याचारों का बोल-बाला बढ़ता जाता है । दुखी स्त्री-पुरुष नैतिकता–अनैतिकता का कुछ भी ध्यान नही रखते । तलाक ने इन सब सामाजिक बुराइयों का अन्त-सा कर दिया है । भारतीय समाज में तलाक प्रथा ने स्त्री–जाति के उत्थान में बड़ी मदद की है । आज उसकी समाज में स्थिति अच्छी होती जा रही है । पुरुष अपने अनैतिक कार्यों पर काबू करता जा रहा है। फलतः आज का पारिवारिक जीवन अधिक सफल एवं सुखी दीखने लगा है ।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है । वह समाज में सुखी रहना चाहता है । उसका पारिवारिक जीवन जितना सुखी होगा, समाज में रहकर वह उतना ही प्रसन्न रहेगा । यह ठीक है कि तलाक ने विवाह की स्थिति को सुधारा है, नया मोड़ दिया है । किन्तु क्या तलाक से ही सारा पारवारिक जीवन सुखी बनता है । यह मानने योग्य बात नही । जहां तलाक ने स्त्रियों की स्थिति में सुधार किया है, वहां समाज के लिए भी नई समस्याएं उत्पन्न करदी हैं । आज कितनी स्त्रियां उच्छंखल तथा कामुक पुरुषों की शिकार होती जा रही है । संसार का धनाढ्य देश अमेरिका इसका उदाहरण है । साधारण घटनाओं पर वहां तलाक दे दिया जाता है । भारत की स्थिति तो और भी विषम है । स्त्रियों में शिक्षा का अभाव, आर्थिक दृष्टि से भी वे अपने पांवों पर खड़ी नहीं है । ये सब ऐसी बाते हैं जो उसे कुए से निकाल कर खाई में डाल देगी । कुछ मनचली युवतियां जान-बूझ कर अपने पतियों पर झूंठा दोष लगाने का दुस्साहस करने लगेंगी । कल वे चमड़े की कठपुतली की तरह दर-दर की ठोकरे खाती फिरेंगी उनके बच्चों की स्थिति चक्की के दो पाटों के बीच की होगी । देश में आवारा छोकरों की भरमार होगी, और समाज का ढांचा ही कुछ और प्रकार का होगा

भारतीय संस्कृति का आदर्श नया बनाया जायेगा। जिन देशों में आज तलाक प्रथा रोकने पर विचार किया जा रहा है, वहां हमारे यहां इसको चालू किया जा रहा है।

कुछ भी हो, तलाक आज के समाज की एक आवश्यक समस्या है। जहां यह अनुभव किया जाय कि दो आत्मायें एक साथ मिलकर बिलकुल नहीं रह सकती, वहां कुछ परिवर्तन करना ही श्रेयस्कर होगा। विवाह-विच्छेद की अधिकता को दूर करने पर विचार किया जाना चाहिए। युवक एवं युवतियों को विवाह तथा पारिवारिक जीवन के लिए आवश्यक शिक्षा दी जानी चाहिए। विवाह-निर्णय सावधानी से किया जाना चाहिये। विवाह-विच्छेद की अनुमति गम्भीर विमर्श के पश्चात् ही दी जानी चाहिये। सबसे मुख्य बात यह है कि यदि स्त्री स्वयं शिक्षित तथा अपने पैरों पर खड़ी होने योग्य हो तो तलाक से होने वाली कोई हानि नहीं होगी, शर्त यही है कि वह अपने विवेक से काम ले, और इस प्रकार तलाक सामाजिक बुराइयों के लिये एक सुन्दर अस्त्र साबित होगा।

(१०) राजस्थान में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण

१—भूमिका—भारत में लोकतंत्र-शासन-प्रणाली
२—महात्मा गांधी के विचार—ग्रामोत्थान और ग्राम-पंचायत
३—समाजवाद और विकेन्द्रीकरण
४—राजस्थान में लोकतंत्रीय विकेन्द्रीकरण
५—विकेन्द्रीकरण की त्रिमुखी योजना—पंचायत, पंचायत-समिति और जिला परिषद
६—योजना का कार्य-विवरण
७—उपसंहार

स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् सन् १९५० ई० से भारत में लोक-तंत्र-शासन-प्रणाली चल रही है। भारत का संविधान भारत में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना करना चाहता है—एक ऐसे कल्याणकारी राज्य की जिसमें प्रत्येक नागरिक को रहने को घर, खाने को भोजन, पहिनने को कपड़ा एवं अन्य जीवनोपयोगी सामग्री मिल सके, जिसमें निर्धनता और बेरोजगारी न हो तथा जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्ररूप से अपना विकास करने का अधिकार और

मेवाड़ के भ्रमणार्थ ...
व्यय भोजन आदि के लिए पच्चीस रुपये कल तक जमा करा दें। मैंने भी

अवसर मिले। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारतीय संविधान में कुछ ऐसे निर्देशक तत्वों का समावेश किया गया है जो राज्य-सरकारों को समाजवादी व्यवस्था लाने मे प्रेरणा देते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति केवल लोकतंत्र-शासन-प्रणाली में ही संभव है।

हमारे राष्ट्र-पिता महात्मा गांधी भारत में राम-राज्य की स्थापना करना चाहते थे। भारत की जनता ग्रामों में निवास करती है। ग्राम भारत की आत्मा हैं, इसलिए गांधीजी जनता की सत्ता अधिक से अधिक जनता के हाथों में सौपने के लिए ग्राम-पंचायतों की स्थापना पर बल देते थे, तथा भारत की दरिद्रता एवं बेकारी को दूर करने का साधन वे ग्रामोद्योगों और कुटीर उद्योगों को समझते थे। खेद है कि आज वे अपने इन विचारों को कार्य रूप में परिणित होते हुए देखने को हमारे बीच नही है।

भारत की वर्तमान सामाजिक और आर्थिक स्थिति ठीक नही है। यहाँ की जनता भी अभी शिक्षित नही है, इसलिए एक दम परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। विभिन्न उपायों द्वारा धीरे-धीरे लोगों के विचारों में परिवर्तन लाया जा रहा है। सर्वोदय, श्रमदान, भूदान आदि आन्दोलन भारत में समाजवादी विचार-धारा को विकसित करने के लिए ही चलाये जा रहे है। समाजवाद सब व्यक्तियों को समान मान कर चलता है, चाहे वे श्रमजीवी हों या बुद्धि-जीवी। भारत में गांधीवादी समाजवाद को, जिसमें भौतिक और आध्यात्मिक दोनों पक्षों पर ध्यान दिया जाता है, चलाया जा रहा है। वर्गहीन और शोषण-रहित समाज की रचना तभी संभव हो सकती है जब सत्ता, सम्पत्ति और साधनों का विकेन्द्रीकरण हो। पूँजीवादी व्यवस्था में केन्द्रीयकरण होता है और सत्ता, सम्पत्ति और साधन कुछ ही लोगों के हाथ में रहते है, इसलिए ऐसी व्यवस्था में न न्याय मिलता है और न सबको समान सुविधाएं। लोकतंत्र में सत्ता समाज में विकेन्द्रित होती है तथा किसी भी वर्ग को इतनी सत्ता प्राप्त नहीं होती कि वह दूसरों का शोषण करे वा स्वयं निरंकुश बन बैठे। लोक-तंत्रीय नियोजन का उद्देश्य ही लोक-कल्याण है। इसीलिए वह राष्ट्र के प्रत्येक विकास-कार्य में जनता को भावना और सहयोग की अपेक्षा रखता है। ऐसी स्थिति में लोकतंत्र-शासन में विकेन्द्रीकरण आवश्यक है।

राजस्थान में लोकतंत्रीय विकेन्द्रीकरण का श्रीगणेश सन् १९५९ ई० से हुआ है। राजस्थान विधान-सभा ने राजस्थान पंचायत–समिति तथा जिला परिषद् बिल पास करके विकेन्द्रित प्रशासन की व्यवस्था चालू की है। मद्रास और आन्ध्र के वाद राजस्थान ही तीसरा राज्य है जो वलवन्तराय मेहता की विकेन्द्रीकरण सम्बन्धी सिफारिशों को कार्यान्वित कर रहा है। इससे पूर्व राजस्थान जैसे पिछड़े राज्य की गरीब जनता का उत्थान करने के लिए एक योजना कमेटी बैठाई गई थी, जिसने विकेन्द्रीकरण के त्रिमुखी स्वरूप को विधान के समक्ष रखा। विधानसभा ने आवश्यक संशोधन के साथ इसे स्वीकार कर लिया तथा १९५९ की गांधी-जयन्ती के पवित्र अवसर पर इसे आरंभ कर दिया। राजस्थान को विकेन्द्रीकरण योजना का उद्घाटन करते हुए भारत के प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने नागोर में कहा था—''आज हम महात्मा गांधी के स्वप्न को साकार रूप देने जा रहे हैं। देश की जनता को इस योजना से वास्तविक लाभ होगा, ऐसी पूर्ण आशा है। राजस्थान जैसे पिछड़े हुए प्रान्त में इस योजना का प्रारंभ करते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता है, यह राजस्थान और भारत दोनों के लिए स्वर्ण अवसर है। राजस्थान में इस योजना की सफलता देख कर अन्य प्रान्त भी इसका अनुकरण करेंगे''।

विकेन्द्रीकरण की इस त्रिमुखी योजना का लक्ष्य यह था कि गांवों की समस्याओं का समाधान करने के लिए पंचायतों, पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों का संगठन किया जाय। इस योजना के अनुसार प्रत्येक १५०० की जन-संख्या वाले ग्राम में एक ग्राम-पंचायत की स्थापना की गई है तथा वहुत सी पंचायतों को मिलाकर एक पंचायत समिति के गठन की व्यवस्था की गई है। वहुत सी पंचायत समितियों का जिले में एक संगठन किया गया है, जिसे जिला परिषद् कहते हैं। पंचायत में पंच तथा सरपंच जनता द्वारा चुने जाते हैं। सरपंच ग्राम-पंचायत का मुखिया होता है और उसी पर अपने पञ्चायत-क्षेत्र की जनता के उत्थान करने का दायित्व होता है। पंचायतों के सदस्यों को महिला सदस्यों, पिछड़ी हुई जाति के सदस्यों तथा हरिजन सदस्यों के अभ्यर्थन (Co-option) करने का अधिकार है। कई पंचायतों के सरपंच मिलकर पंचायत-समिति का गठन करते हैं, जिसमें उस क्षेत्र का विधान सभाई सदस्य

भी भाग लेता है। सरपंच सात या आठ सदस्यों का अभ्यर्थन करते हैं, तत्पश्चात् वे प्रधान का चुनाव करते है। प्रधान पंचायत-समिति की देखरेख करता है। सरकार की ओर से भी कई अधिकारी पंचायत समिति में नियुक्त किये जाते हैं जिनमें विकास-अधिकारी (Development Officer) प्रमुख होता है। पंचायत समिति लगभग १०० गांवों की ७५००० जनता का प्रतिनिधित्व करती है तथा उस क्षेत्र को विकसित करने का कार्य करती है।

जिले की पंचायत समितियों के प्रधान, विधानसभा के सदस्य तथा लोकसभा के सदस्य जिला परिषद् का निर्माण करते हैं। वे कुछ सदस्यों का अभ्यर्थन करते हैं तथा जिला परिषद् के प्रमुख का चुनाव करते हैं। जिला-स्तर के सभी सरकारी अधिकारी अपने-अपने विषय में इसे परामर्श देते हैं। जिलाधीश जिला परिषद् का स्थापन्न सचिव (Officio-Secretary) होता है। कार्यवाहक सेक्रेटरी सरकार की ओर से नियुक्त किया जाता है। जिला परिषद् का सेक्रेटरी जितना कार्य-कुशल होता है, उतना ही वह पंचायत समितियों तथा जिला परिषद् को लाभ पहुँचाता है। जिला परिषद् पंचायत समितियों के बजट को पास करती तथा उनके काम की देखभाल करती है। पंचायत समिति के अधीन पंचायतों में ५ से ७ तक पंचायतें एक न्याय-पंचायत बनाती हैं। प्रत्येक पंचायत के पंच तथा सरपंच न्याय-पंचायत के लिए एक सदस्य का चुनाव करते हैं। इस प्रकार चुने गये पांच या सात सदस्य अपने में एक को न्याय पंचायत का अध्यक्ष चुनते हैं। इस संगठन का उद्देश्य जनता को सस्ता न्याय देना है जिससे ग्रामीण जनता का बड़े-बड़े न्यायालयों से पीछा छूटे तथा उन्हें स्वयं भी न्याय करने का अधिकार मिले।

उपर्युक्त तीनों संगठन जिले की ५ लाख देहाती जनता का विकास करते हैं। इस प्रकार जिले भर में पंचायतों, पंचायत-समितियों तथा जिला परिषद् के निर्माण का श्रीगणेश राजस्थान में किया गया है। ऐसा करने से जनता के हाथ में पर्याप्त राजनीतिक और आर्थिक शक्ति आगई है। अब यह भय नहीं रह गया है कि सरकार के उच्च अधिकारी तथा प्रतिनिधिगण लोभ में आकर जनता का अहित कर देंगे। अब तो जनता स्वयं अपनी प्रभु है, वह अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिए पूर्ण स्वतंत्र और साधिकार है।

इस योजना के कार्यान्वित होने से एक साधारण नागरिक को यह महसूस होने लगा है कि मैं एक स्वतंत्र नागरिक हूं। किन्तु इस योजना के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है अज्ञान की। अशिक्षा के कारण लोग सामाजिक बुराइयों में फंसे हुए है तथा इस योजना के शुभ परिणामों को भी वे शंका की दृष्टि से देखते है। यद्यपि सरकार और जनता के प्रतिनिधि जनता की इस गलत धारणा को दूर करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है, तथापि जिस स्थिति के आने की आशा की जा रही है, उसके आने में अभी समय लगेगा। ग्रामोद्योग, लघु उद्योग तथा अन्य कई तरीकों से भी ग्रामीण जनता को ऊंचा उठाया जा रहा है, शिक्षा और स्वास्थ्य का प्रचार कर उसे आत्म-निर्भर बनाया जा रहा है, तथा नगर ग्राम के महान् अन्तर को समाप्त किया जा रहा है। वह दिन दूर नहीं जब राजस्थान में यह योजना एक स्वर्णिम भविष्य को शीघ्र ही प्रत्यक्ष कर देगी जिससे ग्रामीण जनता को भी स्वतंत्रता का वास्तविक आनन्द मिल सकेगा।

(११) छत्रपति शिवाजी

१. भूमिका
२. जन्म और कुल
३. बाल्यकाल तथा शिक्षा
४. युवावस्था (राज्याभिषेक)
५. मुख्य घटनाएं
६. चारित्रिक विशेषताएं
७. मृत्यु तथा प्रभाव

जिस समय देश में सर्वत्र मुगल सम्राट् औरंगजेब की दुंदुभि बज रह थी। औरंगजेब की हिन्दू-विरोधी नीति के कारण देश में हाहाकार मच रह था। हिन्दुओं के मन्दिर तुड़वा कर मस्जिदें बनवाई जा रही थीं, उनसे जजिय कर वसूल किया जा रहा था। औरंगजेब के अत्याचार अपनी पराकाष्ठा प पहुंच चुके थे। हिन्दू-जाति में घोर निराशा छाई हुई थी, उसको उद्धार का कोई मार्ग दिखाई नही दे रहा था। ऐसे समय में हिन्दू-कुल-भूषण, महाराष्ट्र-केशरी छत्रपति शिवाजी का अवतार हुआ।

महाराज शिवाजी का जन्म पूना के निकट सन् १६२७ ई० में हुआ था। वे सिसोदिया कुल के भोंसला सरदार शाहजी के पुत्र थे। इनकी माता का नाम जीजाबाई था जो एक परम विदुषी और धार्मिक स्त्री थी। जीजाबाई अपने पुत्र को बचपन में वीरता की कहानियाँ सुनाया करती थी जिनका बालक शिवाजी पर गहरा प्रभाव पड़ा। माता की अभिलाषा थी कि उनका पुत्र परम पराक्रमी और यशस्वी बने। माता की शिक्षा-दीक्षा ने बचपन से ही शिवाजी के हृदय में भावी महत्ता के बीज बो दिए थे।

माता से शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करके शिवाजी ने दादाजी कोंडदेव और समर्थ स्वामी रामदास के संरक्षण मे शास्त्र-विद्या ग्रहण की। शिवाजी की प्रकृति चंचल और बुद्धि तीक्ष्ण थी। उनका मन अध्ययन में न लगता था। वे 'मावली' बालकों के साथ दल बनाकर युद्ध के खेल खेला करते थे। माता के द्वारा सुनाई गई शौर्य और पराक्रम की कहानियाँ उनके मस्तिष्क में चक्कर काटती रहती थीं। वे अपने आपको एक वीर योद्धा बनाना चाहते थे। इसलिए उनको युद्ध-कला से प्रेम था। फिर शिवाजी को गुरू भी ऐसे ही मिल गये जिन्होंने शिवाजी के हृदय को अदम्य उत्साह से भर दिया।

देश और धर्म पर मुसलमानों द्वारा किए गए अत्याचारों के कारण शिवाजी का हृदय बचपन में ही द्रवित हो उठा था। उनके हृदय में स्वतन्त्रता के भावों की जागृति हुई। युवा होते-होते उन्होने अपने बचपन के मावली साथियों को संगठित किया। वे किसी के सामने सर झुकाना नही चाहते थे। रण-कला में तो निपुण थे ही, उन्होंने बीजापुर के दुर्गों पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया और एक-एक करके सब पर अधिकार कर लिया। जब बीजापुर के बादशाह ने इनके पिता शाहजी को, जो उसके यहाँ नौकरी करते थे, कैद कर लिया, तब शिवाजी ने दिल्ली से पत्र-व्यवहार करके उन्हें छुड़ा दिया। धीरे-धीरे शिवाजी ने अपनी शक्ति बढ़ाली और पुरन्दर, तोरण आदि कई महत्वपूर्ण किलों को जीत कर अन्त में सन् १६७४ ई० में रायगढ़ के दुर्ग में अपना राज्याभिषेक किया। अष्ट प्रधान मन्त्री-मण्डल की स्थापना करके उन्होंने अब विधिपूर्वक राज्य का संगठन कर शासन करना प्रारम्भ कर दिया।

शिवाजी की इस प्रकार बढती हुई शक्ति को देखकर मुसलमानी राज्य

भयभीत हो गये। उन्होंने शिवाजी को कैद करने वा वध करने के अनेक षड्यंत्र रचे। बीजापुर के बादशाह आदिलशाह ने अपने कुशल सेनापति अफजल खाँ को, जो एक धूर्त और चालाक व्यक्ति था, शिवाजी से लड़ने के लिए भेजा। जब दोनों का मिलन हुआ तो अफजल खाँ ने शिवाजी पर तलवार का वार किया। शिवाजी इन सब बातों के लिए पहले से तैयार थे। उन्होंने वार बचाकर तत्काल खान के पेट में अपना बघनखा घुसेड़ दिया और खान का अन्त कर दिया। छिपे हुए मराठी वीरों ने बीजापुर की सेना पर एकदम टूटकर उसको तितर-बितर कर दिया। परिणाम यह हुआ कि बीजापुर के बादशाह ने शिवाजी से सधि करली और उन सब दुर्गों पर, जिनको शिवाजी जीत चुके थे, शिवाजी का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। शिवाजी की इस विजय ने मुगल सम्राट् औरंग-जेब की आँखें खोल दीं। वह भी शिवाजी की निरन्तर बढ़ती हुई शक्ति से चौकन्ना हो गया। उसने शिवाजी से लड़ने के लिए शाइस्ता खाँ को भेजा, किन्तु चतुर शिवाजी ने उसकी चार अंगुलियाँ काट कर उसको भी भगा दिया। अंत में कूटनीतिज्ञ औरंगजेब ने राजा जयसिंहजी को शिवाजी को पकड़ने के लिए भेजा। जयसिंह ने शिवाजी को अनेक वचन दिये और शिवाजी को वह आगरे ले आया। किन्तु दिये हुए वचनों के अनुसार अपना सत्कार न पाकर शिवाजी मुगल दरबार में ही बिगड़ उठे और वह आगरे के किले में कैद कर दिए गये, जहाँ से वे कुछ समय पश्चात् निकल भागे और दक्षिण में पहुँच गये। औरंग-जेब ने फिर एक बार जयसिंह को शिवाजी से लड़ने के लिए भेजा, किन्तु वे मुंह की खाकर लौट आये। इन सफलताओं ने शिवाजी की शक्ति और साहस को और भी बढ़ा दिया और अब वे अहमदनगर से भी चौथ वसूल करने लगे।

शिवाजी उच्च चरित्र वाले व्यक्ति थे। धर्म पर उनका अटल विश्वास था, किन्तु औरंगजेब की तरह वे धर्मान्ध न थे। वे सभी धर्मों का आदर करते थे। युद्ध में पकड़ी गई मुसलमान महिलाओं एवं कुरानशरीफ की प्रतियों को वे आदरपूर्वक वापस कर देते थे। शिवाजी विलासी वा कामुक नहीं थे। वे अत्यन्त श्रमशील और कष्ट-सहिष्णु थे। वे कर्त्तव्य-निष्ठ, निर्भीक, अदम्य उत्साही, दृढ़ आत्म-विश्वासी, प्रजा-पालक, स्वतन्त्रता-प्रेमी और आर्य-संस्कृति के प्राण-पण से पोषक व रक्षक थे उन्होंने अत्याचार के विरुद्ध तलवार उठाई थी और जीवन-

पर्यन्त वे अपने इस आदर्श पर अडिग रहे।

सन् १६६० ई० में ५३ वर्ष की आयु में महाराज शिवाजी ने रायगढ़ दुर्ग में, जहाँ उनका राज्याभिषेक हुआ था, अपना यह भौतिक शरीर छोड़ा। इतने बड़े साम्राज्य की स्थापना करके उन्होंने कभी अभिमान नहीं किया। इसे वे गुरु रामदास की कृपा वा प्रसाद समझते थे। महाराज शिवाजी ने मराठा जाति का तो संगठन किया ही, हिन्दू-राष्ट्र के निर्माण का बीजारोपण भी उन्होंने ही किया। स्थान-स्थान पर यवनों को हरा कर एवं हिन्दू-धर्म और संस्कृति की रक्षा कर उन्होंने हिन्दुओं में राष्ट्र-प्रेम जागृत किया। शिवाजी के अभ्युदय से मुसलमानी अत्याचार बहुत कम हो गये थे। मुसलमानी शासक शिवाजी से भय खाते थे। तत्कालीन समाज और राजनीति पर शिवाजी का बहुत प्रभाव पड़ा जो कई वर्ष तक रहा। शिवाजी भारत के चिरस्मरणीय महापुरुषों में से एक हैं, इसमें कोई संशय नहीं।

(१२) श्रमदान

१. प्रस्तावना
२. श्रमदान का अर्थ
३. श्रमदान का क्षेत्र
४. श्रमदान से लाभ
५. उपसंहार

आज हम स्वतन्त्र भारत के नागरिक हैं। कल की बात और थी जब हम पर विदेशी लोग शासन करते थे। उस समय हमारा कोई उत्तरदायित्व न था। न हमें राजकीय कार्य में रुचि थी, न सामाजिक कार्य से प्रेम; केवल सुख चैन से लम्बी तानना ही हमारा काम था। परन्तु आज हम विदेशी शासन से मुक्त हैं और यह मुक्ति अपने साथ भारतीय नागरिक के लिए अनेक जुम्मेदारियाँ लेकर आई है। भारत के प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने स्वतन्त्रता के प्रथम प्रभात में ही इसे अनुभव किया और 'आराम हराम है' इन शब्दों में व्यक्त किया। हम अपने पिछड़ेपन का सारा दोष विदेशियों को देते रहे हैं, पर आज तो शासन की बागडोर हमारे स्वयं के हाथों में है। यदि अब भी हमने अपना आराम न छोड़ा तो हमारी दशा सुधरने की नहीं। एक अनोखी मनो-

वृत्ति लोगों में फैली हुई है, लोग आगे तो बढ़ना चाहते हैं पर करना कुछ भी नहीं चाहते। यह बात सर्वथा असम्भव है। जो देता है, उसे ही मिलता है। निःसंदेह भारत सरकार अपनी प्रजा की सुख-समृद्धि के लिये प्रयत्नशील है, किन्तु इसके लिये हम को भी त्याग करना पड़ेगा, कुछ छोड़ना पड़ेगा, कुछ दान देना पड़ेगा। भारत में जन-शक्ति की कमी नहीं। यदि उसे राष्ट्रीय विकास में तन-मन से लगा दिया जाय तो देखते-ही-देखते भारत का रंग रूप ही बदल जाय। जो काम रूस तथा अमेरिका ने २५वर्षों में किया है, भारत उसे थोड़े समय में ही पूरा कर सकता है, पर इसके लिये चाहिये आपका त्याग, आपका श्रम-दान।

भारत स्वतन्त्र हुआ। भारत-माता के अनेक लाल अपने प्राणों की बाजी लगा कर स्वतन्त्रता-संग्राम में जूझ—जेल गये, लाठियां खाईं, गोलियां खाईं, और यहां तक कि शहीद हो गये। यह सब उनका रक्त-दान था। इसको परिश्रमिक मिला, पारितोषिक मिला 'भारत की स्वतन्त्रता'। किन्तु केवल राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेने मात्र से भारतवासियों को सुख-चैन मिल जाय, यह बात युक्ति-युक्त नहीं। लोगों का जीवन-स्तर ऊंचा उठना चाहिए। लोगों को रोटी, कपड़ा, शिक्षा एवं घर आदि की पूरी सुविधा प्राप्त होनी चाहिए। ये सब आसमान से टपकने वाले नहीं, इनके लिए आपको और हमको परिश्रम करना पड़ेगा; अपने लिए नहीं, सबके लिए; एक के लिए नहीं अनेकों के लिए। यही श्रमदान का सही अर्थ है। आज भारतोत्थान में प्रण से कटिबद्ध देशवासी केवल श्रमदान ही नहीं, धन-दान, बुद्धि-दान तथा भू-दान आदि आंदोलनों में तन-मन-धन से लगे हुए हैं। भारत-माता अपना आंचल फैला कर आज अपने पुत्रों से मांग करती है कि वे परिश्रम करें। राजनैतिक स्वतन्त्रता से अधिक मूल्य आर्थिक स्वतन्त्रता का है। यदि हमारी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ और मजबूत हो गई तो हमारी राजनैतिक स्वतंत्रता भी स्थिर रह सकेगी। परन्तु इसके लिये श्रम या मेहनत करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं।

प्रायः लोगों को कहते सुना है कि वे श्रम किस जगह जाकर करें। यह प्रश्न बड़ा विचित्र दिखाई देता है। आज भारत का कौन-सा स्थान ऐसा है जहां श्रम की आवश्यकता न हो। यदि आप विद्यार्थी है या अध्यापक हैं तो भारत के कोटि-कोटि अशिक्षित लोगों में ज्ञान का प्रकाश फैलाइए। आप जिस

गांव अथवा नगर में रहते हैं, वहां से गन्दगी दूर करने में योग दीजिए। बीमारों की सेवा शुश्रूषा कीजिए। उधर देखिये, गांव की ऊबड़-खाबड़ भूमि आपका श्रमदान मांगती है. कल वहाँ लहलाहाते हरे-भरे-खेत हो सकते हैं। राजस्थान की मरुभूमि हरियाली चाहती है। भारत का उत्थान आप से नई सड़कें, नये पुल, नये बांध, नये कल-कारखाने और बहुत कुछ मांग रहा है, दीजिए आप जितना दे सकते हैं। काम इतना है कि आपको पल भर भी आराम न मिले। पर लोग श्रम से शर्म करते हैं। फावड़ा और कुदाली चलाने में लज्जा आती है। शिक्षा का उद्देश्य कागजी घुड़दौड़ ही नहीं, उसकी सही सार्थकता शारीरिक श्रम के साथ है। आइए, सामुदायिक विकास योजना के साथ मिलकर श्रमदान करें। श्रमदान का क्षेत्र चारों ओर है। अपनी इच्छा और योग्यता के अनुसार आपको काम मिलेगा। आज रूस और चीन को देखकर हम आश्चर्य करते हैं, कल चीन और रूस वाले हमारे श्रमदान के चमत्कार से दांतों तले उंगली दबाने लगेंगे।

संघर्ष ही जीवन है। जीवन में यदि संघर्ष ही नहीं, तो जीवन नीरस है। श्रमदान हमें संघर्षों से लड़ना सिखाता है। श्रम-दान के समय लोग कठिन से कठिन काम को हंसते-हंसते पूरा कर डालते हैं। पहाड़ों को मैदानो में बदल देते हैं; ऊसर भूमि में लहलहाते खेत बना देते हैं। श्रमदान का सबसे प्रमुख लाभ तो यह हुआ है कि अब तक बुद्धि-जीवी वर्ग, जो अपने को श्रेष्ठ समझता था, श्रम-जीवियों को हीन-भाव से देखता था, आज दोनों के बीच की खाई भरी हुई दीख पड़ती है। दोनों वर्ग मिलजुल कर प्रेम-भाव से एक स्थान पर आ बैठें हैं, यह श्रमदान का ही प्रभाव है। सच्चे समाजवाद के लिए श्रम के प्रति आदर-भावना अति आवश्यक है। श्रमदान समाजवाद की समानता लाने में अग्रदूत है। जनतंत्र में जनता की सरकार होती है, कोई राजा, महाराजा या सामंत शासन नहीं करता, शासन की बागडोर जन-जन के हाथ में होती है, अतः आवश्यक है कि लोक-सरकार के हाथ मजबूत किये जावें। अपनी कमी को दूर करें तथा आवश्यक आलोचना भी करें। श्रम-दान कमियों को पूरा करता है, जब कमी ही पूरी हो गई तो आलोचना का कोई अर्थ न होगा। इस प्रकार श्रम-दान जनतंत्र का एक आवश्यक अङ्ग है। सब काम पैसे से पूरे नहीं होते। फिर इतना धन

भी कहां है कि राष्ट्र के सारे कार्य पैसे से पूरे करा लिए जायें। यदि राष्ट्र की आर्थिक स्थिति मजबूत बनानी है तो श्रमदान का बड़ा महत्व है। बिना आर्थिक दशा में सुधार हुए जीवित रहना नरक में रहने के समान है! यह विचार श्रम दान के द्वारा ही उत्पन्न होते हैं, जिसे हम विचार क्रांति की संज्ञा भी दे सकते हैं। आज देश में विचार-क्रान्ति की उतनी ही आवश्यकता है जितनी स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व राजनैतिक क्रांति की थी। यदि अभी तक यह समझ में न आया हो कि श्रम-दान से क्या लाभ है, तो उन सड़कों की तरफ देखिए जिन्होंने गांव की जनता को अपने व्यवसाय के लिए मार्ग दिया है, उनको सम्मिलन का सुयोग प्रदान किया है। उस बांध को देखिये जिससे सैकड़ों बीघा जमीन को जोतने योग्य बना दिया है। आज की खाद्य समस्या का हल श्रमदान ही है, देश की आर्थिक अवस्था का हल श्रमदान ही है। आपके आस पास जो कुछ है, सब श्रमदान का ही फल है।

विश्व में भारत अपना एक प्रमुख स्थान रखता हैं। दुनियां वाले भारत के हर काम को बड़ी बारीकी से देखते है। श्रमदान भी उनके लिए एक नई वस्तु हैं। श्रमदान करते समय हमें बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। इसे केवल नाम कमाने, फोटो खिचवाने के लिए ही न करें। इसके अन्तरंग में जनता-जनार्दन के कल्याण की भावना का विद्यमान होना अति-आवश्यक हैं। इससे इसका महत्व बढ़ेगा, अन्यथा लोग तमाशबीन की तरह देखकर हँसेंगे। श्रम-दान करते समय नम्रता और परोपकार की भावना होनी चाहिये। हर काम अपना समझ कर किया जाना चाहिए, इसे एक पवित्र अवसर और सुयोग समझकर करना अपना कर्त्तव्य समझें। इससे दूसरे लोग इसके महत्व को समझेंगे और उनको देशोत्थान के कार्य में लगने की प्रेरणा भी मिलेगी। आइए आज हम सब नियम लें कि हमारा नया आन्दोलन श्रम-दान होगा।

(१३) मुंशी प्रेमचन्दजी

४. जनता के साहित्यकार
५. उनकी कृतियाँ
६. उनकी भाषा
७. उनकी गद्य-शैली
८ उपसंहार

श्री प्रेमचन्द हिन्दी-साहित्य के अमर कलाकार हैं। इनसे पहले के उपन्यास न मौलिकता लिए हुए थे और न मनोवैज्ञानिकता। इसी प्रकार कहानियों में भी कला का वह भव्य रूप जो इनकी कृतियों में मिलता हैं, इनसे पूर्व न था। श्री प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के प्रथम उपन्यासकार हैं, उत्कृष्ट कहानी लेखक और निबन्ध लेखक है। अपनी कहानियों और उपन्यासो के द्वारा श्री प्रेमचन्द ने हिन्दी जगत में एक नवीन युग उपस्थित कर दिया। इनके उपन्यास और कहानियाँ हिन्दी साहित्य की स्थायी निधि है। उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में द्विवेदी काल में जो 'टेकनीक' और कला सम्बन्धी विकास हुआ उसका सम्पूर्ण श्रेय श्री प्रेमचन्द को हैं।

श्री प्रेमचन्द का बचपन का नाम धनपतराय था। इनका जन्म सन् १८८० ई० में बनारस प्रांत के पांडेपुर ग्राम में एक प्रतिष्ठित कायस्थ कुल में हुआ था। प्रारम्भ में इन्होंने उर्दू फारसी की शिक्षा प्राप्त की। सन् १८९९ ई० में इन्होंने मैट्रीकुलेशन परीक्षा पास की और एक स्कूल में अध्यापक हो गये। अध्यापन कार्य करते हुए ही इन्होंने बी० ए० पास किया और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में डिप्टी इन्स्पैक्टर बन गये। इनका आरम्भ से ही साहित्य की ओर विषेश झुकाव था, इसलिए इन्होंने सरकारी नौकरी छोड़ दी और साहित्यसृजन के कार्य में लग गये। आरम्भ से ही ये कष्ट सहिष्णु रहे है और आर्थिक संकट तो प्रायः इनको घेरे ही रहता था। इनकी मृत्यु सन् १९३६ ई० के सितम्बर मास में हुई थी।

श्री प्रेमचन्द को बचपन से ही कहानियाँ पढ़ने और लिखने का चाव था। सर्वप्रथम इन्होंने उर्दू में कहानियाँ लिखना प्रारम्भ किया। इनकी कहानियां उर्दू के प्रसिद्ध पत्र 'जमाना' में प्रकाशित होती थीं। आप अपने समय के उर्दू के एक लब्ध प्रतिष्ठ लेखक थे। ज्यों ज्यों इनकी रचनाएँ जनता द्वारा

समादृत होने लगी, त्यों त्यों इनका उत्साह बढ़ता गया और थोड़े ही समय मे ये एक प्रसिद्ध लेखक बन गये। समय के अनुसार जब इनके हृदय में हिन्दी प्रेम उत्पन्न हुआ, तब ये हिन्दी में लिखने लगे। हिन्दी का साहित्यिक ज्ञान प्राप्त करने में इन्हे देर न लगी। शीघ्र ही इनकी रचनाएं हिन्दी जगत में भी आदर पाने लगी। इन्होंने कुछ दिनों तक 'मर्यादा' का सम्पादन किया और बाद में ये 'माधुरी सम्पादक मण्डल' में भी रहे। काशी से इन्होंने 'हंस' नामक मासिक पत्र एवं 'जागरण' नामक साप्ताहिक पत्र निकाला। श्री प्रेमचन्द का व्यक्तिगत जीवन अत्यन्त सरल था। वे सादगी को पसन्द करते थे। उनकी प्रकृति उदार थी, अभिमान उनको छू तक नहीं गया था। अपने विचारों में वे दृढ़ थे। दलितों, पतितों और उपेक्षितों के प्रति वे पूर्ण सहानुभूति रखते थे। वे एक निर्भीक लेखक थे।

श्री प्रेमचन्द हिन्दी के सर्व प्रथम साहित्यिक उपन्यास लेखक हैं। इन्होंने हिन्दी में मौलिख उपन्यास एवं कहानियां लिखकर हिन्दी के मस्तक को ऊंचा किया है। इनके उपन्यासों और कहानियों ने इतनी ख्याति प्राप्त की हैं कि उनका अनुवाद कई भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में भी हो चुका है। इन्होंने लगभग ४०० कहानियाँ लिखी है। इन्होंने हिन्दी कहानी साहित्य में मनोवैज्ञानिक ढंग से चरित्र चित्रण आरम्भ किया। इनकी कहानियों तथा उपन्यासों के सभी अवयव प्रोढ़ तथा सुगठित होते हैं। ये अन्तः प्रकृति के विश्लेषण करने में बड़े दक्ष हैं। इनकी कला यथार्थवाद को लेकर चली है और इसमें कल्पना तथा चमत्कार की आवश्यकता से अधिक अंश नहीं है। इनके पात्रों का चरित्र चित्रण सजीव है इन्होंने अपने पात्रों को स्वच्छन्दता-पूर्वक बोलने, चलने, फिरने और कार्य करने की छूट दे रखी है।

श्री प्रेमचन्द का सम्मान सबसे अधिक इसलिए है कि वे जनता के साहित्यकार हैं। उनके उपन्यासों और कहानियों का विषय प्रायः उन दीन-हीन निर्धन-निरीह और सर्वथा उपेक्षित लोगों की समस्या है जिनका संबन्ध समाज और राजनीति दोनों से है। उन्होंने पूजीपतियों वा रईसों का गुण-गान न करके दीन दुखियों को अपनाया। ग्रामीण जीवन के जीवित चित्र इनकी रचनाओं में देखने को मिलते हैं, जो इनकी हृदय विशालता का परिचय देते हैं।

श्री प्रेमचन्द ने दिल खोल कर लिखा है और खूब लिखा है। इनके ग्रन्थों की संख्या बहुत है। संक्षेप में उनके महत्वपूर्ण ग्रन्थ निम्नलिखित हैं:—

(क) उपन्यास—सेवा-सदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, गबन, कर्मभूमि गोदान, मंगलसूत्र।

(ख) कहानी-संग्रह—प्रेम द्वादशी, प्रेम-पच्चीसी, प्रेम-प्रसून, नव-निधि प्रेम-तीर्थ, प्रेम-पूर्णिमा, सप्त-सरोज, मान-सरोवर (आठ भाग)

(ग) नाटक—कर्बला संग्राम, प्रेम की वेदी।

(घ) निबन्ध-संग्रह—कुछ विचार।

श्री प्रेमचन्द की भाषा यद्यपि 'प्रसाद' जी की भाषा की ... साहित्यिक और गंभीर तो नहीं कही जा सकती, तथापि मनुष्य जीवन की सरल व्यजना करने में वह पूर्ण समर्थ है। इनकी भाषा टकसाली है। हिन्दी का प्रचलित, शुद्ध, स्वभाविक और साहित्यिक रूप यदि कहीं देखने को मिल सकता है तो वह केवल श्री प्रेमचन्द की रचनाओं में इनकी भाषा में सभी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का प्रयोग मिलता है। मुहावरों और सूक्तियों के सुन्दर प्रयोग ने इनकी भाषा को और भी रोचक और प्रभावोत्पादक बना दिया है। कहीं कहीं पर तो मुहावरों की झड़ी सी ही लगा दी है। सूक्तियों में जीवन के गंभीर अनुभव तो भरे ही हैं, वे गद्य में भी काव्य का सा सौन्दर्य उत्पन्न कर देती हैं। भाषा पूर्णतः भावानुकूल है। जहाँ कोमल भावों की व्यंजना की गई है, वहाँ भाषा मधुर और कोमल बन गई है, वहाँ क्रोध आदि उग्र भावों का वर्णन किया गया है, वहाँ भाषा—शैली भी उग्र और ओजपूर्ण हो गई है। वाक्य छोटे, पर अर्थ—गांभीर्य लिए हुए होते हैं। वाक्यों में परस्पर इतनी अन्विति है कि वे एक दूसरे से पृथक नहीं किये जा सकते। श्री प्रेमचन्द की भाषा भावों और विचारों के अनुसार ही नहीं बदली, प्रत्युत विषय और पात्र के अनुसार भी भाषा में परिवर्तन हो जाता है। अतः भाषा की दृष्टि से श्री प्रेमचन्द की शैली के तीन रूप मिलते हैं। पहला वह रूप है जिसमें उर्दू शब्दों का बाहुल्य है। मुसलमान पात्र के मुख से या मुसलमानों से बातचीत करते समय ऐसी भाषा का प्रयोग किया गया है। दूसरा वह रूप है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रधानता है। ऐसी भाषा का

प्रयोग लेखक ने उन स्थानों पर किया है, जहाँ कवियों की तरह भाव-मग्न होकर वह अपने भावों एवं विचारों को प्रकट करता है। तीसरा रूप वह है जिसमें इन दोनों का सामंजस्य मिलता है और यह रूप ही प्रेमचन्द जी की भाषा शैली का वास्तविक और सर्वमान्य रूप है।

श्री प्रेमचन्द की शैली प्रधानतः वर्णनात्मक है। जिस किसी वस्तु का वे वर्णन करते हैं। उसका जीता-जागता चित्र आँखों के सामने खिंच जाता है। एक ही बात को खूब घुमा-फिरा कर कहने की कला वे खूब जानते हैं। पात्रों के चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को अंकित कर मानसिक भाव द्वन्द्वों का यथार्थ चित्रण करने में इन्होंने पूर्ण सफलता प्राप्त की है। जहाँ इन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि बुराइयों पर प्रहार किया है, वहां इनकी विवेचना में उनकी शैली व्यंग्यात्मक होगई है, किन्तु इनका व्यंग्य चुटीला नहीं है जो किसी का मर्म-ताड़न करे। इनके व्यंग में सर्वत्र एक मिठास रहता है जो मनोरंजन के साथ-साथ हमारी आँखें भी खोल देता है। इन्होंने हिन्दी, उर्दू तथा अंग्रेजी भाषाओं की शैलियों की विशेषताओं को लेकर एक अभिनव, सुन्दर, सजीव और प्रवाह-पूर्ण शैली का निर्माण किया है, जिसकी प्रधान विशेषता सरलता और धारावाहिकता है। अन्त में एक विद्वान् लेखक के शब्दों में यही कहना है कि 'प्रेमचन्द जी की शैली अत्यन्त सरल, सरस, सजीव, स्वाभाविक, चित्रोपम, चित्ताकर्षक एवं प्रभावोत्पादक है। अलंकारों के प्रयोग से उसमें अनूठा चमत्कार आ गया है। मुहावरों और लोकोक्तियों ने उसे सजीवता प्रदान की है। हास्य, विनोद एवं व्यंग्य ने उसे हृदय-स्पर्शी तथा प्रभावोत्पादक बना दिया है।'

श्री प्रेमचन्द के कहानी-साहित्य में गांधीयुग का राष्ट्रीय जीवन, किसान-समस्याएं और पारिवारिक जीवन की असंगतियाँ बड़े मनोहर रूप में मुखरित हुई हैं। कथानक की रुचिरता, संवाद की प्रगल्भता और उद्देश्य की स्पष्टता में श्री प्रेमचन्द की कहानियाँ हिन्दी-साहित्य में अद्वितीय हैं। श्री प्रेमचन्द कलाकार ही नहीं, कला-पारखी भी हैं। हिन्दी-साहित्य में 'आदर्शोन्मुख यथार्थ-वाद' के उन्नायक एवं पोषक श्री प्रेमचन्द है। हिन्दी-साहित्य श्री प्रेमचन्द का चिर-ऋणी रहेगा।

(१४) पंचशील

१. प्रस्तावना
२. अर्थ
३. पंचशील को प्रथम बार मान्यता
४. पंचशील की आवश्यकता वा मान्यता
५. उपसंहार

आज विश्व बारूद के टीले पर बैठा है। न मालूम कब विस्फोट हो जाय और यह खून-पसीने की गाढ़ी कमाई—सभ्यता और संस्कृति बात-की-बात में धूल-धूसरित हो जाय। यह चिन्ता केवल निर्बल व अशक्त राष्ट्रों को ही नहीं है, वरन् बलवान देश भी इस डर से आशंकित हैं। युद्ध पहले भी होते थे, किन्तु वे धर्म-युद्ध थे। प्रजा की कोई हानि नहीं होती थी। आज एक नया सिद्धान्त घड़ लिया गया है कि प्रेम तथा युद्ध में कुछ भी अनुचित नहीं। यह बात प्रथम तथा दूसरे विश्व-युद्धों ने अक्षरशः प्रमाणित कर दी है। गत् महायुद्ध में क्या नहीं हुआ? जापान में नागासाकी और हिरोशिमा पर महान् प्रलयंकारी अणु बम गिराये गये। सब कुछ स्वाहा हो गया। आज तो अणु बम से भी अधिक भयंकर उद्जन बम और ऐसे ही अनेकानेक अस्त्र-शास्त्रों का निर्माण हो चुका है। मानवता बारूद के ढेर पर आ बैठी है। विश्व के विचारशील व्यक्ति इसी उधेड़बुन में हैं कि मानवता की रक्षा कैसे हो? पंचशील के सिद्धान्तों ने दुनियाँ वालों को एक नई झलक दी है, निराशा को आशा में बदल दिया है।

पंचशील कोई नया सिद्धांत नहीं है। प्राचीन धर्म-शास्त्रों में व्यक्ति के आत्मिक विकास के लिए पंचशील के मूल तत्व-अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह को अनिवार्य बताया गया था। जैन-धर्म के पांच महाव्रत भी इन पाँच नियमो की पुनरावृत्ति है। बौद्धों के पंचशील भी इन्हीं के समान हैं। पंचशील का संबंध, व्यक्तियों एवं समाज सुधार दोनों से था। आज भी पंचशील का नैतिक महत्व है। पंच का अर्थ पांच होता है और शील का अर्थ शिष्टाचार, विनम्रता तथा सदाचार की पवित्रता से है। इस प्रकार पंचशील का अर्थ ऐसे पांच सिद्धान्तों से है जो व्यक्ति तथा समाज को विनम्रता, शिष्टाचार एवं आचरण की पवित्रता की

ओर आकृष्ट करे, बल्कि इन्हीं के अनुरूप आचरण कराये।

यह युग विज्ञान का युग है। विज्ञान ने आशातीत उन्नति की है। संसार का प्रत्येक देश अपनी शक्ति बढ़ाने में लगा हुआ है। आज शक्ति का माप-दण्ड सामरिक शक्ति को बढ़ाना है। आज के वैज्ञानिकों का सम्पूर्ण ध्यान आधुनिक युद्ध के उपकारणों की खोज पर केन्द्रित है। नित नये प्रयोग होते हैं। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से सशंकित है। एक प्रकार का शीत युद्ध हो रहा है। लोग ऊपर से शांति की बात करते हैं भीतर से युद्ध-सामग्री को बढ़ा रहे हैं। रूस तथा अमेरिका इसे 'शक्ति-सतुलन' कहते हैं। भविष्य बड़ा अन्धकारमय दीख पड़ता है। क्या तीसरा महायुद्ध होगा? यही प्रश्न आज के मानव के सम्मुख है। शान्ति चाहने वाले देश शान्ति-सम्मेलनों का आयोजन करते हैं। शक्ति सन्तुलन के सिद्धान्त पर विश्वास करने वाले देश सैनिक संधियां करते हैं। किन्तु ऐसा लगता है कि अतलान्तिक घोषणा-पत्र, याल्टा कान्फ्रेंस, सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन तथा जिनेवा शान्ति-वार्ता सब सन्देह की भट्टी में बर्फ की तरह गल चुके हैं। कुछ भी हो, जिन्होंने गत महायुद्ध को देखा है, वे युद्ध नहीं चाहते। वे चाहते है कि संसार के क्षितिज पर से युद्ध के बादल सदा के लिये फट जांय। इसका एक ही उपाय है कि आंग्ल-अमेरीकी तथा सोवियत गुट की आपसी कशमकश दूर हो जाय। दोनों गुट भारत से बहुत आशा करते हैं उनकी कशमकश को दूर करने के लिये एवं विश्व-शान्ति स्थापित करने के लिए भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने पंचशील को आवश्यक बताया हैं। उनके अनुसार शान्ति पूर्ण सह-आस्तित्व से ही विश्व-शान्ति सम्भव है, और इस सिद्धान्त की पुष्टि भारत के प्रधान-मन्त्री श्री नेहरू तथा जनवादी लाल चीन के प्रधान मन्त्री श्री चाउ एन लाई ने १९५४ ई० में तिब्बत संधि के अवसर पर संयुक्त घोषणा करके की है। संधि के अनुसार एक देश दूसरे देश की सीमा का अतिक्रमण नहीं करेगा, इसको पहला सिद्धान्त कहा गया है। दूसरा है, पारस्परिक अनाक्रमण अर्थात् इस सिद्धान्त को मानने वाले सम्बधित देश एक-दूसरे पर आक्रमण नहीं करेंगे। तीसरे आन्तरिक मामले में अहस्तक्षेप की नीति है। चौथा सिद्धान्त है—पारस्परिक सहायता तथा आदान-प्रदान की भावना। पांचवां और अन्तिम सिद्धान्त है शान्ति पूर्ण सह-आस्तित्व।

इस प्रकार पांचों सिद्धान्त मिल कर पंचशील का सिद्धान्त कहा जाता है। यह एक ऐसा सिद्धान्त है जिसमें किसी देश के लोग किसी भी विचार-धारा में आस्था रखने वाले हों पर वे दूसरे लोगो के साथ प्रेम-भाव से रह सकते है।

इन्ही सिद्धान्तो के आधार पर चीन तथा भारत मे मित्रता सम्पन्न हुई थी। दोनों देशो मे शासन-प्रणालियां सर्वथा भिन्न है। किन्तु इस सन्धि के द्वारा तिब्वत के मामले को लेकर जो तनाव बढ़ता, वह बिलकुल न बढ़ा। इससे स्पष्ट है कि आज पंचशील के सिद्धान्त का कितना महत्व है। इस सिद्धान्त ने भारत का मान संसार मे बहुत बढ़ाया है। और विश्व में आपसी तनाव को कम करने में यह राम-बाण के समान साबित हुआ है। नेहरू ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि यदि लोग शान्ति पूर्ण सह-अस्तित्व मे विश्वास नही करेंगे तो एक-न-एक दिन सह-विनाश जरूर होगा। वस्तुतः यदि समस्त विश्व के देश इन सिद्धान्तों को अपनी राजनीति में स्थान दें तो विश्व की बहुत सी समस्याएं आंख झपकते ही हल हो जाँय। दुनियां के अनेक राष्ट्रो ने इसकी महत्ता को समझा है। बान्डुंग कान्फ्रेन्स में अफ्रेशिया के २७ राष्ट्रों ने इन सिद्धान्तों मे आस्था प्रकट की है और इनको मान्यता प्रदान की है। विश्व के बड़े राष्ट्र सोवियत रूस ने भी शान्ति पूर्ण सह-अस्तित्व में पूर्ण विश्वास प्रकट किया है। इस प्रकार हम देखते है कि पंचशील विश्व-शान्ति में एक सफल प्रयोग है।

एक अच्छे से शो-रूम की आलमारी में रखी हुई वस्तु जिस प्रकार बड़ी मोहक व आकर्षक लगती है, ठीक उसी प्रकार आज के सिद्धान्तों का हाल है। सिद्धान्त देखने में बड़े सुन्दर और हितकारी लगते हैं किन्तु वे शायद दफ्तरों की आलमारियों मे सजावट के लिये ही है। पंचशील का सिद्धान्त भारत व चीन के बीच एक समझौता था आज चीन ने भारतीय सीमा का अतिक्रमण करके क्यों अपने सन्दूकों की ही सजावट नही की? जो लोग भावुक नही भावना से ज्यादा कर्त्तव्य मे विश्वास करते है, उन्होंने उस समय भी इस सिद्धान्त की उपेक्षा की थी। किन्तु क्या इससे यह समझ लिया जाय कि अच्छे सिद्धान्त कही सफलीभूत ही नही होते। नही, ऐसा नही है। कर्त्तव्य की भावना से ही

प्रेरणा मिलती है, जैसी भावना होगी वैसा ही कार्य भी होगा। यदि कुछ दो-चार लोग पंचशील के सिद्धान्तों को न मानें या चीन जैसे देश उसको मान कर भी उसकी उपेक्षा करे तो इससे 'पंचशील' का महत्व कम नहीं हो जाता। पंचशील आज के युग की मांग है, विश्व-शान्ति के लिये राम-बाण औषधि है। शर्त यही है कि विश्व वाले इसे कार्य रूप में भी परिणत करें। यदि महा-विनाश से बचना है, निःशस्त्रीकरण को सफल बनाना है तो हम आज विश्व के राष्ट्रों का आह्वान करते है, कि वे पँचशील को अपनावें। आइये, आज भी मानवता को बारूद के ढेर से बचाने के लिये, हे विश्व-बन्धुओ ! पंचशील को, विश्व शान्ति के प्रहरी पंचशील को, समझो और इसे अपने शुद्ध अन्तःकरण से अपनाओ।

(१५) सहकारिता और उनके लाभ

१. प्रस्तावना
२. सहकारिता का अर्थ और उद्देश्य
३. सहकारिता का आधार
४. सहकारी समितियां
५. सहकारिता की विशेषताएँ
६. सहकारिता के लाभ
७. उपसंहार

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज में मनुष्य बिना सहयोग के एक दिन भी अपना काम नहीं चला सकता। सभ्यता के आरम्भिक काल में भी मनुष्य-समाज सहकारिता के सिद्धान्तों को समझता था और व्यावहारिक जीवन में उसका उपयोग भी करता था। यदि मनुष्य समाज सहकारिता को न अपनाता, तो मनुष्य-जाति आज इतनी उन्नत तथा सभ्य कदापि न होती।

मनुष्य-समाज और सहकारिता सहगामी हैं। मनुष्य की शक्ति सहकारिता में छिपी हुई है और सहकारिता के द्वारा ही उसकी उन्नति हो सकती है। जिस प्रकार एक परिवार में माता-पिता अपने समस्त पुत्रों को, चाहे उनमें कोई, बुद्धिमान् या मन्द-बुद्धि, साहसी या कायर, चतुर या मूर्ख, क्रियाशील या अकर्मण्य हो, अपने पुत्र समझते हैं; उसी प्रकार सहकारिता के समस्त सहकार-

पंथियों को एक दृष्टि से देखा जाता है।

सहकारिता का साधारण अर्थ है—मिलकर कार्य करने वाला संगठन, अर्थात् सहयोगी-गठन। अतः जब किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हम भाई-चारे के आधार पर संगठित प्रयत्न करें और प्रतिस्पर्द्धा एवं शोषण को दूर कर दें, तो उसे हम सहकारिता कहेंगे।

सहकारिता समाज के निर्बल और बलवान, निर्धन और धनी, सभी मनुष्यों को समभाव से देखती है। जिस प्रकार माता-पिता अपने लंगड़े-लुले पुत्र को भूख, कष्ट तथा दरिद्रता से मरता हुआ नहीं देख सकते, उसी प्रकार सहकारिता निर्धन और निर्बल सहकार-पंथियों को कष्ट पाते नहीं देखती है। सब को समान अवसर तथा समान स्थान देती है। 'पारस्परिक सहायता और सहानुभूति' इसके मुख्य सिद्धान्त तथा सेवा इसका मुख्य लक्ष्य है।

सदाचार कृत व्यापार सहकारिता का आधार है। सहकारिता का मूल सिद्धान्त है 'एक सबके लिए और सब एक के लिए'। अतः यह कहा जा सकता है कि सहकारिता, जाति-भेद, रङ्ग-भेद, स्त्री-पुरुष-भेद, देश-भेद, धर्म-भेद, तथा अस्पृश्यता को नष्ट करने वाली है, जिसमें सहकार-पंथियों को एक भाव से देखा जाता है।

केलर्णट के शब्दों में 'सहकारिता एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें लोग अपनी इच्छा से मनुष्य के नाते बराबरी के दर्जे पर अपनी आर्थिक उन्नति के लिए सहयोग करते हैं'।

जब समाज के व्यवहारिक जीवन में सहकारिता को अपनाते हैं, तो सहकारी समितियां स्थापित की जाती हैं। अतः सहकारिता के लाभों को हम सहकारी समितियां खोल कर ही प्राप्त कर पाते हैं। जब समाज के निर्बल सदस्य किसी भी आर्थिक कार्य की उत्पत्ति, उपभोग, विनियम तथा वितरण [illegible] सम्मिलित प्रयत्न से उत्पन्न हुए लाभ को आपस में न्यायपूर्ण प्रणाली से बांट लें, तो ऐसे संगठन को सहकारी समिति कहेंगे।

सहकारी उत्पादक समितियों और मिश्रित पूंजी वाली कम्पनियों में [illegible] है। इनमें मूल अन्तर यह है कि सहकारी उत्पादक समिति मनुष्यों [illegible] संघ है जब कि मिश्रित पूंजी वाली कम्पनी पूंजी का। सहकारी समितियों [illegible]

हम मुख्य रूप से दो भेद देखते हैं:—(१) उत्पादक सहकारी समितियों के अन्तर्गत ही प्रायः अन्य समितियां, उपभोक्ता-स्टोर बुनकर-समितियां, सफाई-स्वास्थ्य समितियां, तथा चकबन्दी-समितियां आदि है।

सहकारिता की वे विशेषतायें जिनके कारण सहकारिता मानव-जाति के लिए एक विशेष महत्व रखती है, संक्षेप में निम्नलिखित हैं:—

(१) सहकारिता समुदाय में लोग स्वेच्छा से आते है:—

सहकारी संगठन में सदस्य होने के लिए किसी पर कोई दवाव नहीं डाला जाता है। इसमें नितान्त स्वेच्छा से ही सदस्य बनते है।

(२) पारस्परिक सहायता द्वारा निज की सहायता:—

सहकारिता, पारस्परिक सहायता द्वारा, निज की सहायता के सिद्धान्त पर, आधारित है। सहकारिता उन लोगों का संगठन होता है, जिन्हें सहायता की आवश्यकता होती है। वे अपने साधनों को इकट्ठा करने के लिए सहयोग करते हैं और एक दूसरे की मदद करके अपनी मदद करते हैं।

(३) सहकारिता में व्यक्तिवाद का स्थान नही होता:—

सहकारिता, व्यक्तिवाद और उससे होने वाली प्रतिस्पर्द्धा को, समाज से निकाल देना चाहती है। सहकारिता में व्यक्तिवाद का कोई स्थान नहीं होता है।

(४) सहकारिता का आधार जन-तन्त्र है:—

सहकारिता का मूल आधार जनतन्त्र है। सहकारी संगठन जनतंत्रीय आधार पर खड़े किये जाते हैं। सहकारी व्यक्ति बराबर हैं, सब के समान अधिकार होते है। समस्त सदस्य मानवता के आधार पर एक-समान समझे जाते हैं।

(क) सहकारिता से प्रत्येक राष्ट्र में और राष्ट्रों के मध्य में अंकुठित-प्रसार से सामाजिक कल्याण और स्थायी समृद्धि प्राप्त की जा सकती हैं।

(ख) सहकारिता से, वर्तमान दूषित वितरण-प्रणाली को नष्ट कर, प्रत्येक मनुष्य को, जिसने उत्पादन-कार्य में सहयोग दिया है, उसके परिश्रम के अनुपात से सम्पत्ति देने का प्रवन्ध किया जाता है।

(ग) सहकारिता अतिरिक्त लाभ का न्यायपूर्ण विभाजन करती है और किसी एक वर्ग को दूसरे वर्ग पर अत्याचार नहीं करने देती।

(घ) सहकारिता पूंजीपति और श्रमजीवी वर्गों के भयंकर आर्थिक युद्ध को खत्म करना चाहती है।

(ङ) सहकारिता उत्पादकों को अधिक से अधिक लाभ तथा सस्ती वस्तुएँ उपलब्ध कराना चाहती है तथा उपभोक्ताओं को भी लाभ के कुछ अंश का अधिकारी मानती है।

(च) सहकारिता निर्धनों तथा दुर्बलों की उन्नति का एक मात्र साधन है।

(छ) सहकारिता द्वारा जनता की आर्थिक, स्थिति तथा धरातल को ऊंचा उठाया जा सकता है। इससे समाज का नैतिक उत्थान होता है और अनैतिक पतन को समाज से बाहर भगाया जाता है।

(ज) सहकारिता उत्पादन और वितरण में स्पर्द्धा को त्याग कर, मध्यवर्ती वर्गों को दूर करने का प्रयत्न करती है।

(झ) सहकारिता से समाज में एक नई भावना जागृत होती है तथा स्वावलम्बन एवं भ्रातृत्व की भावना पैदा होती है।

हम देखते हैं कि सहकारिता के सिद्धान्तों का, एक समाज ही नहीं अपितु विश्व में, बड़ा महत्व है। इसके मूल-मन्त्रों में वह शक्ति निहित है जो विश्व में एक नया रूप ला सकती है। इसी कारण आज विश्व सहकारिता को दिन प्रतिदिन अपनाते जा रहे हैं और आज विश्व के ३९ देशों में सहकारिता का पूर्ण स्थान जम चुका है। भारतवर्ष में भी, सहकारिता को, देश की उन्नति का आधार-भूत साधन मान लिया गया है और आज समस्त भारत में इसके आधार पर स्थायी समृद्धि स्थापित करने के अभीष्ट प्रयत्न किये जा रहे हैं।

(१६) गीति काव्य और उसकी परम्परा

१. भूमिका

२. गीति-काव्य की प्रमुख विशेषताएं

३. गीति काव्य की परम्परा

(क) जयदेव और विद्यापति

(ख) सूर, तुलसी और मीरा

(ग) आधुनिक कवि-पन्त, प्रसाद, निराला और महादेवी

४. उपसंहार।

प्रकृति के मूक-सौन्दर्य के प्रथम दर्शन के साथ ही गीति-काव्य का सृजन होता है। गीति-काव्य की प्रधान विशेषता है उसकी संगीतात्मकता, किन्तु संगीत और काव्य में एक महान अन्तर है। बिना शब्द और अर्थ के भी संगीत का आलाप मानव-मन को मुग्ध कर देता है, किन्तु गीति-काव्य में संगीतात्मकता के साथ-साथ हृदय की सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यक्ति भी रहती है, इसलिए गीति-काव्य का प्रभाव मन और हृदय दोनों पर संगीत की अपेक्षा अधिक पड़ता है और अधिक स्थायी होता है।

गीति काव्य में काव्य सम्बन्धी विशेषताएँ तो होती ही हैं, वह गेय होता है, उसमें संगीत होता है। गीति काव्य मुक्तक वा स्फुट काव्य होता है, प्रबंध काव्य की भाँति वह इतिवृत्तात्मक नही होता। गीति काव्य में कवि की मानसिक स्थिति-विशेष का चित्रण रहता है। सम्पूर्ण पद में एक ही भावना अन्तर्हित रहती है और वह भी तीव्रतम, मानो गीतिकार एक बारगी ही अपने हृदय को उँडेल देना चाहता है। गीति काव्य आत्माभिव्यंजक होता है, उसके भीतर कवि अपने ही सुख दुःख की कहानी कहता है। उसका प्रत्येक गीत वा पद मुक्त और अपने में पूर्ण होता है। उसमें हृयदांकन होने के कारण केवल मधुर और कोमल भावों का ही चित्रण होता है। गीति-काव्य प्रसाद गुण सम्पन्न, रसात्मक और सुगठित होता है।

गीति-काव्य की परम्परा 'गीत-गोविन्द' कार जयदेव तथा विद्यापति की 'पदावली' से आरम्भ होती है। जयदेव का प्रभाव विद्यापति पर पड़ा और उसने जयदेव के 'गीत-गोविन्द' की शैली पर राधा-कृष्ण की लीलाओं का स्वानुभूति-पूर्ण वर्णन हृदय-हारी पदों में किया है। विद्यापति की भाषा मैथिलि हिन्दी है।

सगुण धारा के भक्त संत कवियों ने गीति-काव्य की परम्परा जारी रखी। महाकवि सूरदास ने राधा और कृष्ण को लेकर गीति-काव्य की सृष्टि की। इनकी शैली विद्यापति की शैली से कुछ भिन्नता लिये हुए है। सूर की शैली में राधा कृष्ण की केलि के अतिरिक्त वात्सल्य एवं शृंगार के वर्णनों को छोड़कर अन्य वर्णनों में माधुर्यमयी तन्मयता की कमी पाई जाती है। सूर के समस्त पद गेय

है। इस कारण वे संगीतज्ञों में बहुत प्रचलित हैं। प्रत्येक पद मुक्तक है, एक का दूसरे से कोई लगाव नहीं। कृष्ण का सौन्दर्य और शृंगार वर्णन ही इनके विषय होने के कारण केवल मधुर भावों का चित्रण हुआ है। समस्त सूर-सागर में उनकी भक्ति की व्यंजना है, किन्तु उनका आत्माभिव्यंजन केवल विनय के पदों को छोड़कर प्रत्यक्ष नहीं है, परोक्ष से है। वे कृष्ण की लीलाओं का वर्णन करते हैं, अपनी बात नहीं कहते। इनके पदों में कृष्ण लीला की प्रधानता अधिक है, अत: आत्माभिव्यंजन जो गीति काव्य की आत्मा है, गौण हो गया है। सूर के पदों में संगीत और भावना का गंगा-जमुनी मेल है। उनके पदों में इतिवृत्तात्मकमा पाई जाती है, किन्तु वह पृष्ठ भूमि के रूप में। सूर की भाषा सरल, मधुर और साहित्यिक है जिससे भावों की अभिव्यक्ति में अधिक स्पष्टता आ गई है ! तल्लीनता सूर के प्रत्येक पद में विद्यमान है। प्रकृति का विशद चित्रण भी सूर के काव्य में मिलता है, क्योंकि ब्रज-भूमि प्रकृति का सुरम्य स्थान है।

गीति काव्य की दृष्टि से मीरा के पदों में सभी अंग विद्यमान हैं। उसके प्रत्येक पद में आत्म निवेदन है। वह कृष्ण के सम्बन्ध में बहुत कम कहती है। वह भी अपना दर्द सुनाती है। (मैं तो प्रेम दिवानी री मेरो दरद न जाणे कोय) तो कभी चाकर रखने की प्रार्थना करती है (म्हाँने चाकर राखो जी)। मीरा के पदों में गेयत्व तो है ही, क्योंकि मीरा स्वयं एक उच्चकोटि की गायिका थी, साथ ही आत्माभिव्यंजन भी पूर्ण रूप से है। भाषा सरल और कोमल है। प्रत्यक पद मुक्तक और अपने में पूर्ण है। मीरा के पदों में रसात्मकता इतनी है कि श्रोता पद सुनकर आज भी मीरा का सा ही भाव अनुभव करने लगता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी गीतावली और विनय पत्रिका की रचना गेय पदों में की है। किन्तु गीतावली में तो सिवाय इतिवृत्तात्मकता के आत्माभि-व्यक्ति नाम मात्र को भी नहीं है। हाँ, विनय पत्रिका अवश्य ही आत्माभिव्यंजन के लिए लिखी गई है, किन्तु उसमें भी भावों का सच्चा और स्वाभाविक व्यक्ति-करण नहीं है, जैसा कि मीरा के पदों में पाया जाता है। इस प्रकार गीति-काव्य-कार की दृष्टि से इन तीनों में सर्वोपरि स्थान है मीरा का, फिर सूर का, और तदनन्तर तुलसी का।

आधुनिक प्रमुख कवियों में प्राय: सभी ने थोड़ा वा अधिक गीति काव्य का ओर ध्यान दिया है। इन कवियों में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी प्रमुख हैं। ये चारों ही उच्चकोटि के कवि और गीति काव्यकार हैं और इनको अपने अपने क्षेत्र में पूर्ण सफलता भी मिली है। किन्तु यदि इनकी परस्पर तुलना की जाय तो महादेवी वर्मा का स्थान सर्वोच्च ठहरता है।

महादेवी का सम्पूर्ण काव्य गीतमय है। उन्होंने प्रेम, प्रकृति एवं वेदना से भरे हुए बड़े ही सरस और मधुर गीतों की सृष्टि की है। हिन्दी काव्य में गेयता की दृष्टि से उनके गीत सबसे अधिक मधुर है। महादेवी के गीतों को पढ़ते पढ़ते मन अपने आप गुनगुनाने लगता है। प्रसाद, पन्त और निराला ने भी संगीत के स्वर, ताल और लय का ध्यान रखते हुए बड़े सरस और सुन्दर गीत लिखे हैं, किन्तु महादेवी जैसी भाव-पूर्ण सरस गेयता उनके गीतों में उपलब्ध नहीं होती। महादेवी की लेखनी से प्रसूत एवं उनके हृदय से निर्गत गीत गाते गाते आँखों के आगे प्रकृति की मनोरम भावमयी सृष्टि अङ्कित हो जाती है तथा हृदय में भावनाओं की अति कोमल और मधुर झंकारमय सजीव प्रतिमा नृत्य कर उठती है। उनके गीतों को एक बार पढ़ जाने के पश्चात् भी मन उसी लय और ताल पर नाचता रहता है तथा कानों में एक अमर झंकार सुनाई पड़ती है।

महादेवी के गीतों में यह विशेषता है कि प्रत्येक भाव का स्वर और लय से समन्वित एक चित्र होता है, जो गीत को पढ़ते ही साकार हो उठता है। उनके गीतों में प्रसाद के गीतों के समान भाव-प्रवणता तो है ही साथ ही निराला के गीतों के समान उनमें चिन्तन भी है। सचमुच मीरा के समान महादेवी भी एक अमर गायिका है, अन्तर इतना ही है कि महादेवी अपने गीतों में संगीत के शास्त्रीय बन्धनों का विशेष ध्यान नही रखती। गीति-काव्य की अन्य सब विशेषतायें महादेवी के गीतों में मौजूद हैं।

(१७) चाँदनी रात में नौका विहार

१. भूमिका-वातावरण

२. प्रस्थान

३. स्थान का वर्णन

४. नौका-विहार

५. उपसंहार

तारों से झिलमिलाता हुआ नीला आकाश। रजनीपति अपनी आँख मिचौनी के खेल में व्यस्त थे, कभी बादलों की ओट में अपना मुख छिपा लेते, कभी बाहर निकल अपनी स्वर्णिम आभा से संसार को आलोकित कर देते। तारों की ओढ़नी ओढ़े रजनी-बाला भी आज अपनी सहज स्वाभाविक विभा से संसार को चाँदी लुटा रही थी। सारा संसार आज चाँदनी की चादर ओढ़े हुए था। ऐसी मनोहर छटा को देख कर मैं अपने मन को वश में नहीं रख सका और अपने मित्र मोहन के घर पहुंच गया। वह भी इसी प्रतीक्षा में था कि कोई साथ हो जाय तो नौका-विहार के लिए कहीं चला जाय। नेकी और पूछ-पूछ। हम लोग उसी समय पद्म-ताल के लिए रवाना हो गये।

पद्म-ताल शहर से कोई दो मील की दूरी पर प्रधान सड़क से थोड़ा हट कर था हम अपकी-अपनी साइकिलों पर रवाना हो गये। रास्ते में हम लोग चाँदनी रात का पूर्ण आनन्द उठाते हुए जा रहे थे। कहीं भव्य प्रासादों पर और कहीं सुन्दर कोठियों पर चाँदनी रात की चाँदनी सम्पूर्ण शहर को एक देव नगरी के रूप में परिणत कर रही थी। चाँदी से चमकते हुए पेड़ के पत्ते जब हल्के से वायु के झोंको से हिल जाते थे तो कल्प वृक्षों के समान प्रतीत होते थे। धीरे-धीरे गमन करते हुए हम अपने गन्तव्य स्थान की ओर बढ़ रहे थे।

थोड़ी देर में हम लोगों को पद्म-ताल दिखाई पड़ने लगा। चमकती हुई लहरें एक दूसरे से होड़ ले रही थीं,—ऐसा मालूम होता था मानो मानव ने नाचने की कला इन लहरों से ही सीखी हो। दूर तक फैला हुआ पानी चाँदनी रात में ऐसा चमक रहा था मानो वह एक चाँदी का मैदान हो। एक पर दूसरी, दूसरी पर तीसरी, तीसरी पर चौथी लहरें अठखेलियाँ कर रही थीं। मानो एक दूसरी से स्पर्द्धापूर्वक आगे बढ़ने का प्रयास कर रही हों। ताल में कई नौकाएं पड़ी हुई थीं। कुछ तो आगे निकल चुकी थीं, कुछ किनारे पर ही थीं। इनमे से एक नौका में हम लोगों ने भी अपना अधिकार जमा लिया और इस स्वर्णिम अवसर का आनन्द लूटने के लिए आगे बढ़ गये। पानी को पीछे की ओर उंडेलते

को मानव की रचनात्मक शक्ति की सान्दय मय अभिव्यक्ति मानते हैं,

हुए ज्यों-ज्यों हम आगे की ओर बढ़े ऐसा मालूम होने लगा मानो अपने सारे दुःख, चिन्ताएं और फिक्र हमने पीछे को छोड़ दिए हों। ताल के जल में प्रतिबिम्बित चन्द्रमा सहित समस्त नक्षत्र-मण्डल ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो सहस्त्रों लघु दीपक ही ताल के तल में जल रहे हों अथवा जल-परियां आज दीपावली महोत्सव मना रही हों। आकाश-मण्डल और ताल-तल के दृश्य एकाकार होकर हृदय में अनिर्वचनीय आनन्द का भाव भर रहे थे।

रंगीन मौसम में भावनाएं भी रंगीन हो रही थीं। हृदय में हिलोरें उठ रही थीं। गाने को मन कर रहा था। मेरे मित्र गाने में बहुत प्रवीण थे। उन्होंने ज्योंही एक तान छेड़ी त्योंही ताल की लहरों ने नाचकर उनके गाने का स्वागत किया। नीरव, निस्तब्ध रात्रि में उनके गाने ने एक नवीन समां बांध दिया था, इच्छा होती थी यह ताल और चाँदनी-रात सदा बनी रहें और हम सदा इसमें इसी प्रकार विहार करते रहें। सामने और इधर उधर पहाड़ियों का दृश्य भी शुभ्र ज्योत्सना में कम सुन्दर नहीं लग रहा था। पहाड़ी की चमकती हुई चोटियां चाँदनी में एक अद्भुत दृश्य प्रस्तुत कर रही थीं। जी चाहने लगा कि थोड़ी देर इनके ऊपर चढ़ कर चाँदनी रात का पूर्ण आनन्द उठाया जाय, किन्तु समय बहुत हो चुका था, इच्छा तो नहीं होती थी, ऐसी जगह को छोड़ कर वापिस लौटने की, किन्तु कर्त्तव्य भी कोई चीज है सवेरे सात बजे स्कूल पहुंचना था, मास्टर साहब की डांट का अन्देशा था, यदि देर से स्कूल पहुंचे तो कक्षा के बाहर ही खड़े रहना पड़ेगा, इसलिए मन मारकर हमें अपनी नौका मोड़नी पड़ी और धीरे-धीरे किनारे की ओर आ गये।

घर आकर यद्यपि हम सो गये। थके हुए तो थे ही, बिस्तर पर पड़ते ही निद्रादेवी ने अपना अधिकार जमा लिया, किन्तु स्वप्न में भी वही नौका थी हम विहार कर रहे थे। हमारी जागृत अवस्था की अपूर्ण आकांक्षाएं अब पूर्ण हो रही थीं।

(१८) विद्यार्थी जीवन और अनुशासन

३. अनुशासन-वृद्धि के उपाय

४. उपसंहार

एक बार रूस में एक महिला सड़क के बीचों बीच चल रही थी। पीछे से मोटर चालक ने हार्न बजाया और कहा "बहिन, सड़क के एक ओर चलिए" इस पर महिला बड़बड़ाने लगी, "तुम्हें इससे क्या, अब हमने स्वतन्त्रता प्राप्त करली है, जहां इच्छा होगी चलूंगी" इस पर चालक ने इतना ही कहा "बहिन, यह स्वतन्त्रता नहीं यह तो स्वच्छन्दता है" और आगे बढ़ गया। इस प्रकार की स्वच्छन्दता या अनुशासनहीनता स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश में भी लगभग सभी वर्गों में दृष्टि-गत हो रही है, विशेषकर विद्यार्थी समाज में तो इसका बोलबाला है। हम आये दिन देखते हैं, सुनते हैं और समाचारों पत्रों में पढ़ते हैं कि विद्यार्थी कितने अनुशासन-हीन होते चले जा रहे हैं। कहीं परीक्षा- भवन में नकल करने से रोकने पर अध्यापकों को छुरे दिखाये जाते हैं। कहीं उन्हें पीट ही दिया जाता है, और कहीं-कहीं तो कक्षा में अध्यापक का आदर तो दूर, उनका कहना मानने में भी विद्यार्थी अपना अपमान समझते हैं। सभा-सोसाइटी में शोर-गुल एवं हुल्लड़ मचाना तो आज के विद्यार्थियों का धन्धा-सा ही हो गया है। मजाल क्या कोई वक्ता या कोई कवि अपने पूरे विचार या रचना सुना सके। उसकी आवाज की यदि नकल न की गई, तालियां बजाकर उसे यदि बैठने को बाध्य न किया गया तो फिर विद्यार्थी की शान ही क्या ? कोई राजनैतिक हलचल हो, कोई मिल मालिकों और मजदूरों का झगड़ा हो और चाहे मेहतरों की हड़ताल ही हो, उसमें यदि विद्यार्थी भाग न ले तो वह अपने आपको देश का सच्चा सपूत ही नहीं समझेगा। अपनी टांग वहां फँसायेगा ही, चाहे इन सब बातों से उसका या उसके वर्ग का कोई सरोकार ही न हो। आज हालत ऐसी हो गई कि हमारी माताओं और बहिनों का सम्मान सुरक्षित नहीं, मां बाप अपनी सन्तान की बात मान लेने में ही, अपनी भलाई समझते हैं। माता-पिता एवं गुरुजनों की शिक्षाओं को दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दी के दकियानूसी खयाल समझकर खिल्ली उड़ाई जाती है। बिना टिकिट यात्रा करना, साइकिलों पर डबल सवारी बैठना, जरासी बात पर पुलिसमैन को पीट कर कानून भंग करने में विद्यार्थी अपना गौरव समझते हैं। योग्यता में चाहे कोरे ही हों, किन्तु

फैशन में आज के छात्र एवं छात्राएं किसी रईस से कम नहीं। आवाराओं की भांति घूमते रहना और निरर्थक कार्यों में रत रहना विद्यार्थी जीवन का अंग बन गया है। जो देश के भावी सपूत हैं, जो आने वाले युग के सुनहले स्वप्न हैं एवं जिनको देश की बागडोर संभालनी है उन्हीं की ऐसी दयनीय स्थिति है तो देश का भविष्य क्या होगा, यह एक विचारणीय प्रश्न है।

·विद्यार्थियों के अनुशासनहीन होने के कई कारण हैं। जिस वातावरण में बालक बड़ा होता है वह इतना दूषित है कि बालक में अच्छी आदतें पनप ही नहीं सकतीं—

(क) सबसे पहले बालक के माता पिता को ही लीजिए। बालक को शाला में प्रवेश दिलाने के पश्चात् वे अपने को उत्तरदायित्व से मुक्त हुआ पाते हैं। उधर विद्यालय में कक्षा में पचास-साठ छात्रों के होने के कारण अध्यापक बालक पर व्यक्तिगत ध्यान दे नहीं पाता। अब बताइये ऐसे बालक बिगड़े नहीं तो और क्या हो।

(ख) अनुशासनहीनता का एक कारण आज की शिक्षा प्रणाली है। विद्यार्थी के सामने एक ही उद्देश्य होता है, परीक्षा पास करना। और वह परीक्षा समीप आने पर येन केन-प्रकारेण रट रटाकर उत्तीर्ण हो जाता है। मासिक परीक्षा और सत्र के गृह कार्य का परीक्षा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह उन्हें बेकार का बोझा समझकर छोड़ देता है और अपना समय व्यर्थ के निरर्थक कार्यों में खोता रहता है।

(ग) अनुशासनहीनता का एक और कारण है शिक्षकों की शिक्षण के प्रति उदासीनता। शिक्षक अपने उत्तरदायित्व को ठीक से निभा नहीं पा रहे हैं। कारण कि दरिद्र नारायण की उन पर इतनी कृपा है कि अपने परिवार का भरण-पोषण भी बड़ी कठिनाई से कर पा रहे हैं। दरिद्रता दूर करने के लिए उन्हें ट्यूशनें करनी पड़ती हैं। अतः विद्यार्थी उन्हें गुरू न समझकर नौकर समझता है और गुरु भाव प्रायः समाप्त हो गया है। अध्यापक भी नीरस एवं असन्तुष्ट होकर कार्य करता है। और इस भांति राष्ट्र की भावी पीढ़ी पतन के गर्त में चली जा

(घ) प्राचीन गुरुकुल प्रथा का अभाव भी विद्यार्थी को अनुशासनहीन होने को बाध्य करता है। प्राचीन समय में विद्यार्थी गुरु के आश्रम में गुरु की कड़ी एवं अनुभवी दृष्टि बचा कर कोई अनुचित कार्य नहीं कर सकता था। आज सिनेमा, क्लब एवं नाच-घर आदि ऐसे दूषित स्थान हैं जहाँ विद्यार्थी बेरोक-टोक जाता है और उस पर किसी प्रकार का बन्धन नहीं है। विद्यार्थियों में उच्छृंखलता बढ़ने का यही प्रधान कारण है।

(ङ) राजनैनिक दल भी विद्यार्थियों को अनुशासनहीन बनाने में कम योग नहीं देते। नेता बनने का लोभ किसमें नहीं होता, किसी भी गुट का साथ देकर शीघ्र ही वाहवाही कमाने के लोभ में आकर विद्यार्थी अपना वास्तविक उद्देश्य भूल जाते हैं। और जब उन्हें कोई पद वा स्थान नही मिलता तो वे गुमराह हो जाते हैं। राजनैतिक दल अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए विद्यार्थियों के मस्तिष्क को दूषित कर देते हैं।

(च) ऊँची कक्षाओं में सह-शिक्षा का होना भी छात्र-छात्राओं के लिए एक अभिशाप बन गया हैं। परस्पर आकर्षण की सहज प्रकृति को वे रोक नहीं पाते। अतः इससे चरित्र-हीनता एवं अनुशासन-हीनता के दुर्गुण उसमें स्वतः ही घर करते चले आते हैं।

अनुशासनहींनता को दूर करने के लिए सबसे प्रथम अविभावकों को पना उत्तरदायित्व समझना चाहिए। बालक की गतिविधियों के प्रति जाग-क रहना चाहिए। अविभागकों का तनिक-सा आलस्य बालक की भावी प्रगति बाधक बन सकता है। उसमें भी आलस्य और अकर्मण्यता के बीज पनपने गते हैं, आगे चल कर वही बालक निष्क्रिय एवं बेकार साबित होता है।

(क) शिक्षा प्रणाली को अधिक उपयोगी एवं व्यापक बनाना चाहिये। शिक्षा में खेलों का विशेष महत्व है, इनसे छात्र अनुशासन का क्रियात्मक महत्व समझता है। एन. सी. सी., ए. सी. सी. आदि ऐसे प्रयास हैं जिनसे बालकों में अनुशासन के प्रति श्रद्धा बढ़ेगी और भविष्य में वे सभ्य नागरिक बन सकेंगे।

(ख) परीक्षा-प्रणाली में सुधार की आवश्यकता है। मासिक परीक्षाएं एवं गृह-कार्य के अंक भी वार्षिक परीक्षा में जोड़ दिये जाने चाहिये। इससे छात्रों को आवश्यक रूप से पढ़ना ही पड़ेगा। परीक्षा के समय पर बाजारू नोट पढ़ने की प्रथा का उन्मूलन स्वतः ही हो जायेगा।

(ग) अध्यापक, जो वास्तविक राष्ट्र-निर्माता हैं, उन्हें पूरी सुविधाएं दी जानी चाहिये। पूरा वेतन, मकान आदि की व्यवस्था, पढ़ाने को कम विषय एवं समाज में सम्मान मिलने से शिक्षक पूर्ण रूप से सन्तुष्ट होकर कार्य करेगा। इससे देश के भावी कर्णधार, आज के विद्यार्थी योग्य बन सकेंगे।

(घ) विद्यालय नगर के दूषित वातावरण से दूर ग्रामों में खोले जाने चाहिए, जहाँ विद्यार्थी अध्यापकों के अधिक सम्पर्क में आ सकें और सादगी एवं संयम से अपना चरित्र-निर्माण करना सीखें।

(ङ.) अनुशासन-प्रिय छात्रों की प्रशंसा करके उन्हें पुरस्कार आदि दिये जाने चाहिये, जिससे दूसरे छात्रों पर भी इसका प्रभाव पड़े। वे भी इस प्रकार का पारितोषिक आदि प्राप्त करने का प्रयत्न करें। साप्ताहिक साहित्य सभा आदि का भी आयोजन किया जाना चाहिये जिसमें अध्यापकों को चरित्र-निर्माण जैसे विषयों पर भाषण आदि देकर इसका महत्व समझाना चाहिये।

(च) बच्चों को अधिक मार-पीट करने का तरीका सर्वथा समाप्त किया जाना चाहिये। विद्यार्थियों की उचित माँगों को मान लेना चाहिये। मारने-पीटने से विद्यार्थियों में विद्रोह की भावना जागृत हो जाती है, वे भले होते हुये भी अनुशासन की सीमा को लांघ जाते हैं और फिर उन्हें अपने गुरूजनों से अभद्र व्यवहार करने में कोई संकोच नहीं होता।

(छ) पुस्तकालयों में चरित्र-निर्माण सम्बन्धी पुस्तकों का बहुल्य होना चाहिये। छात्रों को उनका महत्व समझाकर उन्हें इस बात की प्रेरणा देनी चाहिए कि वे उनका नियमित रूप से अध्ययन करें।

(ज) अनुशासन-वृद्धि का सबसे सहज उपाय है शिक्षक को अपना जीवन

सादा रखना। यदि अध्यापकों का रहन-सहन, आचार-व्यवहार, उच्च कोटि का है तो इसका विद्यार्थी के जीवन पर बड़ा गहन प्रभाव पड़ता है। कैसा भी कुटिल से कुटिल छात्र हो अध्यापक के उच्च चरित्र एवं विद्वत्ता से वह प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता। अतः अध्यापकों को कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये जिससे उसके गुरु पद को तनिक भी आँच आये।

अनुशासन उस दीपक के समान है जो भूले-भटकों को मार्ग दिखाता है। यह उस प्रकाश स्तंभ की भाँति है जो अंधकार में चलने वाली मांझियों का पथ प्रदर्शन करता है। इसके प्रकाश में सादगी, सदाचार विनय और साहस आदि मनुष्य के गुणों के चार चाँद लग जाते हैं और ऐसा मनुष्य समाज का एक प्रिय अंग बन जाता है। अध्यापकों का उच्च चरित्र एवं सादा जीवन ही विद्यार्थियों को संयत एवं अनुशासित कर सकने में सफल हो सकते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षकों को पूर्ण सुविधाएं दी जाएं।

(१६) गांधीवाद : समाजवाद

१. प्रस्तावना
२. गांधीवाद का अर्थ
३. समाजवाद की व्याख्या
४. गांधीवाद तथा समाजवाद में समानता
५. दोनों में तुलनात्मक भेद
६. विश्व की समस्याओं का समाधान : गांधीवाद

इतिहास परिवर्तन-शील रहा है। समय-समय पर नये विचार इतिहास को नया मोड़ देते रहे हैं। सत्य तो यह है कि नये विचारों का प्रयोग ही नया इतिहास है। प्रत्येक देश समय समय पर अपने सामाजिक उत्थान के लिए एक नवीन नारा, एक नवीन स्वर अलापता है। और उसके प्रयोग से सामाजिक सुख की खोज करता है। अपने वातावरण के अनुसार, अपनी परिस्थिति के अनुरूप जो प्रयोग सफल होता है, देश उसमें ही अपनी आस्था रखता है और उसका प्रचार करके अन्य लोगों को उसे अपनाने की प्रेरणा देता है। वे नये

प्रयोग आगे चल कर वाद (Ism) के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं। पूंजीवाद, मार्क्सवाद, समाजवाद एवं गांधीवाद आदि प्रारम्भ में समाज के लिये प्रयोग ही थे, जैसे जैसे उनसे सत्यता का आभास होने लगा, उन्हें लोक-मान्यता प्राप्त होने लगी, वे सर्वव्यापी होते गये। आज यदि आँख खोल कर देखें तो मालूम होगा कि विश्व-तनाव का मुख्य कारण ये वाद ही हैं। पूंजीवाद विश्व भर में पूंजीवाद को देखना चाहता है, समाजवाद पूंजीवाद का गला घोटना चाहता है। पूंजीवाद यदि समाजवाद की कलई उधेड़ता है तो समाजवाद पूंजीवाद की धज्जियाँ उड़ा देना चाहता है। संसार के दो गुट इन्हीं पूंजीवाद तथा समाज-वाद की प्रतिस्पर्द्धा मात्र हैं। दोनों एक दूसरे को काली धार में डुबोने की दौड़ में लगे हुये हैं। अन्त में क्या होगा ? इस प्रश्न का उत्तर हमें गांधी दर्शन में झलकता है। गांधीवाद, सम्भवतया आज की समस्याओं का समाधान हो सकता है।

वर्तमान भारतीय समाज पर गाँधी जी के विचारों की छाप है। वे प्रेम तथा सेवा के आधार पर समाज की रचना करना चाहते थे। वे सादा जीवन और उच्च विचार के समर्थक थे। उनका विचार था कि समाज से विषमता दूर हो, पूंजीपति अपने को पूंजी का संरक्षक-मात्र समझें और अपने धन को दरिद्रनारायण की सेवार्थ लगायें। वे गरीब तथा अमीर दोनो को खुशहाल देखना चाहते थे। यही उनका "राम राज्य" था कि सब को रोटी कपड़ा, शिक्षा-दीक्षा, रक्षा और शरण की सुविधा प्राप्त हो। वे प्रेम से हृदय-परिवर्तन करना चाहते थे, बलपूर्वक कुछ छीनने के वे पक्षपाती नहीं थे। शारीरिक श्रम को वे बड़ा महत्व देते थे, कड़ी मेहनत और ईमान की कमाई उनका आदर्श था। वस्तुतः गांधीवाद क्रोधी के लिए मित्र, हत्यारे के लिए रक्षक तथा निन्दक के लिये मधुर भाषी है।

समाजवाद आर्थिक असमानता के मूल कारणों की छानबीन करता है। वह अनुसंधान करता है कि समाज में राजाओं, जमींदारों, पूंजीपतियों तथा भिखारियों के मूल-आधार क्या है ? वह मानवीय शोषण के कारणों का पता लगाता है, इसका क्या रहस्य है इस बात को ढूंढता है। पूरी जाँच पड़ताल ..ने के बाद जब रोग की जड़ पकड़ में आ जाती है तो समाजवादी उसे उखाड़

फेंकता है और इस प्रकार समाजवाद सामाजिक बुराइयों को सदा के लिये दफना देता है। सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए वह शासन पर अपना आधिपत्य चाहता है। उसे प्रेम व सहानुभूति से हृदय-परिवर्तन पर जरा भी विश्वास नहीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गांधीवाद और समाजवाद का अन्तिम लक्ष्य सम्पूर्ण मानवता को खुश हाल बनाना है। दोनों आज की सामाजिक विषमताओं का अन्त करना चाहते हैं। आर्थिक क्रान्ति दोनों के लिए आवश्यक है। स्वावलंबन में दोनों का विश्वास है क्या गांधीवाद और क्या समाजवाद, दोनों श्रम का सम्मान करते हैं। कई विचारक तो गांधीवाद को स्वदेशी समाजवाद का नाम तक देते हैं। आज देश पर गांधीवाद विचार-धारा के मानने वालों का शासन है, उन तक ने समाजवादी-समाज की रचना की सरे-आम घोषणा की है।

गांधीवादी लोग समाजवाद को भारतीय जलवायु के अनुकूल नहीं मानते। भारतीय संस्कृति के अनुरूप वे स्वदेशी समाजवाद को अधिक महत्व देते हैं। किन्तु स्वदेशी क्या है ? जो विचार स्वयं गांधीजी ने व्यक्त किये हैं क्या वे पूर्णरूपेण भारतीय हैं। जो बात पूंजीपतियों के बारे में गांधीजी कहते थे, वही बात इंगलैण्ड के प्रसिद्ध लेखक एच० जी० वैल्स भी कहा करते थे। श्री वैल्स के अनुसार वर्ग-युद्ध बेवकूफी और खुराफातों से भरी हुई वस्तु थी। पूंजीवाद का अन्त वे वर्गों के समन्वय में देखते थे। गांधीजी के ये विचार फिर किस प्रकार स्वदेशी हो सकते हैं। वास्तविकता तो यह है कि सुधारवाद और क्रांतीवाद में सदा से विरोध रहा है। सुधारवादी लकीर के फकीर होते हैं, वे पुरानी लकीर पीटना पसन्द करते हैं और पुरानी व्यवस्था को ज्यों की त्यों कायम रखना चाहते हैं। उन्हें उस ढंग को बदलने वाली बात जरा भी पसन्द नहीं। गांधीजी पूंजीपतियों को मजदूरों की हालत सुधारने के लिए तो कहा करते थे और उनका खयाल था इससे वर्ण संघर्ष समाप्त हो जायगा, । इस प्रकार गांधीवाद का काम गरीब अमीर का भेद मिटाना नहीं, पुरानी टूट-फूट की मरम्मत करना ही है। इन बातों से मानना पड़ेगा कि समाजवाद को विदेशी मानना भी एक भूल है। गांधी जी अपने राम-राज्य में राजाओं और भिखारियों के अधिकार सुरक्षित रखना चाहते थे। इसका अर्थ हुआ कि उनकी समाज-व्यवस्था

में दोनों वर्ण रहेगें अवश्य, पर यह स्पष्ट नहीं कि भिखारियों के क्या अधिकार होंगे ? समाजवादी व्यक्ति समाज में इस वर्ग विषमता को रत्तीभर भी बर्दाश्त नही कर सकते। उन्हें यह बिल्कुल भी सह्य नही है कि कुछ मुट्ठी भर पूजीपति सारे समाज की छाती पर मूंग दलें और गुलछर्रे उड़ाये। समाजवाद इस फिलासफी या दर्शन का कायल नहीं है। पूंजीपतियों के पास इकट्ठा किया हुआ धन समाज की चोरी का माल हैं और गांधीवाद फिर उन पूंजीपतियों के हकों को सुरक्षित रखना चाहता हैं। इस प्रकार गांधीवाद कायरता पूर्ण आर्थिक विश्लेषण एवं प्रभाव शून्य नैतिकता की खिचड़ी हैं। गांधीवाद प्रेमपूर्वक हृदय परिवर्तन में विश्वास रखता है, पर मालूम नहीं कितने लोगों का इस प्रकार परिवर्तन हुआ है। हाँ इस दर्शन का इतना प्रभाव अवश्य दिखाई देता है कि पूंजीपति गांधीवाद के भक्त बन गये हैं।

समाजवादी गांधीवाद को थोथी फिलासफी मात्र समझते हैं, यह उनका भ्रम है। गांधीवाद एक कठोर सत्य है। जहाँ समाजवाद घृणा और फूट द्वारा मानवता का प्रचार करता है, वहाँ गांधीवाद इन दोनों का परित्याग करता है। समाजवाद में राज्य को सर्वोपरि समझा जाता है और व्यक्ति को राज्य के लिए विवश होकर श्रम करना पड़ता है, परन्तु गांधीवाद श्रम के महत्व का जन साधारण में प्रचार करता है। यदि समाजवाद अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये राज्य की मदद लेता है तो गांधीवाद अपनी सरलता के लिये व्यक्ति की आन्तरिक उन्नति पर विश्वास करता है। समाजवाद को अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिये 'तानाशाही' को उत्पन्न करना पड़ा। गांधीवाद स्वेच्छा से स्वार्थ-त्याग कराता है।

विश्व में क्या हो रहा है जरा गौर से देखनें पर मालूम होगा कि विश्व के दो शक्तिशाली गुट, समाजवादी रूस तथा पूंजीवादी अमेरिका रस्साखिचाई में लगे हुये हैं, विश्व को अपने प्रभाव में लाने के लिए अन्य राष्ट्रों को नाना प्रकार के प्रलोभन दे रहे हैं, सहायता दे रहे हैं। आपस में एक दूसरे से सशंकित हैं। आग अन्दर ही अन्दर सुलग रही हैं न मालूम कब चिनगारी निकल पड़े और भड़क उठे। ईश्वर न करे कि यह चिनगारी निकल पड़े, यदि आग भड़क उठी तो निश्चय मानिये, यह आग बुझाये न बुझेगी। आग लगाने वाले स्वयं

परेशान हो जायेंगे । पर आज दंभी मानव अपनी झूठी शक्ति तथा ध्वंसात्मक विज्ञान के दंभ से अपनी पूर्व संचित सभ्यता एवं संस्कृति को सदा के लिये मिटाने को तैयार सा बैठा है । वह हर बात शक्ति के बल मनवाना चाहता है । क्या गाली का जवाब गाली और चाँटे का जवाब तमाचा ही होता है ? मेरे खयाल से बिलकुल नहीं, सर्वथा नहीं । गांधीवाद विरोधी के लिए मित्र और हत्यारे के के लिए रक्षक है । यदि विश्व की सारी समस्याओं का हल ढूँढ़ना है हल गांधीवाद के अतिरिक्त अन्यत्र मिलना कठिन है । आज समाजवाद और तो उनका पूंजीवाद दोनों शस्त्राशस्त्रों की दोड़ में लगे हुए है। दोनों के पास अणु बम तथा राकेट तैयार पड़े है पर नतीजा क्या होगा और इसका समाधान कैसे होगा आइये इसका हल गांधीवाद में ढूँढें । विचारो में मतभेद हो सकता है, किन्तु युद्ध उसका निर्णय नही कर सकता । अपने मत-भेदों को हम शान्ति से एक जगह बैठ कर सुलझा सकते हैं । गांधी जी अपने शत्रु को भी मित्र मानते थे । वे प्रेम के द्वारा अन्यायी तथा अत्याचारी दुश्मन का भी हृदय-परिवर्तन कर दिया करते थे । अंग्रेजों का भारत छोड़ कर चले जाना हृदय परिवर्तन नहीं तो और क्या है । वे जाति हीन समाज की रचना करना चाहते थे । विश्व की मानवता को एक कर देना चाहते थे । आज गांधीवादी विचार-धारा न केवल चीन और भारत की समस्या और न भारत और पाक की समस्या का हल ढूँढ सकती है, बल्कि समस्त विश्व की समस्याओं का हल गांधीवाद में निहित है ।

(२०) जन-संख्या की समस्या और उसका हल

१. भूमिका—भारत की प्रमुख समस्याओं में एक ।

२. जन संख्या वृद्धि के कारण—धार्मिक, वर्णाश्रम व्यवस्था का लोप, दरिद्रता, जीवन स्तर का बहुत नीचा होना, शिक्षा का अभाव, आत्म संयम का अभाव और विलासिता की ओर रुचि, स्वास्थ्य-वर्द्धक औष-धियों का आविष्कार, चिकित्सा में उन्नति आदि ।

३. जन-संख्या वृद्धि को रोकने के उपाय—शिक्षा-प्रसार, व्यस्क-विवाह, बेकारी को दूर करना, मनोरंजन के साधनों का विकास, वैज्ञानिक साधनों का उपयोग ।

भारत की वर्तमान प्रधान समस्याओं में जन संख्या की वृद्धि भी एक महत्वपूर्ण समस्या है, जिसका हल किया जाना अत्यावश्यक है । भारत की जन संख्या प्रतिवर्ष तेज रफ्तार से बढ़ती जा रही है और आशंका की जाती है कि इस पर यदि रोक न लगाई गई तो यह समस्या भयंकर रूप धारण कर लेगी तथा अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं को जन्म दे देगी, जैसा कि हम प्रत्यक्ष में अभी भी अनुभव कर रहे हैं । खाद्य समस्या, बेकारी समस्या, मकान आदि की समस्या, जीवन स्तर को ऊंचा ऊठाने की समस्या आदि अनेक समस्याएं ऐसी हैं जिनका एकमात्र आधार जन-संख्या-वृद्धि है ।

जन-संख्या-वृद्धि के निम्नलिखित कारण हैः—

सर्व-प्रथम हम शास्त्रों को लेते हैं जो हमें प्रजा-वृद्धि का उपदेश देते हैं । धर्म-शास्त्रों के अनुसार पुत्र उत्पन्न करना आवश्यक है, क्योंकि अपुत्र को स्वर्ग की प्राप्ति नही होती । किन्तु उस युग में और आज के युग में महान अन्तर है । उस युग में जनसंख्या की कमी थी, भूमि अधिकांश में बेकार पड़ी रहती थी, अतः प्रजा-वृद्धि आवश्यक थी । किन्तु आज के युग में जन-संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है एवं खाद्य-पदार्थों का इस प्रकार अभाव बढ़ता जा रहा है कि हर समय हमें विदेशों के सामने अन्न व अन्य खाद्य सामग्री के लिए हाथ पसारना पड़ता है । अब हमें धर्म-शास्त्र के इस उपदेश की ओर से अपना दृष्टि-कोण बदलना पड़ेगा ।

वर्ण व्यवस्था और आश्रम-व्यवस्था का लोप भी जन-संख्या वृद्धि का एक कारण है । वर्ण-व्यवस्था के नष्ट होने पर जाति-बिरादरी का अब कोई बन्धन व भय नहीं रह गया है । विवाह, प्रेम आदि किसी के साथ भी कर सकता है, इसका परिणाम यह होता है कि विधवा-विवाह, प्रेम-विवाह आदि में वृद्धि हो रही है, अतः जन-संख्या में वृद्धि हो रही है । इसी प्रकार आश्रम-व्यवस्था के भंग होने पर बाल-विवाह होने लग गए । आश्रम-व्यवस्था में पच्चीस वर्ष पूर्व विवाह निषिध्य था और ५० वर्ष पश्चात् (वानप्रस्थ आश्रम में) सन्तान उत्पन्न करना निषिद्ध था, इस कारण जन-संख्या सीमित रहती थी, वृद्धि की अधिक गुंजाइश नहीं थी । वर्णाश्रम व्यवस्था के शिथिल होने व भंग होने पर समाज में अनेक कुरीतियों ने जन्म ले लिया और समाज को खोखला करने

लगीं। मुसलमानों के अत्याचारों के कारण भी बाल-विवाह होने लगे और 'अष्टवर्षा भवेत् गौरी' आदि श्लोक रच डाले गए। इस प्रकार वर्णाश्रम व्यवस्था के भंग होने पर सामाजिक कुरीतियों ने जन-संख्या वृद्धि में काफी योग दिया है।

समाज का जीवन-स्तर जितना नीचा होता है, दीनता और दरिद्रता जितनी अधिक मात्रा में होती है, जनसंख्या उतनी ही अधिक मात्रा में बढ़ती रहती है। हमारे देशवासियों का जीवन-स्तर कितना गिरा हुआ है, यह हमें उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। जीवन यापन करने के लिए अल्पायु में ही बच्चों को काम में लगा दिया जाता है और माँ-बाप अर्थोपार्जन में बच्चों से सहायता लेना प्रारम्भ कर देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि कम आय वाले लोग जल्दी विवाह कर लेते हैं और उनके सामने सन्तान उत्पन्न न करने का कोई प्रश्न ही नहीं रहता। धनाभाव के कारण वे अन्य किसी प्रकार से अपना मनोरंजन नहीं कर सकते, केवल वे अपनी पत्नी को ही मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन समझ बैठते हैं, जिसका परिणाम होता है—सन्तान वृद्धि। यही कारण है कि गरीबों के सन्तान अधिक होती है।

जन-साधारण में शिक्षा का अभाव भी जन-संख्या वृद्धि का एक कारण है। अशिक्षित लोग दूरदर्शी नहीं होते वे सन्तति निरोध के उपायों से अनभिज्ञ रहते हैं, संतति-निरोध को पाप समझते हैं। उनकी दृष्टि में सन्तानोत्पत्ति ईश्वर की देन है। इस प्रकार अशिक्षा और अज्ञान के कारण भी देश की जन-संख्या बढ़ती जा रही है।

भोग-विलास की ओर रुचि, संयम का अभाव भी जन-संख्या की वृद्धि करने में सहायता दे रहे हैं। आज हमारा नैतिक स्तर बहुत गिर गया है। हम अन्धाधुन्ध दूसरे देशों की नकल हर बात में कर रहें हैं, चाहे वे बातें हमारे देश की परिस्थितियों वा संस्कृति के विपरीत ही हों। आज की सभा-सोसाइटियाँ, क्लब-घर, नाच-घर, रेस्ट्राँ, सिनेमा, होटलें आदि हमें संयम-विहीन और नैतिकता से गिरा हुआ जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देते हैं। इनका हमारे मन और हृदय पर कितना दूषित प्रभाव पड़ता है, यह हम जानते हुए भी

वैज्ञानिक युग में अनेक प्रकार की औषधियों, चिकित्सा-साधनों एवं उपकरणों के आविष्कार के कारण अब मृत्यु-संख्या घट गई है। जब जन्म-संख्या बढ़ती रहेगी और मृत्यु-संख्या घटती रहेगी तो परिणाम होगा जन-संख्या-वृद्धि। लोगों का स्वास्थ्य अब पहले की अपेक्षा अच्छा है, औसत आयु में भी वृद्धि हो रही है, रोगों से मुक्ति पाने के अनेक साधन सुलभ हैं। ऐसी स्थिति में जन-संख्या की वृद्धि को रोकने के लिए सिवाय ईश्वरीय प्रकोप—महामारी, भूकम्प, दुर्भिक्ष आदि—के और कोई उपाय नहीं है।

जन-संख्या वृद्धि को रोकने के लिए निम्नांकित उपाय काम में लाये जा सकते हैं:—

जनता में शिक्षा का प्रचार किया जाय। शिक्षित व्यक्ति उस समय तक गृहस्थी का भार उठाना नही चाहता जब तक कि यह अपने पैरों पर खड़ा न हो जाय। विवाह-बन्धन में बंध जाने पर भी वह अधिक बच्चे पैदा करने की अपेक्षा अपना जीवन-स्तर ऊंचा करना श्रेयस्कर समझता है। शिक्षित महिलाएं भी अधिक बच्चे पैदा करने के पक्ष में नही है। शिक्षित व्यक्ति ही अपनी तथा देश की परिस्थितियों को भले प्रकार समझ सकता है। यदि धीरे-धीरे सब देश-वासी शिक्षित हो जांय तो जन-संख्या की समस्या बहुत हल हो सकती हैं, क्योंकि शिक्षित व्यक्ति केवल बच्चे पैदा करना ही नहीं जानते, वे उन्हें सुन्दर स्वास्थ्य और शिक्षित भी देखना चाहते हैं।

छोटी उम्र में विवाह नहीं होने चाहिएं। जब लड़के और लड़कियाँ पूर्ण वयस्क हो जाँय तभी उनका विवाह होना चाहिए। बड़ी उम्र में विवाह होने पर शीघ्र संतान न होगी और अधिक संख्या में भी न होगी जो संतान होगी वह स्वस्थ और अच्छी होगी। वयस्क होने पर व्यक्ति आत्म-संयम का महत्व भी समझ सकते हैं और वे सन्तान कम उत्पन्न करेंगे। इस प्रकार जन-संख्या की वृद्धि, बालिका विवाह बन्द कर, रोकी जा सकती है।

बेकार व्यक्तियों का ध्यान विलासिता की ओर अधिक जाता है। देश में अशिक्षितों और शिक्षितों दोनों में बेकारी फैली हुई है। अतः ग्रामोद्योग, कुटीर-उद्योग, गृह-उद्योग, शिल्प कला आदि का खूब प्रसार और प्रचार होना चाहिए, जिससे देश में बेकारी की समस्या भी हल हो जाय और

लोगों का ध्यान विभिन्न उद्योगों में लग जाय, जिससे वे अधिक सन्तान पैदा न करेंगे। निरन्तर काम करते रहने से वे विश्राम अधिक पसन्द करेंगे और विलासिता कम।

मनोरंजन के साधनों का विकास भी जन-संख्या की वृद्धि को बहुत कुछ रोक सकता है। जब लोग अपना अधिक समय मनोरंजन में लगा देंगे और उनका पर्याप्त मनोरंजन हो जायगा तो फिर वे स्त्री को मनोरंजन की वस्तु न समझेंगे। मनोरंजन वास्तव में मन पर ऐसा प्रभाव डालता है कि वह व्यक्ति को संयमी बनने के लिए मानसिक शक्ति प्रदान करता है। किन्तु यह ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि मनोरंजन के साधन स्वस्थ हों, गन्दे न हों।

हमारे देश में अशिक्षा, अज्ञान एवं रूढ़िवादिता के कारण लोग वैज्ञानिक साधनों का उपयोग नहीं करते जैसा कि अन्य सभ्य देशों में किया जा रहा है। इन साधनों के प्रयोग से जन-संख्या की समस्या बहुत कुछ हल हो सकती है। स्थान-स्थान पर परिवार-नियोजन-केन्द्रों की स्थापना करके संतति निरोध के लिए लोगों को शिक्षा दी जाय और यदि आवश्यकता हो तो उन्हें सहायता भी दी जाय तो भारत की बढ़ती हुई जन-संख्या रुक सकती है।

(२१) बेकारी की समस्या और उसका हल

१. भूमिका—आज के युग की प्रमुख समस्या
२. बेकारी का नग्नचित्र
३. बेकारी के कारण
४. बेकारी दूर करने के उपाय
५. सरकारी प्रयत्न
६. बेकारी दूर होने पर ही राष्ट्र उन्नति कर सकता है
७. उपसंहार

आज आप एक क्लर्क या अध्यापक की आवश्यकता के लिए एक विज्ञापन निकाल दीजिए, आपके पास हजारों प्रार्थना-पत्र पहुँच जायेंगे। आपको आवश्यकता है केवल एक की, आप लीजिए सैंकड़ों; आपको चाहिए केवल मैट्रीक्युलेट, आप लीजिये एम० ए०, बी० ए० और साथ में थोड़ा

अनुभवी भी। ये सब बातें यही प्रकट करती हैं कि हमारे देश में बहुत बेकारी फैली हुई है। यह बेकारी केवल शिक्षितों में ही हो, ऐसी बात नहीं है, यह अशिक्षितों में शिक्षितों से भी अधिक पाई जाती है, चाहे वे श्रमिक हों चाहे कृषक। यद्यपि यह समस्या आज की नहीं, यह अंग्रेजी शासन-काल से ही चली आ रही है तथापि वर्तमान में इसने उग्ररूप धारण कर रखा है और हमारी सरकार के लिए यह भी एक प्रमुख समस्या बन गई है, जिसका हल उसे खोजना है।

आज स्थान-स्थान पर 'काम-दिलाऊ' दफ्तर खुले हुए हैं, वे इस बात की घोषणा करते हैं कि देश में बेकारी उत्तरोत्तर वृद्धि करती जा रही है। काम दिलाऊ दफ्तरों के आँकड़े आपको बतायेंगे कि कितने लोग कितने समय से रोजगार की प्रतीक्षा में हैं। इन दफ्तरों पर आने जाने वाले बेकार एवं बेरोजगार लोगों की भीड़ पूछ ताछ के लिए प्रतिदिन चक्कर काटती रहती है। जरा बाग-बगीचों में, गली-मोहल्लों में, सड़क-चौराहों पर एक नजर डाल कर देखिये तो आपको पता लगेगा कि ऐसे स्थानों में एकत्र व्यक्तियों में ९५ प्रतिशत व्यक्ति बेकार हैं। बिना किसी रोजगार-धन्धे के वे इधर-उधर इसीलिए चक्कर काटते रहते हैं कि उन्हें कोई काम मिल जाय। इससे भीषण और क्या दृश्य होगा कि कभी-कभी बेकार व्यक्ति निराश होकर जीवन तक से हाथ धो बैठते हैं। समाचार-पत्रों में भी बेकारी और बेकार लोगों के सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ सदा निकलता ही रहता है, वह भी यही बतलाता है कि बेकारी की समस्या देश-व्यापी है और उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है।

बेकारी फैलने और बढ़ते रहने का प्रधान कारण है जन-संख्या में निरन्तर वृद्धि होना। काम के स्थान रिक्त होते हैं चार और काम करने वाले पैदा होते हैं आठ, तब बेकारी कैसे दूर हो। काम-धन्धे और काम के स्थान कठिनता से बढ़ते हैं दस प्रतिशत और जन-संख्या बढ़ती है बीस प्रतिशत, तब इस समस्या का हल क्या? इसका एक मात्र हल यही है कि जिस प्रकार भी संभव हो, जन-संख्या-वृद्धि को रोका जाय।

प्रणाली पर। इसे कौन स्वीकार नहीं करता कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली कितनी दूषित एवं अव्यावहारिक है। टकसाल के सिक्कों की भाँति सब शिक्षित एक ही साँचे में ढले हुए–सब फैशन-परस्त, शारीरिक श्रम से घबराने वाले, बाबूगिरी के उम्मीदवार चाहे वेतन थोड़ा ही मिले। देश की स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल दी जाने वाली शिक्षा ही लाभप्रद हो सकती है। जितने भी पढ़े-लिखे हैं, पढ़ रहे हैं और जो अब पढ़ेंगे, सबको नौकरी कैसे मिले और कहाँ मिले ? इस शिक्षा का मस्तिष्क पर कुछ ऐसा दूषित प्रभाव पड़ता है कि वे व्यक्ति भी, जिनके यहाँ अपने निजी घरेलु धन्धे चलते हैं, नौकरी करना ही पसन्द करते हैं और इसका एकमात्र कारण है श्रम के प्रति हीनता का भाव।

अभी हमारे देश में उद्योग-धन्धों में उतनी प्रगति नहीं हुई जितनी कि होनी चाहिए थी। अंग्रेजी-शासन-काल में सब गृह-उद्योगों के चौपट कर दिया गया। कृषक फसल के समय के अतिरिक्त शेष समय में बेकार बैठा रहता है। दैनिक पारिश्रमिक लेकर श्रम करने वाले श्रमिकों की कोई गिनती नहीं। उनके न आय के साधन ही निश्चित हैं, न दिन ही। वे केवल भाग्य-भरोसे चलते हैं, उनका जीवन निश्चित श्रम के अभाव में सदा अनिश्चित बना रहता है। महिने में केवल कुछ दिन ही उन्हें मजदूरी मिलती हैं, उसी से उन्हें गुजारा करना पड़ता है। जब तक देश में ग्रामोद्योग, गृह-उद्योग एवं कुटीर उद्योगों का समुचित और पर्याप्त विकास न होगा, उस समय तक बेकारी अपना मुंह बाये खड़ी ही रहेगी।

देश व्यापी इस बेकारी को दूर करने का प्रथम उपाय है जन-संख्या-वृद्धि को रोकना। इसके लिये सरकार को चाहिये कि जनता में संतति-निरोधक उपायों का प्रचार करे, जनता को शिक्षित करे और सामाजिक कुरीतियों को कानून की सहायता से दूर करे। जब समाज का प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित और समझदार बन जायगा तो वह उतनी ही सन्तान पैदा करेगा जिनका कि वह भरण-पोषण ठीक तरह से कर सकता है। इस प्रकार जब जन-संख्या की वृद्धि रोक दी जायगी तब बेकारी की समस्या भी धीरे-धीरे कम हो जायगी।

को मानव की रचनात्मक शक्ति की सौन्दर्य मय अभिव्यक्ति मानता है, कोई

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में सुधार होना चाहिए। कोरी किताबी योग्यता किसी काम की नहीं। जिस शिक्षा का जीवन में कोई उपयोग नहीं, जिसका जीवन से कोई मेल नहीं, वह शिक्षा किस काम की। शिक्षा व्यावहारिक और जीवनोपयोगी हो, जिससे हमारे सामने जीविकोपार्जन का प्रश्न ही न उठे। केवल बहुद्देशीय स्कूलों की स्थापना-मात्र से काम न चलेगा। विभिन्न उद्देश्यों या कार्यों के प्रति छात्रों की सच्ची रुचि हो और अध्ययन समाप्त करके वे जीवन में उन्हीं कार्यों को करें, अब तो इस प्रकार के स्कूलों की शिक्षा सार्थक कही जा सकती है, अन्यथा वह किसी काम की नहीं। लोगों को विभिन्न प्रकार की शिक्षा-कलाओं को सीखने के लिए सरकार की ओर से शिक्षणालय खुलने चाहिए। शिक्षा के साथ-साथ रचनात्मक एवं प्रयोगात्मक शिक्षा का भी समुचित प्रबन्ध होना चाहिए। औद्योगिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम में पूर्ण स्थान देकर औद्योगिक शिक्षा शालायें पृथक-पृथक रूप में खोलनी चाहिये। यदि सरकार की तरफ से शिक्षा में इस प्रकार के परिवर्तन कर दिये जायं, जैसा कि ऊपर लिखा गया है, तो शिक्षितों में बेकारी की समस्या बहुत कुछ हल हो सकती है।

देश में यदि समाज-वादी ढंग की व्यवस्था चालू कर दी जाय, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता और श्रम के अनुसार पारिश्रमिक मिले और योग्य कार्यों के करने के लिए योग्य व्यक्ति, तो बेकारी की समस्या हल हो सकती है। आज हम देखते हैं कि कितने ही योग्य व्यक्ति तो दर-दर भटकते फिरते हैं और बेकार बैठे हैं और अयोग्य व्यक्ति बड़े बड़े वेतन पा रहे हैं और गुलछर्रे उड़ा रहे हैं। समाजवादी ढंग की व्यवस्था होने पर श्रेणी-भेद, वर्ग भेद जैसी विषमतायें समाप्त हो जायेंगी और साथ ही बेकारी का भी को समुचित हल ढूंढ निकाला जायगा।

सरकार की तरफ से बेकारी दूर करने के बराबर प्रयत्न किये जा रहे हैं। बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना, कला कारखानों को प्रोत्साहन देना, गृह-उद्योग व कुटीर-उद्योगों को सहायता देना, अनेक स्थानों पर विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण-केन्द्रों की स्थापना करना—इन सब बातों के पीछे सरकार का ध्येय उत्पादन-

चुप नहीं है, प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में बेकारी को दूर करने के लिए वह प्रयत्न-शील दिखलाई देती है।

जब तक देश से बेकारी और भुखमरी दूर नहीं होगी, देश उन्नति नहीं कर सकता। बेकारी की समस्या का पूर्ण हल होने पर ही राष्ट्र का सर्वांगीण विकास समझा जायगा। इसलिए जितना शीघ्र हो सके, उतना ही हमें इस समस्या का समुचित हल ढूंढकर देश के प्रत्येक व्यक्ति को काम पर लगा देना है।

(२२) समाज में नारी का स्थान

१. भूमिका
२. प्राचीन काल में समाज में नारी का स्थान
३. आधुनिक काल में नारी की स्थिति
४ उपसंहार

राजा राम को राजसूय यज्ञ करना था। सीता की अनुपस्थिति में यज्ञ पूर्ण हो तो कैसे ? अर्द्धांगिनी जो नहीं थी। अन्त में सीता की स्वर्ण-प्रतिमा बनाई गई और यज्ञ की पूर्णाहुति हुई। यह था प्राचीन समाज का ढाँचा जहाँ नारी का पुरुष के समान सत्कार होता था। उसकी अनुपस्थिति में यज्ञ एवं धार्मिक समारोहों का होना नितान्त असम्भव था। पुरुषों के समान ही इन्हें राजनैतिक, सामाजिक, एवं धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। पुरुषों के साथ स्त्रियां कंधे से कंधा मिला कर रण क्षेत्र में उतर पड़ती थीं। महासमर में महाराजा दशरथ का रथ जब जवाब दे रहा था तो कैकेई ने अपनी अंगुली लगा कर उसे थाम लिया था और उसे गिरने से बचाया था। जीवन के किसी भी क्षेत्र में स्त्रियां पुरुष से पीछे नहीं रहती थीं। राज महलों के सुखों की अपेक्षा वन वास के चौदह वर्ष सीता को कहीं अधिक प्रिय थे। उस काल में स्त्रियां भी उतनी ही पूज्य थीं जितने कि पुरुष। 'सीताराम' 'राधेश्याम' आदि भगवत भजनों के शब्दों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि प्राचीन समाज में नारी का कितना आदर था। विद्वानों का विचार था "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" किन्तु कुछ-एक विद्वानों ने नारी का बड़ा ही विद्रूप हमारे समक्ष रखा है जिसे पढ़कर मन में एक टीस सी उठती है; हृदय फट पड़ता है; मस्तिष्क विक्षुब्ध हो जाता है कि काश ! उन्होंने नारी का सच्चा स्वरूप पहिचाना

होता। देखिए महाकवि तुलसी ने कितनी निर्ममता एवं हृदय-हीनता के साथ नारी चरित्र का परिहास किया है "ढोल गंवार शूद्र पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी"। कामांध तुलसीदास को नारी के द्वारा यदि ताड़ना नहीं मिलती तो क्या तुलसीदास महाकवि बन गये होते ? यह नारी ही थी जिसने साधारण से व्यक्ति को महाकवि बना डाला। विद्योतमा की प्रेरणा के बिना एक महामूर्ख का क्या विश्व विख्यात कवि कालीदास बनना सम्भव था ?

कुछ विद्वानों ने तो यहाँ तक कह डाला है "नारी-प्रसंगस्तु नरकस्य द्वारम्"। किन्तु यदि वास्तविकता की कसौटी पर रख कर इन तथ्यों को परखा जाय तो स्वतः ही स्पष्ट हो जायगा कि कितने छिछले, कितने अपूर्ण एवं कितने अपरिपक्व विचार हैं ये, जो नारी की महानता, साहस एवं सहृदयता को विस्मृत कर, उसे कामुकता के गर्त मे गिराने का असफल प्रयत्न कर रहे हैं राजस्थान का इतिहास जब उन हजारों ललनाओं की याद दिलाता है जिन्होंने अपने सम्मान की रक्षा के लिये लपलपाती लपटों से लिपट जाने में तनिक भी संकोच नही किया, तो रोंगटे खड़े हो जाते है। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई को कौन नहीं जानता ? जिसके शौर्य के आगे गौरांग प्रभुओं के भी छक्के छूट गये थे। यह राजस्थान की हाड़ी रानी ही थी जिसने अपने पति की सुख सेज पर पैर रखते रखते ही अपना सिर देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अर्पण कर दिया था और अपने पति को कर्त्तव्य-परायणता का पाठ सिखाया था।

किन्तु समय की परिवर्तन शीलता के साथ-साथ नारी का स्थान भी गिरता गया और वह कहां से कहां पहुँच गई। जैसे-जैसे समाज ने नारी जाति को नीचे की ओर ढकेला, वैसे ही वैसे देश अधः पतन की ओर बढ़ता गया और कुछ ही दिनों में इसकी गणना संसार के पिछड़े राष्ट्रों में की जाने लगी। मुगलों के सम्पर्क में आकर भारतीय समाज विलासी एवं आलसी हो गया। सुरा एवं संगीत की मदहोशी में नारी वासना-तृप्ति का साधन मात्र रह गई। पर्दे की प्रथा जो उस काल में भारतीय नारी की रक्षक थी, भक्षक बन बैठी और उसे ऐसा पंगु बनाया कि आज तक उसके कठोर शिकंजो से उसके लिए निस्तार पाना अति कठिन दिखाई पड़ रहा है।

एक ही नहीं समाज ने अपने स्वार्थ-साधन के उद्देश्य से ऐसी हजारों

कुरीतियों को जन्म दिया जिसके कारण स्त्रियों का ऊपर उठना बड़ा कठिन हो गया है। घर में लड़की का जन्म लेना अशुभ समझा जाने लगा। जन्म के साथ ही उसे मृत्यु-द्वार भी दिखा दिया जाने लगा। अब इस प्रकार का निकृष्ट नियम तो हटा लिया गया है, किन्तु फिर भी कन्या जन्म की सूचना मात्र से ही परिवार को महान क्षोभ होता है। लड़कियों की अपेक्षा लड़कों की शिक्षा-दीक्षा पर अधिक जोर दिया जाता है। गावों में लड़कियों को पढ़ाना भी एक हास्यास्पद बात समझी जाती है। अल्पवयस्क विधवाओं को समाज ने पुनः नही अपनाया तो परिणाम-स्वरूप उन्हें वेश्यावृत्ति के लिए बाध्य होना पड़ा। परिवार में नारी का स्थान एक दासी से भी गया गुजरा है। सूर्योदय के पूर्व से लेकर रात्री में देर तक उसे काम की चक्की में पिसना पड़ता है, मूक घुन की भाँति। कहीं-कहीं तो उसे गालियां और मार-पीट तक सहनी पड़ती हैं। उसके अधिकारों का कोई मूल्य नही। पति की मृत्यु के पश्चात् उसकी सम्पत्ति पर उसका कोई अधिकार नहीं। पति द्वारा ठुकराई गई नारी का समाज में कोई ठिकाना नही। पति से सम्बन्ध-विच्छेद होने पर उसका कोई अस्तित्व नही। नारी पर होने वाले अत्याचारों की कहां तक गणना की जाय, जितना कहें उतना थोड़ा है। स्त्रियों की यह दारुण दशा गुप्त जी से न देखी गई, उनका कवि हृदय करुण चीत्कार कर उठा—

"अबला-जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में है दूध, और आंखों में पानी।।

कितना हृदय स्पर्शी एवं धार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है कवि ने। सदियों से मानव का भरण-पोषण करते करते और साथ ही उसके अत्याचारों को सहते-सहते उसका हृदय क्षुब्ध हो गया है। नारी निरीह हो गई है और आज अपनी स्थिती को संभालने की क्षमता भी नहीं रही है उसमें। अपने पतन की, अपनी अधो-गति की एवं अपने अधिकारों की ओर उसका ध्यान न जाय तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

यदि आज हम चाहते है कि हमारे समाज की उन्नति हो, हमारी जाति की उन्नति हो एवं देश का प्राचीन वैभव लौट आये और हम अपने खोये हुए गौरव को पुनः प्राप्त कर सकें तो हमें अनिवार्यतः नारी के सच्चे स्वरूप को पहिचानना होगा, हमें उसके हृदय की गहराई का पता लगाना पड़ेगा और

हमें उसकी सहनशीलता की दाद देनी होगी। हमें उसे पुरुष के साथ लाकर बिठाना होगा। नारी तो गृहस्थी रूपी यान का एक पहिया है, बिना जिसकी सहायता के गृहस्थी का सुचारु रूप से चलना नितान्त असम्भव है। एक की सहायता के बिना दूसरा आगे बढ़ ही नही सकता। 'हाथ कंगन को आरसी क्या' अमेरिका, रूस एवं चीन आदि देशों के दृष्टांत हमारे समक्ष हैं जिन्होंने नारी को अवसर देकर देख लिया कि अल्प काल में ही नारी ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में असाधारण सफलता प्राप्त करली है। पुरुषों से किसी भी तरह वह कम परिश्रमी, साहसी एवं वीर साबित नही हुई है। नारी समाज का दर्पण है। सच्ची नागरिकता का जो पाठ बालक माँ की गोद में सीख पाता है वह अन्यत्र कहीं भी नहीं सीख सकता। किसी अंग्रेज विद्वान ने ठीक ही कहा है, "Hands that move the cradle, rule the world"। अतः यह निश्चित है कि नारी की स्वतन्त्रता, नारी की शिक्षा एवं नारी के सहयोग के बिना हम अपनी एवं अपने राष्ट्र की उन्नति कदापि नही कर सकते।

(२३) क्या विज्ञान एक अभिशाप है ?

१. प्रस्तावना—विज्ञान की परिभाषा
२. विज्ञान एक अभिशाप के रूप में
३. विज्ञान को अभिशाप समझना एक भूल
४. विज्ञान से लाभ
५. उपसंहार

परिवर्तनशील कराल काल के प्रभाव से संसार की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील रही है। मानव सभ्यता एवं संस्कृति का भी यही हाल रहा है। कुछ लाख वर्षों पूर्व की बात है मानव दिगम्बरावस्था में जीवन-यापन किया करता था। परन्तु सुख-सम्पन्नता की लालसा तो उसमें नैसर्गिक कामना है, लवण है। उसने प्रकृति में होने वाली बातों का पता लगाना शुरू किया, अपने सुख के लिये कारण व कार्य की खोज प्रारम्भ की। परिश्रम कब असफल रहा है? शनैः शनैः वह आगे बढ़ता ही गया। यह अनुसंधान ही उसकी वैज्ञानिक खोज है। आधुनिक काल बहुत अंशों में वैज्ञानिक युग की पराकाष्ठा है। विज्ञान की सहायता से उसने स्वर्णिम सभ्यता को जन्म दिया है। परन्तु दुःख इस बात का है कि

जिस स्वर्णिम सभ्यता को उसने अपने हाथों जन्म दिया है उन्हीं हाथों से वह चिरसंचित संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट करने पर तुला है। जिस प्रबलता से उसने रचनात्मक कार्य किये हैं आज विज्ञान की सहायता से वह उन्हें उसी प्रचण्डता से समाप्त कर देना चाहता है। आज विज्ञान का संहारक पक्ष वजनदार है इसका मुख्य कारण विश्व के लोगों में आपसी तनाव है। आधुनिक विश्व की राजनीति इसे षड़यंत्रकारी रूप प्रदान करने में मुख्य कारण है।

समझा ऐसा जाता था कि विज्ञान मनुष्य को देवता बना देगा पर आज वह दानवों से भी गया बीता हो गया है। मशीनों का निर्माण करके आज वह स्वयं पत्थर दिल हो गया है। वह यन्त्र-सा निर्मम और भीषण क्रूर बनता जा रहा है। मानवी गुण उसमें से काफूर होते जा रहे है। विज्ञान ने मनुष्य को आत्महीन, भौतिकवादी जीव बना दिया है। ऐसा अनुभव होता है मानो उसने अपनी रचनात्मक सभ्यता के प्रति तीव्र विद्रोही होने का व्रत ले लिया है। विज्ञान की शक्ति ही ने मनुष्य को दुर्जेय दानव बनाने का साहस किया इससे कौन इन्कार कर सकता है।

प्राचीन काल में युद्ध रणक्षेत्र तक ही सीमित रहते थे, किन्तु आज के लोहे के दृढ़ टैंक, ज्वालामुखी के तुल्य अग्निवर्षक राकेट बम, द्रुतगामी जेट की मार से घर, पर्वत, बन में लुके-छिपे प्राणियों तक को भाड़ के चनो की भांति भून कर खाक करने में पीछा नहीं छोड़ते। कितने और भी ऐसे शस्त्रास्त्र हैं जिनके चलाने से पृथ्वी हिलने लगती है, आकाश फटने लगता है और पाताल लोक में हलचल मच जाती है। उनके प्रकोप से बचना बड़ा कठिन है।

प्रति दिन नये प्रयोग किये जातें हैं। यदि आज अमेरिका हाइड्रोजन बम का परीक्षण करता है तो कल सोवियत रूस किसी अन्य वस्तु का परीक्षण करता है। सारा वायु मण्डल विषाक्त हो रहा है। जहरीली गैस मनुष्य को कीट पतंगों से भी बुरे ढंग से मौत के घाट उतार रही है। जल, वायु एवं भोज्य पदार्थ सब पर जहरीली गैसों का प्रभाव पड़ा है। एक प्रकार की महामारी फैल रही है। नित नई बिमारियों से माताओं की गोदें सूनी हो जाती हैं, कितनी ही देवियों का सिन्दूर मिट जाता है। असहाय वृद्धों तथा शिशुओं की करुण चीख सुन-सुन कर कान बहरे से होते जा रहे हैं।

और नागसाकी पर अणु बम गिराये गये, आँख झपकन भर का दर था कि तीन लाख की आबादी वाले नगर झुलस-झुलस कर दुश्मन की ज्वाला में आहुती देने लगे। बात की बात में सब स्वाहा हो गया। पृथ्वी की उर्वरा शक्ति जाती रही, दरारें फट गईं, पत्थर पिघल गये, नदी नाले और सरोवर सूख कर खंडहर हो गए फिर प्राणधारियों की तो क्या मजाल जो कि वे बच जाते। वहाँ धन-जन की कितनी हानि हुई? इसका क्या उत्तर दिया जाय, बस इतना कह सकते हैं, हे विज्ञान! तेरा नाम विनाश और सर्वनाश है।

द्वितीय महायुद्ध समाप्त हुआ, विश्व ने ठण्डी सांस ली। विश्वास हुआ अब मानव युद्ध का नाम तक लेने का साहस न करेगा। पर ऐसा न हुआ। जिस प्रकार एक श्रमिक कुछ काल विश्राम करके अपनी खोई हुई शक्ति को फि प्राप्त कर लेता है उसी प्रकार आज के राष्ट्रों की मनोवृत्ति भी ऐसी ही प्रती होती है। विज्ञान के विकृत बल पर संसार की महान् शक्तियाँ अपने-अप संहारक बल की शेखी बघारने में अपना गौरव समझती हैं। अमेरिका अप शस्त्रागार को अणु आयुधों से सुसज्जित कर रहा है तो सोवियत रूस भी कु कम नहीं। इसका प्रभाव संसार के अनुन्नत देशों पर भी पड़ रहा है। उनकी रचना और निर्माण कार्यों पर बड़ा आघात पहुँचा है।

अतः आज हम इस स्थिति में है और कह सकते हैं कि आज का विज्ञान एक अभिशाप है।

"विज्ञान एक अभिशाप है, विज्ञान ने सारे विश्व को आतंकित कर रखा है।" कितना सुन्दर तथ्य उपस्थित किया गया है। परन्तु यह तो सिक्के के एक पहलू का वर्णन हुआ, दूसरे को पलट कर न देखना हुआ। जब तक हम दोनों पहलुओं पर विचार न कर लें हमारा न्याय नहीं, अन्याय है। थोड़ी देर के लिए मान लीजिए एक कलाकार ने एक चाकू बनाया, इसलिए कि शरीर में यदि फोड़ा हो जाय तो उससे निर्विकार कर दिया जाय या इसलिए कि गृहणी अपनी रसोई में शाक सब्जी तराश ले। पर इसके स्थान पर अज्ञान बालक अपनी अंगुली काट ले या पागल किसी के पेट में भोंक दे तो इसमें चाकू का क्या दोष है। आपने यह नहीं देखा विज्ञान ने मानवता की कितनी सेवायें की हैं। यदि

स्वार्थी मानव अपनी अज्ञानता या पागलपनवश उसका दुरुपयोग करता है तो इसमें विज्ञान का क्या दोष है।

विज्ञान के आविष्कारों ने इतिहास में युग परिवर्तन कर दिया है। विज्ञान ने निराशा के महा-तिमिर का विनाश कर आशा की ज्योति जगा दी है। जीवन में गति, संगीत और प्रगति का संचार कर एक काया कल्प कर दिया है। जगल में मंगल कर दिया है।

बीसवीं सदी विज्ञान की सदी है। विज्ञान ने 'सत्यं, शिवं, और सुन्दरम्' को साक्षात्कार कर दिखाया है। किसी समय जीवन की सुख-सुविधायें जो केवल राजा-महाराजा या लक्ष्मीपतियों को उपलब्ध थी वे आज विज्ञान ने दीन तथा दरिद्र को भी सस्ते मूल्य पर प्राप्त करा दी है। विज्ञान से मनुष्य को अणु में निहित द्रव्य शक्ति का ज्ञान प्राप्त हुआ है। अणु शक्ति के बलबूते पर सोवियत रूस ने अपनी नदियों के प्रवाह को बदल कर बंजर साइबेरिया के रेतीले टीलों को सुरम्य लहलहाते खेतों में बदल दिया है। अलंघ्य पहाड़ों को चूर मूर करके बांधों का निर्माण किया है। कृत्रिम जलवायु तथा ऋतु परिवर्तन करने में इसकी उपयोगिता सिद्ध हुई है।

कहते थे मनुष्य प्रकृति का दास था, पर आज वह स्वामि बनता जा रहा है। नदियों में बाढ़ मानव कृतियों से जल कर उसे तहस-नहस कर देना चाहती है, मरुभूमि अपना विस्तार करके मानवताको अकाल में समेटना चाहती है। परन्तु धन्य है विज्ञान को कि उसकी एक चाल पार नही पड़ती। वहाँ अन्न का अभाव होने पर वायु सेना के जहाज मार्ग दर्शन करते है। भारी से भारी शिला-खण्डों को उठाकर क्रेन पंच बांध योजना को सफल बनाते हैं। बड़े-बड़े ट्रेक्टर तथा बुलडोजर समतल मैदान तैयार कर रहे हैं। आज १०० से २०० मंजिल तक के मकान बनाने में वैज्ञानिक यंत्र ही हमारी सहायता करते है। यदि लिफ्ट हमें चढ़ने-उतरने में मदद न करता तो हमारा क्या हाल होता ? आज एक घर में आग लग जाये और दानवाकार जल बरसाने वाली दमकलें न हों तो संपूर्ण सुन्दर नगर पल भर में अग्नि देवता की भेंट चढ़ जाय। आज मनुष्य विज्ञान की सहायता से प्रकृति का स्वामी है।

विज्ञान एक अपरिमित शक्ति है। जो परिधान किसी समय चक्रवर्ती

सम्राटों को भी देखने को नहीं मिलते थे, आज वे गांग्या धोबी को नसीव हो रहे हैं। जल, थल और आकाश में चलने वाले जो वाहन किसी समय सेठ–साहूकारों तथा नरेशों को नसीव न थे उनका प्रयोग आज जन साधारण कर रहा है। तार, टेलीफोन, रेडियो टेलीविजन आदि ने जीवन का एक नया दृष्टिकोण बना दिया है। शीतल गोदामों ने हमारे खाद्य पदार्थों को सड़ने-गलने से बचा दिया हैं। विद्युतमयी कूलर भीषण गर्मी में शिमला तथा काश्मीर का आनन्द लुटाते हैं और वातानुकूलित व्यवस्था सर्दी की ठण्डो हवाओं से रक्षा करती है। मानों विज्ञान ने पृथ्वी को स्वर्ग बना दिया है।

मशीनों के आविष्कार ने उत्पादन में वृद्धि की है, साथ ही थकाने वाले श्रम को अपने ऊपर लेकर आज के श्रमिक को सुख की स्वांस लेने में सहायता दी है। भारी मात्रा में तैयार माल सस्ता तथा उत्तम होता है और जनसाधारण को क्रय शक्ति के अनुकुल भी। समय की बचत और धन की वृद्धि आज विज्ञान का ही तो परिणाम है।

स्वास्थ्य के लिए भी विज्ञान पीछे नहीं रहा। विज्ञान ने कितने असाध्य रोगों का पता लगाने तथा उन्हें आमूल नष्ट करने में बड़ी मदद की है। पैंसिलीन ने एक नवीन अध्याय का श्री गणेश कर दिया है। शल्य चिकित्सा के लिए एक्स-रे एक अद्भुत देन है। कैंसर आदि रोगों के लिए रेडियम एक राम–बाण सिद्ध हुआ है।

विज्ञान ने यात्रियों को अनेक सुविधायें दी हैं। बम्बई में प्रातःकाल चाय पानी लेकर रवाना होने पर हम दोपहर का भोजन लन्दन में कर लेते हैं। दूसरे दिन न्यूयार्क के सिनेमाओं में आनन्द लेकर हम वापस घर लौट आते हैं। संचार–साधन कितना सुरक्षित, सस्ता और आरामदेह बन गया है।

मनोरंजन के साधनों में भी विज्ञान ने एक क्रांति उपस्थित कर दी है। चलचित्रों में चलती–फिरती हंसती गाती तारिकाओं की छाया हमारी थकान और उदासी को दूर कर देती है। स्वर्गीय सहगल तथा के० सी० डे के मधुर कण्ठों का रस आज भी हम ग्रामोफोन रेकार्ड पर सुन लेते हैं। रेडियो हमारे सुख–दुख का साथी है। टेलीविजन तो और भी चमत्कार पूर्ण है। वक्ता का चित्र भी आज हमारे सम्मुख उपस्थित हो जाता है।

एक समय था महिलाओं को अधिकतर समय खाने-पीने की वस्तु तैयार करने के लिए बिताना पड़ता था। पर बिजली के यन्त्र आज उसके हर कार्य में मदद करते हैं। समय देखकर दाल-भात साग तरकारियाँ चूल्हे पर चढ़ा दी जाती हैं और कुछ समय में ही वे सब स्वतः तैयार हो जाते हैं। घर के बर्तन अपने आप साफ हो जाते हैं। सफाई, कपड़ों की धुलाई तथा सिलाई आदि तक बिजली के यन्त्रों से पूरे हो जाते हैं।

छापाखाना विज्ञान की अनुपम भेंट है। यदि कल्पना की जाय कि विज्ञान हमें छापाखाना ही न देता तो क्या होता? क्या होता, आज हम सैकड़ों वर्ष पिछड़े होते। जिस विकाश की चर्म-सीमा से हम गुजर रहे हैं वहां हम न होते। मुद्रणालय ने पुस्तकों और समाचार पत्रों को जन्म दिया है। इसने हमारी संस्कृति की रक्षा तो की ही है पर साथ ही विद्या के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है।

विश्व के तनाव को कम करने में भी विज्ञान ने कम काम नहीं किया है। लोग एक दूसरे को समझने लगे हैं, आपस में प्रेम, मित्रता तथा सहयोग की वृद्धि हुई है। व्यापार में आशातीत उन्नति हुई है। इस प्रकार विज्ञान मानव कल्याण के लिए एक कल्पतरु है। अतः विज्ञान मानव जाति के लिए एक स्वर्गिक वरदान है, अभिशाप बिल्कुल नहीं—सर्वथा नहीं।

(२४) विद्यार्थी और राजनीति

१. भूमिका
२. विद्यार्थी-जीवन का महत्व
३. विद्यार्थी-जीवन का राजनीति से कोई मेल नहीं
४. विद्यार्थी को राजनीति में भाग नही लेना चाहिये
५. विद्यार्थी को राजनीति में भाग लेना चाहिए
६. उपसंहार

विद्यार्थी-जीवन ही बालक की समग्र भावी उन्नति की आधार-शिला है। यहीं से विद्यार्थी अपने मस्तिष्क का विकास आरम्भ करता है। विद्यार्थी-जीवन पर ही उसके आगे के जीवन का बनना-बिगड़ना निर्भर है। वस्तुतः विद्यार्थी-

सिवाय हानि के लाभ कुछ नहीं होता। जिन छात्रों का ध्येय विद्याध्ययन करके अपने को योग्य बनाना होता है, वे राजनीति के पचड़े में कभी नहीं पड़ते। अध्ययनशील विद्यार्थी राजनीति को साँप समझते हैं; वे कभी उसके समीप नहीं जाते, किन्तु जिन छात्रों को नेतागिरी का शोक लगा हुआ हैं, उनके मस्तिष्क में अध्ययन करते समय भी राजनीतिक विचार ही चक्कर काटा करते हैं। ऐसे छात्र आरंभ से ही दलगत राजनीति के शिकार हो जाते हैं और अपना भविष्य बिगाड़ लेते हैं। जो छात्र गुट-बन्दी में फँस गया, जिसमें नेतागिरी की बू भर गई, उसकी स्थिति डावांडोल हो जाती है— वह न घर का रहता है, न घाट का।

विद्यार्थी का लक्ष्य विद्योपार्जन है, राजनीति उसके इस लक्ष्य की पूर्ति नहीं कर सकती। राजनीति वास्तव में धूर्तों का खेल हैं, सरल और शुद्ध- हृदय *विद्यार्थियों को इसमें भाग नहीं लेना चाहिए। राजनीति छात्रों के अध्ययम में* ही बाधा नहीं डालती, वह उन्हें गुमराह (पथ-भ्रष्ट) भी कर देती हैं। वह उनके मस्तिष्क में नाना प्रकार के विकार भी भर देती है। इसलिए छात्रों कों चाहिए कि वे सर्व-प्रथम अपने को योग्य बनावें, तदनन्तर वे राजनीति में भाग लें। यदि आरंभ में ही मकान की नींव कच्ची रह गई तो परिणाम शुभ नहीं निकल सकता। इसलिए विद्यार्थियों को पहले अपनी नीवें दृढ़ बना लेनी चाहिए अर्थात अपने विचारों को परिपक्व बना लेना चाहिए, तब उन्हें राजनीति में सक्रिय भाग लेना चाहिए। इसके अतिरिक्त छात्रों को इस बात पर भी थोड़ा विचार कर लेना चाहिए कि वही व्यक्ति कुशल राजनीतिज्ञ बन सकता है जिसने उच्च कोटि की शिक्षा ग्रहण की हो! जिसकी शिक्षा ही अधूरी है, वह गंभीर और जटिल राजनीतिक समस्याओं को कैसे सुलझायेगा ?

छात्रों में जोश बहुत होता है। वे शीघ्र ही आवेश में आ जाते हैं और आन्दोलन आरंभ कर देते हैं, अदूरदर्शिता के कारण उसके परिणामों पर विचार नहीं करते, किन्तु उनका जोश दूध के उफान की तरह होता है, जो ठंडे जल के छींटे खाकर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। अंग्रेजी शासन-काल में अंग्रेजों के विरुद्ध किये गये विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों में छात्रो ने सक्रिय भाग लिया था, आवेश में आकर सहस्त्रों नवयुवकों ने स्कूल और कालेज छोड़ दिये थे, किन्तु ऐसा

करने से उन्हें कोई लाभ न हुआ। गांधीजी तथा अन्य नेता भी यही चाहते थे कि विद्यार्थी क्रान्ति आन्दोलन में भाग न लें। विद्यार्थियों के इस प्रकार राजनीति में कूद पड़ने की उन्होंने कभी सराहना न की।

इसका अर्थ यह नहीं कि विद्यार्थी राजनीति से आँख ही मूँद लें, वे अपने देश के बारे में सोचे ही नही। जिस प्रकार विद्यार्थी के लिए अन्य प्रकार की शिक्षा अपेक्षित है, उसी प्रकार राजनीति की शिक्षा प्राप्त करना भी उसके लिए आवश्यक है तथा स्वतंत्र भारत में और लोकतंत्र प्रणाली में तो इसकी और भी अधिक आवश्यकता है। आज के विद्यार्थी ही कल के नेता बनेंगे, देश का शासन-सूत्र वे ही सँभालेंगे। फिर उन्हें राजनीति की शिक्षा क्यों न दी जाय? अवश्यमेव दी जानी चाहिए। छात्रों को राजनीति की शिक्षा देने के विरोध में कोई भी नहीं है। प्राचीन काल में भी गुरुकुलों और आश्रमों में राजनीति की शिक्षा दी जाती थी। नालन्दा और तक्षिला के विश्व विद्यालयों में राजनीति का शिक्षा का पूर्ण प्रबन्ध था। यदि ऐसा न होता तो चाणक्य जैसे राजनीतिज्ञ का आविर्भाव कैसे होता?

छात्रों को राजनीति की शिक्षा दी जानी चाहिए, पर केवल सिद्धान्त-रूप में। आज कल इसी उद्देश्य से कालेजों में छात्रों को राजनीति-विज्ञान (Political science) पढ़ाया भी जाता है। आज के युग में छात्रों के लिए भी, अन्य व्यक्तियों की तरह, राजनीति-चक्र का ज्ञान आवश्यक है, किन्तु केवल बौद्धिक स्तर पर ही, क्रियात्मक राजनीति से उन्हें दूर रखना ही श्रेयस्कर है। विद्यार्थियों को चाहिए कि वे सामयिक पत्र पत्रिकाओं का अध्ययन कर विश्व की वर्तमान गति- विधियों से परिचित रहें। प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों का अध्ययन कर वे प्राचीन समय की राजनीतियों को समझें। विभिन्न नेताओं, महापुरुषों और घटनाओं के सम्बन्ध में सत्यान्वेषण करें। इस प्रकार छात्रों को राजनीति का बौद्धिक ज्ञान प्राप्त करते रहना चाहिए, किन्तु उन्हें न तो दल-गत राजनीति में फँसना चाहिए और न विभिन्न आन्दोलनों में क्रियात्मक भाग लेना चाहिए। छात्र ही पूर्ण वयस्क बन कर कुछ वर्षो बाद देश का नेतृत्व करेंगे, वे ही शासन की बागडोर संभालेंगे। यदि वे राजनीति की शिक्षा से वंचित रहेंगे, तो वे किस प्रकार देश विदेश की [illegible] में भाग लेंगे? इसलिए छात्रों को

राजनीति का आवश्यक व्यावहारिक ज्ञान तो होना ही चाहिए।

हाँ, यदि देश पर कोई संकट आजाय, या विपत्ति के बादल मँडराते नजर आये तो छात्रों को क्रियात्मक राजनीति में भी भाग लेना चाहिए, क्यों कि राष्ट्र को संकट से बचाना प्रत्येक देश-वासी का कर्तव्य है। ऐसी स्थिति में छात्रों को भी राष्ट्र का संकट टालने में अपने दायित्व को निभाना ही पड़ेगा। यह कैसे हो सकता है कि शत्रु देश पर आक्रमण कर रहा है और छात्र वर्ग चुप-चाप बैठा रहे! जब तक कोई महान् आपत्ति न आये और उस आपत्ति को दूर करने में देश के प्रत्येक नागरिक के सहयोग की आवश्यकता न हो, तब तक छात्रों को राजनीति से दूर रहकर अपनी शिक्षा समाप्त करनी चाहिए—इसी मे उनका कल्याण है।

(२५) कला और जीवन

१—भूमिका
२—कला शब्द का अभिप्राय और विभिन्न अर्थ
३—कला के भेद
४—कला के सम्बन्ध में अनेक सिद्धान्त
५—कला कला के लिए
६—कला और जीवन
७—भारतीय आदर्श
८—उपसंहार

किसी ने कहा है—

'साहित्य-संगीत-कला-विहीनः
साक्षात्पशुः पुच्छ-विषाण हीनः'

कला-विहीन मनुष्य को पशु की संज्ञा दी गई है, अन्तर केवल इतना ही है कि उसके सींग और पूंछ नही होते। इससे स्पष्ट है कि कला का हमारे जीवन में कितना अधिक महत्व है। कला हमारे जीवन में इतनी घुली-मिली है कि हम उसे जीवन से पृथक् नहीं कर सकते। इसलिए विद्वानों ने कला को जीवन की प्रतिष्ठा माना है। कला ही एक ऐसा साधन है जो मानव को संकीर्णताओं से ऊपर उठा कर विश्व-प्रेम की ओर प्रेरित करती है।

कला शब्द का साधारण अर्थ है हुनर, गुण वा चतुराई-पूर्ण कार्य, किन्तु कला शब्द का वास्तविक अर्थ है 'मानव मात्र की रचनात्मक शक्ति की सौन्दर्यमय अभिव्यक्ति'। बाबू गुलाबराय के शब्दों में "कला कलाकार के आनन्द की श्रेय और प्रेम तथा यथार्थ और आदर्श को समन्वित करने वाले प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति है"। कला का प्रभाव हृदय और मस्तिष्क दोनों पर पड़ता है। जिस कला में जितना मूर्त आधार कम होता है, वह उतना ही अधिक प्रभावोत्पादक होती है।

भारतीय शास्त्रों के अनुसार कलाएं ६४ हैं जिनमें नाचना, गाना, बजाना, तैरना, चोरी करना आदि सब कुछ आ जाता है। आधुनिक युग में स्व० डाक्टर श्यामसुन्दरदास ने कला को दो भागों में बाँटा है, जो बहुत ही समीचीन जान पड़ता है। उन्होंने कला के दो भेद किये हैं—उपयोगी कला और ललित कला। उपयोगी कला के अन्तर्गत उन्होंने उन कलाओं को स्थान *दिया है जिनमें मानव की रचनात्मक शक्ति की सौन्दर्यमय अभिव्यक्ति तो है ही,* किन्तु जो मानव-मन को आनन्दित करने के साथ-साथ उसके लिए उपयोगी भी हैं; जैसे लुहार, सुनार, बढ़ई, कुम्हार आदि के काम। इनके द्वारा निर्मित वस्तुएं कलात्मक होती हैं, इसलिए वे देखने में सुन्दर और हृदय को आनन्द देने वाली होती हैं, किन्तु साथ ही वे जीवनोपयोगी भी हैं, उनके बिना हमारा काम नहीं चल सकता। उपयोगी कला का क्षेत्र बहुत व्यापक है—रसोई बनाना भी एक कला है, हार गूंथना भी एक कला है, रस्सी बटना भी एक कला है। जो कलाएं केवल आनन्द देती हैं, वे ललित कलाएं हैं जिनमें प्रमुख पांच हैं—वस्तु-कला, मूर्ति-कला, चित्र-कला, संगीत-कला और काव्य-कला। इन ललित कलाओं में सबसे उत्कृष्ट काव्य-कला है, क्योंकि उसमें मूर्त्त आधार नहीं के बराबर है।

कला के सम्बन्ध में अनेक सिद्धान्त हैं। कोई कला में 'सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्' के दर्शन करना चाहता है, किसी का उद्देश्य 'स्वान्तः सुखाय' होता है, कोई कला में उपयोगिता ढूंढता है, कोई कला को आत्मानन्द का साधन स्वीकार करता है, किसी की दृष्टि में कला मनोविनोद के लिए है, कोई कला को मानव की रचनात्मक शक्ति की सौन्दर्य मय अभिव्यक्ति मानता है, कोई

कला को केवल कला के लिए और कोई कला को जीवन के लिए मानता है। इस प्रकार कला के सम्बन्ध में विभिन्न मत और विचार प्रकट किये गये हैं, किन्तु कला के सम्बन्ध में दो सिद्धान्त अधिक प्रचलित हैं जिन्होंने मनीषियों का ध्यान अधिक आकर्षित किया है और वे हैं—'कला कला के लिए' और 'कला जीवन के लिए'।

'कला कला के लिए' वाला सिद्धान्त सर्व प्रथम फ्रांस में चला। वहाँ के कलावादियों का यह कहना है कि कला केवल कला के लिए है, उसमें नैतिकता, सत्य, परोपकार आदि न ढूंढा जाना चाहिए। कला का मापदण्ड कला ही होना चाहिए, न कि सत्य, नीति, समाचार आदि। ये लोग यथार्थवाद को लेकर चलते हैं, नग्न चित्रण करना ही इनका ध्येय है। ये लोग कला पर आदर्शवाद को लादना नहीं चाहते हैं। आस्कर वाइल्ड, ब्रैडले आदि विद्वानं ने इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।

दूसरे लोगों का कहना है कि कला जीवन का अभिन्न अंग है, कला को हम जीवन से किसी भी प्रकार पृथक नहीं कर सकते। कला जीवन के लिए है, कला जीवन का ही प्रतिरूप है और यदि विचार पूर्वक देखा जाय तो कला और जीवन में कोई अन्तर भी नहीं है—'कला जीवन है और जीवन कला है'। इस सिद्धान्त को मानने वाले विद्वान (रस्किन, रिचर्डस आदि) कला में नीति, न्याय, सत्य आदि का दर्शन करना चाहते हैं। इन लोगों का कहना है कि यदि कला जीवन से दूर है, जीवन-निर्माण में सहायता नहीं करती है, तो वह कला नहीं, कला की विडम्बना है। भारतीय मत भी कला में उपयोगितावाद को स्वीकार करता है। हमारे यहाँ की प्राचीन कलायें यथार्थ के साथ-साथ आदर्श को लेकर चली हैं और वे कला में जीवन की उपयोगिता स्वीकार करती हैं। वस्तुत: हमारा प्राचीन जीवन कलात्मक था, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कला का सन्निवेश था—प्राचीन कला-कृतियाँ इस बात का साक्ष्य हैं।

हमारे यहां का कला का आदर्श तो 'सत्यं, शिवं, सुन्दरम्' रहा है। वह कला जो केवल सुन्दर हो, किन्तु यदि उसमें सत्य और शिव तत्त्व न हो तो वह हमको ग्राह्य नहीं थी। कला में सत्य, शिव और सुन्दर का पूर्ण समन्वय होना चाहिये। भारतीय विद्वान कोरे कलावाद के पोषक नहीं रहे, उन्होंने

कला को जीवन की अभ्युन्नति का साधन माना है। हमारे यहाँ के अर्वाचीन विद्वान भी कला में केवल कलात्मकता नहीं, उपयोगिता स्वीकार करते हैं। सूर, तुलसी आदि मध्य युगीन कवि, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गुप्त, हरिऔध आदि आधुनिक कवि सभी कला में 'सत्यं, शिवं सुन्दरम्' का सिद्धान्त मानते हैं। केवल काव्य-कला में ही नहीं, संगीत, चित्र-कला, मूर्ति-कला आदि में भी यही धारणा चल रही है। हमारे यहां के उच्च कलाकार तो कला के आनन्द को ब्रह्मानन्द-सहोदर मानते आ रहे हैं।

वर्तमान युग भारत के लिए संक्रान्ति-युग है। इस युग में भारतीय साहित्य और संस्कृति पर निरन्तर विदेशी प्रभाव पड़ रहा है, नये-नये वादों और सिद्धान्तों का जन्म और प्रचलन होता है और समय के अनुसार विषय और शैली में अन्तर आना स्वाभाविक भी है, किन्तु हमें अपनी संस्कृति और आदर्श पर डटे रहना चाहिए। कला के क्षेत्र में भारत के लिए 'सत्यं, शिवं और सुन्दरम्' वाला सिद्धान्त ही वांछनीय है। इस सिद्धान्त में कलात्मकता और उपयोगिता दोनों का सुन्दर समन्वय है, यह हमें यथार्थ पर दृष्टिपात कराता हुआ आदर्श की ओर ले जाता है।

विस्तृत रूपरेखा (१) जयपुर नगर

१. भूमिका—एक प्रमुख नगर और राजस्थान की वर्तमान राजधानी, अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में महाराजा सवाई जयसिंह द्वारा बसाया गया।

२. नगर-वर्णन—सुन्दरता में भारत का पेरिस, नगर की सुन्दर सजावट, रंग, सड़कें, बाजार आदि।

३. दर्शनीय स्थान—गलता, घाट, आमेर के महल, नाहरगढ़, रामनिवास बाग आदि।

४. नगर-प्रबंध—उत्तम न्यायालय, सेक्रेटेरियट, विभिन्न विभाग, पुलिस, नगर-पालिका आदि। नल, बिजली, अस्पताल, डाकखाना, तार-टेलीफोन-व्यवस्था।

५. सार्वजनिक संस्थाएं—अनेक शिक्षा-संस्थाएं, शिक्षण-संस्थाएं, कला-संस्थान उद्योग-मंदिर, शिल्पकला-केन्द्र, पुस्तकालय, वाचनालय, औषधालय आदि।

६. उच्च शिक्षा का प्रबन्ध—विश्व-विद्यालय, राजस्थान सेकेन्ड्री शिक्षा-बोर्ड, शिक्षा-विभाग, डिग्री और पोस्ट डिग्री कालेज आदि।

प्रसिद्ध वस्तुएं–पीतल के बर्तन, हाथीदांत के खिलौने, पत्थर की मूर्तियाँ, कपड़े की छपाई, रंगाई और बंधाई, लाख की चूड़ियां, गोटा-किनारी आदि। राजस्थान के अन्य नगरों से तुलना।

उपसंहार–जयपुर का भारतीय इतिहास में साहित्यिक (कवि पद्माकर, कवि विहारी-लाल, पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी आदि) और राजनैतिक (मुगल साम्राज्य के कर्णधार, चतुर राजनीतिज्ञ) महत्व।

(२) रक्षा–बन्धन

भूमिका-त्यौहारों की उत्पत्ति, सामाजिक संगठन के साधन, वर्णों के अनुसार चार त्यौहार; ब्राह्मणों का रक्षा-बन्धन, श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को प्रति॰ मनाया जाता है।

. इसका पूर्वरूप-ब्राह्मणों का यज्ञ करना, द्विजातियों का यज्ञोपवीत धारण करना, ब्राह्मणो का आशीर्वादात्मक मंत्र पढ़ कर धर्म-रक्षार्थ यजमानों के हाथ में एक रंगीन सूत्र बांधना।

. मध्यकाल में इसका रूप—राखी बांधने वा भेजने की प्रथा चल पड़ना, बहिनों का भाइयों की कलाई पर राखी बांधना, राजपूतों में इस प्रथा का जोर पकड़ना, अत्याचारियों से बचने के लिए अपने रक्षार्थ दूसरों के पास राखी भेजना जिसका उदाहरण किरण कुमारी का हुमायूं के पास राखी भेजना तथा हुमायूं का उसकी सहायता करना।

. इसका वर्तमान रूप—पूर्णिमा के दिन गृह-द्वार पर सौंण चिपकाना या माँडना, नाना प्रकार के स्वादिष्ट, व्यंजन बनवाना, सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करके महिलाओं का राखी बांधने जाने के लिए इधर-उधर भ्रमण करना, भाइयों एवं अन्य बड़ों का राखी बंधवाकर दक्षिणा वा भेंट देना आदि।

. उपसंहार–प्राचीन आर्य गौरव तथा संस्कृति का स्मरण, सुधार की आवश्यकता।

(३) समाचार-पत्र

. भूमिका समाचार पत्र का अर्थ, इसकी आवश्यकता, मुद्रण यंत्र की सहायता से कार्यालयों में छपना और वितरण होना।

२. वर्तमान युग समाचार पत्रों का युग है। इसके कारण-सामाजिक, राजनैतिक, व्यावसायिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक आदि ।
३. समाचार पत्र का उद्देश्य—संवाद देना, सुधार, प्रचार आदि ।
४. समाचार पत्र के प्रकार—दैनिक, साप्ताहिक, मासिक आदि, विषय की दृष्टि से साहित्यिक, सामाजिक, राजनैतिक, व्यावसायिक आदि ।
५. इससे लाभ—ज्ञान वृद्धि, राष्ट्र-प्रेम एवं जातीय भावों की जागृति, देश विदेश की घटनाओं का तत्काल ज्ञान, विचार-विनिमय, साहित्यिक और व्यापारिक उन्नति, मनोरंजन, प्रचार आदि ।
६. इससे हानियां—कभी-कभी झूठी खबरें और विज्ञापन, सामाजिक अशान्ति, साम्प्रदायिक कलह, कठिन और गंभीर अध्ययन में अरुचि उत्पन्न करना ।
७. उपसंहार—इसका भविष्य उज्ज्वल, नियंत्रण की आवश्यकता ।

(४) रेडियो आकाशवाणी

१. भूमिका—आधुनिक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आविष्कार ।
२. वर्णन—छोटी सी मंजूषा किन्तु महान् आश्चर्य-जनक; बनावट जटिल, किन्तु सरलता से कार्य में ली जा सकती है। रुचि के अनुसार आवाज को धीमी या तेज, मधुर या कर्कश की जा सकती है।
३. सन्देश प्रसारित करने का अपूर्व साधन, मनोरंजन का श्रेष्ठ साधन, महापुरुषों के व्याख्यान, विज्ञापन, व्यापार-समाचार, खेलों के परिणाम, विभिन्न कार्य-क्रम आदि-आदि।
४. विभिन्न कार्य-क्रम सर्व साधारण के लिए-संगीत, वार्तालाप, एकांकी, देहाती प्रोग्राम, कवि-सम्मेलन, गोष्ठी आदि ।
५. इससे लाभ—तत्काल देश विदेश की खबरें प्राप्त होना, आमोद-प्रमोद का उत्कृष्ट साधन, शिक्षा, कला, व्यापार आदि के प्रचार एवं प्रसार का सरल साधन ।
६. सुधार के सुझाव—गाने सुरुचिपूर्ण और स्वस्थ हों, विज्ञापन-बाजी कम हो, नैतिक-स्तर को ऊंचा उठाने वाले मनोरंजक कार्य-क्रम हों ।
७. उपसंहार ।

(५) आदर्श विद्यालय

१. भूमिका—विद्यालय का नाम और स्थान, तथा चारों ओर का वातावरण।
२. विद्यालय का चित्र—सुन्दर और स्वच्छ भवन, खेल के मैदान आदि।
३. पुस्तकालय, वाचनालय, प्रयोगशाला आदि की सुन्दर व्यवस्था।
४. विद्यालय का निजी आदर्श—छात्रों का सर्वतोमुखी विकास एवं चरित्र-निर्माण।
५. अध्यापकों का व्यवहार, सब अध्यापक विद्वान् और परिश्रमी।
६. छात्रों में परस्पर प्रेम, बिना किसी अंकुश के अनुशासन में रहना।
७. उपसंहार—आदर्श विद्यालय से देश की उन्नति में योग।

(६) विज्ञान के चमत्कार

१. भूमिका—वैज्ञानिक युग, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान का बोलबाला।
२. यातायात सम्बन्धी चमत्कार—रेल, मोटर, जलयान, वायुयान, राकेट आदि।
३. संवाद-प्रेषण सम्बन्धी चमत्कार—तार, टेलीफोन, आकाशवाणी, दूर-दर्शक यंत्र, टेलीविजन, रेडियो सैट।
४. मनोरंजन के साधनों में चमत्कार—ग्रामोफोन, सिनेमा, रेडियो आदि।
५. अन्य उपयोगी चमत्कार—मुद्र-यंत्रण, टेलीप्रिंटर, केमरा, एक्सरे, फोटोग्राफी विद्युत् के पंखे, प्रकाश, हीटर आदि।
६. आकाश की ऊंची उड़ान, अन्य नक्षत्रों में मनुष्यों को बसाने का प्रयत्न।
७. उपसंहार—विज्ञान का महत्व।

(७) हमारी खाद्य-समस्या

१. भूमिका—समस्या का अर्थ और वर्तमान रूप।
२. अंग्रेजी शासनकाल से ही अन्नाभाव चला आ रहा है।
३. भारत के स्वतन्त्र होने पर इस समस्या को सुलझाने का प्रयत्न।
४. समस्या उत्पन्न होने के प्रधान कारण—जन-संख्या-वृद्धि, भारत-विभाजन के कारण कुछ उपजाऊ प्रान्तों का पाकिस्तान में चले जाना, शरणार्थियों का बहु संख्या में आगमन, कृषि के पुराने तरीके, समय-समय पर अनावृष्टि के कारण अकाल पड़ना।

. सरकारी प्रयत्न—पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि को विशेष महत्व, अन्नोत्पादन बढ़ाना, ग्राम-सुधार-योजना, सिंचाई की व्यवस्था, कृषकों को प्रत्येक प्रकार की सहायता, विदेशों से अन्न मंगवाना।
६. वर्तमान में स्थिति—बहुत कुछ समस्या हल हो गई हैं, अब सरकारी कृषि को प्रोत्साहन दिया जा रहा है, कृषकों एवं वनियों पर, जो अन्न को गोदामों में से बाहर नहीं निकालते, सरकार नियंत्रण करने का प्रयत्न कर रही है।
७. उपसंहार—निकट भविष्य में खाद्य-सामग्री की कमी नहीं रहेगी, भारत आत्म-निर्भर हो जायगा।

(८) आज का युग एकांकी और कहानी का है

१, भूमिका—अध्ययन, मनोरंजन के रूप में एक उत्तम साधन।
२. आज का जीवन अत्यन्त व्यस्त, लोगों के पास अधिक अवकाश का अभाव, थोड़े से समय में ही मनोरंजन करना पसन्द करते हैं।
३. लम्बे-लम्बे उपन्यास पढ़ने की फुरसत नहीं, न बड़े-बड़े नाटक देखने को अवकाश।
४. कथा-कहानियाँ, उपन्यास, नाटक एकांकी मानसिक भोजन, शिक्षितों के लिए आवश्यक, किन्तु समयाभाव से एकांकी और कहानी की ओर झुकाव।
५. आज का युग एकांकी और कहानी की माँग करता है, इनका सृजन वृद्धि पा रहा है।
६. एकांकी और कहानी के अध्ययन से विभिन्न लाभ।
७. उपसंहार—कहानी और एकांकी कला का उत्तरोत्तर विकास और भविष्य उज्जवल।

(९) सह शिक्षा

१. भूमिका—सह-शिक्षा का अर्थ, सह-शिक्षा आधुनिक सभ्यता की देन।
२. सह-शिक्षा के प्रति विद्वानों के दृष्टिकोण—पक्ष और विपक्ष दोनों में।
३. सह-शिक्षा का बुरा प्रभाव—छात्र-छात्राओं में फैशन-वृद्धि, भावुकता और कल्पनाशीलता में विकास, परस्पर सदा आकर्षित रहने के कारण अध्ययन में वाधा, प्रेमोन्माद और वासना के शिकार, चरित्र का पतन।
४. सह-शिक्षा का अच्छा प्रभाव परस्पर प्रतिस्पर्द्धा से एक दूसरे से आगे

बढ़ने का प्रयास। निकट रहने से एक दूसरे के प्रति प्रेम और विचित्र जिज्ञासा की शान्ति, भावनात्मक स्तर ऊँचा होने पर वासनात्मकता का परिहार, व्यक्तित्व का पूर्ण विकास, जीवन-साथी चुनने का सुन्दर अवसर, दृष्टिकोण में विशालता।

५. क्या भारतीय वातावरण सह-शिक्षा के अनुकूल है ? दोनों की शारीरिक रचना और प्रकृति में भेद, कार्यक्षेत्र भी प्रायः भिन्न-भिन्न। सह-शिक्षा से छात्रों में स्त्रैण कोमलता एवं छात्राओं में उद्दण्डता तथा कठोरता का समावेश।

६. सह-शिक्षा यदि दी जाय तो किस स्टेज तक ? अधिक से अधिक प्राथमिक कक्षाओं तक, पुन: बी० ए०, एम० ए० कक्षाओं में—बीच के समय में पृथक-पृथक् शिक्षा दी जाय।

७. सह-शिक्षा से सरकार को लाभ—भवन, अध्यापक, प्रबन्ध, व्यय आ.- सब प्रकार की बचत।

८. सह-शिक्षा के सम्बन्ध मे मध्यवर्ती मार्ग का अवलम्बन किया जाय।

९. उपसंहार।

(१०) आदर्श शासन

१. भूमिका—प्रारम्भ मे शासन नाम की कोई वस्तु नही थी। मानव का जीवन स्वच्छन्द।

२. प्रारम्भ मे मानव आखेटक, चरवाहा, हलवाहा रहा। कृषि सम्बन्धी ज्ञान और ग्रामों की स्थापना, व्यक्ति-विशेष को ग्राम का प्रधान नियुक्त करना।

३. शनैः-शनैः भूस्वामित्व और शासन-व्यवस्था का प्रारम्भ होना।

४, संसार में समय-समय पर अनेक क्रांतियाँ और परिवर्तन, जिससे नई-नई व्यवस्थाओं की उत्पत्ति और विकास।

५. विभिन्न प्रकार के शासन—निरंकुश शासन, सामन्तशाही शासन, ताना-शाही शासन, गणतन्त्रात्मक शासन, प्रजातन्त्र शासन, समाजवादी शासन।

६. समाजवादी शासन सर्वोत्कृष्ट—इसमे सम्पत्ति और साधनों का समान विभाजन, प्रत्येक व्यक्ति को शक्ति के अनुरूप कार्य, वर्ग-भेद की समाप्ति।

(११) देशाटन से लाभ

१. भूमिका—परिभाषा और आवश्यकता।
२. देशाटन का जीवन मे महत्व।
३. देशाटन के प्राचीन एवं अर्वाचीन साधन।
४. देशाटन से लाभ—ज्ञान वृद्धि, पारस्परिक प्रेम का उदय, विचार-विनिमय, विभिन्न वस्तुओं और स्थानों के प्रत्यक्ष दर्शन का लाभ, उनके विषय मे सच्ची जानकारी। दृष्टिकोण संकुचित न रह कर विशाल बन जाता है। राष्ट्र-प्रेम का प्रसार।
५. उपसंहार—देशाटन से व्यक्ति विशेष की और राष्ट्र की उन्नति।

(१२) जीवन में श्रम का महत्व

भूमिका—जीवन मे सब कार्य श्रम से ही सिद्ध होते है, अतः श्रम की जीवन में आवश्यकता।
२. श्रम कई प्रकार का—शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक।
३, बचपन से ही श्रम करने की टेव डालना चाहिए, आलस्य से दूर रहना चाहिए।
४ जीवन में प्रत्येक प्रकार की सफलता का एकमात्र आधार श्रम ही है।
५. कुछ परिश्रमी महापुरुषों के उदाहरण।
६. सब कार्य श्रम-साध्य है, ऐसा कोई कार्य नही जो बिना श्रम सम्पन्न हो जाय।
७. उपसंहार—श्रम जीवन का सार और सफलता की कुंजी।

(१३) समय का सदुपयोग

१. भूमिका—मानव जीवन सीमित, समय अनन्त। दोनों का सम्बन्ध।
२. समय का उपयोग, गया क्षण नहीं लौटता, समय खोकर पछताना मूर्खता।
३. समय का बुद्धिमानी के साथ विभाजन और तदनुसार कार्य करना।
४. समय का दुरुपयोग और तज्जिनत हानियां।
५. जीवन की सम्पूर्ण सफलता समय के सदुपयोग पर निर्भर।

६. कुछ महापुरुषों के दृष्टान्त जिन्होंने जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ न खोया।
७. उपसंहार—समय का सदुपयोग ही जीवन में सफलता प्रदान करता है।

(१४) महात्मा गांधी

१. भूमिका—गांधी जी के अवतरित होने से पूर्व भारत की राजनीतिक और सामाजिक दशा।
२. गांधीजी का जन्म पोरबन्दर में सन् १८६९ ई० में, बाल्य-काल और प्रारम्भिक शिक्षा।
३. कानून की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंगलैण्ड जाना, वहाँ माता की आज्ञा के अनुसार मांस-मन्दिरा के हाथ न लगाना, स्वदेश लौटना।
४. अपने व्यवसाय में सफलता-असफलता पाना, झूठे मुकदमें न लेना, अन्याय का विरोध करना।
५. गांधीजी की सार्वजनिक सेवाएं—अफ्रीका में और भारत में।
६. राजनैतिक क्षेत्र में पदार्पण और कांग्रेस की नीति में परिवर्तन, देश की बागडोर हाथ में लेना, विभिन्न प्रकार के आन्दोलन चलाकर जनता को कष्ट-सहिष्णु बनाना, राष्ट्र-प्रेम की भावनाएं जागृत करना।
७. स्वतन्त्रता-प्राप्ति, भारत-विभाजन का अन्त तक विरोध, साम्प्रदायिक दंगों में हुए और हो रहे भीषण हत्या-कांडों को रोकने के लिये अथक प्रयास, नाथूराम गोडसे की गोली के शिकार—मृत्यु ३० जनवरी सन् १९४८।
८. गांधीजी का चरित्र—दृढ़ आत्म-विश्वासी, सत्य और अहिंसा के पुजारी, समाज-सुधारक, अछूतोद्धारक, महान् त्यागी और कष्ट-सहिष्णु।
९. उपसंहार—गाँधीजी संसार के महान् विचारक, विश्व की महान् विभूति, भारत के राष्ट्रपिता और सर्वोदय के मंत्रदाता।

(१५) बादल की आत्म-कहानी

१. भूमिका—एक दिन संध्या के समय छत पर बैठे हुए मेरा उपन्यास

पढ़ना, अचानक कुछ बूंदें गिरना, मेरा ऊपर देखना, एक बादल का कुछ नीचे झुक कर लम्बी सांस लेना और आत्म-कथा कहना ।

२. आत्म कहानी—मीलों दूर जलधि से जन्म, बचपन से ही भ्रमण प्रेम, सदा ही आकाश में टिके रहना, वायु हमारा रथ, प्रथमावस्था में हम बहुत हल्के और सूक्ष्म वाष्प-रूप में, शनैः शनैः भारी होना—आकाश में अनेक रूप धारण करके अनेक क्रीड़ाएं करना, शोर मचाना और हंसना । जवानी के जोश में भाइयों के मना करने पर भी विश्व की सैर करने के लिए एकाकी निकल पड़ना, देश-विदेश की सैर करते-करते पन्द्रह दिन बीत जाना, घर की याद आना, किन्तु मार्ग में ही दुःखद समाचार सुन कर कि मेरा सारा कुटुम्ब ही हिमालय की उतंग श्रृंग से टकरा कर सदा के लिए पृथ्वी पर सो गया—मेरे हृदय को चोट लगना, उद्विग्न होकर मारा-मारा, इधर-उधर भटकना और उन्हीं की याद में चार आंसू बहाना ।

३. उपसंहार—मेरा ध्यान-पूर्वक उसकी आत्म-कथा सुनकर आश्चर्य में पड़ना और सोचना कि अपने इष्ट-बन्धुओं का वियोग किसको नहीं सताता ।

(१६) आकस्मिक दुर्घटना

१. भूमिका—स्वाध्याय में मग्न ।
२. अकस्मात् शोर-गुल सुनकर बाहर दौड़ना ।
३. पड़ोस में भयंकर अग्नि-प्रकोप, चारों ओर लपटें, हाहाकार, सैकड़ों व्यक्तियों की भीड़ ।
४. दौड़ कर घटनास्थल पर पहुँचना और सहायता देना, आग बुझाने के नये-पुराने साधनों का उपयोग ।
५. पुलिस और जनता की सहायता प्राप्त होना, बड़ी कठिनाई से आग पर काबू पाना ।
६. उपसंहार—आग लगने के सम्बन्ध में विभिन्न कारणों की कल्पना, हानि का अनुमान लगाना ।

(१७) हमारी ग्राम-समस्याएं एवं उनका हल

१. भूमिका—भारत कृषि-प्रधान देश, ग्रामों की संख्या अधिक, ग्राम। का महत्व।

२. ग्राम भारत की आत्मा, कृषि उत्पादन की दृष्टि से, ग्रामों के उत्थान से ही देश का नव-निर्माण संभव।

३. ग्रामों की वर्तमान दशा—अशिक्षा, अज्ञान, रूढ़िवादिता, बीमारियां मुकद्दमेबाजी, सामाजिक कुप्रथाएं, बेरोजगारी, सहकारिता का अभाव, आर्थिक संकट—ये ही मुख्य ग्राम-समस्याएं हैं।

४. इन समस्याओं के हल के उपाय—शिक्षा-प्रसार, सार्वजनिक संस्थाओं का निर्माण, पञ्चायती व्यवस्था, समाज-सुधारक संस्थाओं की स्थापना, सहकारी समितियों की स्थापना, ग्रामोद्योगों क विकास।

५. सरकारी प्रयत्न—सामुदायिक विकास योजनाओं द्वारा ग्रामोत्थान आदर्श ग्राम, ग्रामीणों के दृष्टिकोण में महान् परिवर्तन, स्वावलम्ब तथा सहयोग की भावना में वृद्धि।

६. उपसंहार—उज्ज्वल भविष्य, श्रमदान द्वारा विकास-योजनाओं की प्रगति, लोकतन्त्र में प्रत्येक ग्रामीण का राष्ट्र-निर्माण में पूर्ण सहयोग हो।

(१८) सामुदायिक विकास योजना

१. भूमिका—स्वतंत्र भारत में ग्रामों के पुनर्निर्माण की अत्यन्त आवश्यकता, सामुदायिक विकास-योजना ही इसका एक मात्र हल, यह योजना जनता की, जनता द्वारा बनाई गई एवं जनता के लिए है।

२. प्राचीन भारत में पंचायतों द्वारा ग्रामोत्थान—अंग्रेजी शासन पंचायतों का बहिष्कार, कांग्रेस द्वारा पुनः ग्रामोत्थान-का का आरम्भ, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामों का सर्वांगीण विका सरकार का ध्येय।

३. योजना का मूल उद्देश्य—ग्रामीणों में सहयोग और स्वावलंबन व भावना उत्पन्न कर उन्हें अपनी उन्नति आप करना सिखाना है

ग्रामीण पर मुखापेक्षी होने एवं कोरे भाग्यवादी होने के स्थान में अपने पैरों पर आप खड़े होने वाले एवं कर्मशील बनें। ग्रामीणों के दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन लाना।

४. योजना का कार्यक्रम—कृषि की उन्नति, कृषि के ढंग और यंत्रों में सुधार और परिवर्तन। पशु नस्ल-सुधार, सार्वजनिक सस्थाओं (स्कूल, औषधालय, पुस्तकालय आदि) की स्थापना, सहकारी समितियों का निर्माण, ग्रामोद्योगों की स्थापना, प्रशिक्षण-केन्द्र खोल कर ग्रामीणों को विभिन्न उद्योगों का प्रशिक्षण देना, ग्रामीणों का जीवन-स्तर ऊंचा उठाना। इन सब कार्यों में जनता का पूर्ण सहयोग हो। विकास क्रम की पूर्णता ग्रामीणों पर ही निर्भर।

५. उपसंहार—सरकारी प्रयत्न भी जारी हैं, ग्रामीण भी पूर्ण सहयोग दे रहे हैं, देश के विभिन्न प्रान्तों में ग्रामीण क्षेत्र को विकास खंडों में बांट कर योजना तेजी से चलाई जा रही है और बहुत-कुछ सफलता प्राप्त हुई है। देश के नेताओं का हार्दिक सहयोग है, भविष्य में योजना की सफलता की पूर्ण आशा और राष्ट्र की उन्नति।

(१६) राष्ट्रीय बचत योजना

१. भूमिका—राष्ट्रीय बचत-योजना का अर्थ, पंचवर्षीय योजनाओं के लिए धन की आवश्यकता, अरबों रुपयों का व्यय, भारत जैसे निर्धन देश में पूंजी की कमी। भारत प्रजातांत्रिक देश है, अतः स्वेच्छा-पूर्वक देश के विकास के लिए प्रत्येक देशवासी को कुछ सहयोग देना आवश्यक है।

२. राष्ट्रीय बचत योजना का इतिहास—द्वितीय विश्व-युद्ध के समय में अंग्रेजों ने इस योजना द्वारा धन-संग्रह किया। उचित व अनुचित तरीकों से, भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार ने इस योजना का महत्व समझकर इसको पुनर्जीवित किया।

३. बचत के साधन—केन्द्रीय सरकारों की बचत, राज्य सरकारों की बचत, रेलवे एवं अन्य व्यापारिक संस्थानों से लाभ, विदेशी सहायता, पौंड

पावना से प्राप्त धन-राशि—इन सब साधनों से आवश्यक धन की पूर्ति संभव नहीं। अतः अल्प-बचत योजना द्वारा देश-वासियों से ऋण लेना—इससे दो लाभ—योजनाओं के लिए धन-संग्रह और देश वासियों का योजनाओं में सहयोग।

४. योजना का महत्व—अच्छा धन-संग्रह, कुल व्यय का एक तिहाई भाग अल्प बचत द्वारा प्राप्त, देश-वासियों में अल्प-बचत की आदत, अपव्यय से बचना।

५. कार्य-प्रणाली—राष्ट्रीय बचत संगठन की स्थापना, अधिकृत एजेन्टों की नियुक्ति, योजना सर्टिफिकेट, एवं अन्युइटी सर्टिफिकेट ग्रामीण एजेन्सी योजना, ग्राम-पंचायतों एवं प्रभावशाली व्यक्तियों के सहयोग से अच्छी सफलता मिल रही है। समस्त देश में अल्प-बचत योजना प्रसार।

६. उपसंहार—धीरे-धीरे अल्प-बचत योजनाओं का विस्तार, देशवासियों मितव्ययता की भावना का विकाश एवं देश के नव-निर्माण में उनका सहयोग।

(२०) ग्राम-पञ्चायत

१. भूमिका—भारत ग्रामों का देश, प्राचीन काल में ग्रामों की उन्नति पंचायतों द्वारा, पंचायतें ग्रामों की रीढ़ की हड्डी, स्वतन्त्र भारत में ग्रामोन्नति के लिए पंचायतों की सुदृढ़ स्थापना की आवश्यकता।

२. अंग्रेजी शासन-काल में ग्राम पंचायतों का बहिष्कार, कांग्रेस एवं गांधी जी के सद्प्रयत्नों द्वारा पुनः ग्राम-पंचायतो की स्थापना। भारत के स्वतन्त्र होने पर ग्रामों के पुनर्निर्माण के लिए ग्राम-पंचायतों की स्थापना पर बल, ग्राम-पंचायतों की स्थापना।

३. ग्राम-पंचायत का आधुनिक इतिहास—एक हजार वा अधिक आबादी पर ग्राम-पंचायत की स्थापना, २१ वर्ष की आयु वाला सदस्य, सभी जातियों एवं वर्गो के लोगों का प्रतिनिधित्व, उप-सभापती का सदस्यों द्वारा निर्वाचन।

. ग्राम-पंचायत के अधिकार—आय-व्यय का लेखा रखना, कर लगाना,

सार्वजनिक कार्यों की पूर्ण देख भाल, कृषि की उन्नति, सफाई, स्वास्थ्य, अनैतिकता को रोकना आदि।

आय के साधन—विभिन्न कर, प्रादेशिक सरकार द्वारा सहायता, जिला बोर्ड से सहायता, ऋण वा दान द्वारा सहायता प्राप्त करना, जुर्माना करना, जमीन बेचना आदि।

लाभ—जनता को व्यावहारिक राजनीति की शिक्षा मिलना, जनतन्त्र-प्रणाली को सफल बनाना, सहकारिता, संगठन और समाज-सेवा की भावना का विकास, देश-सेवा के लिए व्यक्तियों में उत्तम गुणों की सृष्टि करना, अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान पैदा होना, ग्रामीण समस्याओं का सरलता से सुलझाना, धन और शक्ति का दुरुपयोग न होना मुकदमे बाजी का कम होना, ग्रामों का सर्वाङ्गीण विकास की ओर प्रगति करना।

उपसंहार—भविष्य उज्ज्वल, ग्रामोत्थान में पूर्ण सहायक, अयोग्य व्यक्तियों का चुनाव न करना, स्वार्थपरता से दूर रह कर सार्वजनिक हित के कार्य करना।

(२१) नाटक और एकांकी तुलना

भूमिका— दोनों ही दृश्य-काव्य, अतः मूल टैकनीक में कोई अन्तर नहीं। दोनों के लिए ही मंचीय अनुकूलता आवश्यक, एकांकी किसी नाटक का संक्षिप्त रूप नहीं, अपितु अपने में पूर्ण एक स्वतंत्र रचना। तात्विक दृष्टि से समान होते हुए भी दोनों में अन्तर।

नाटक बृहत् आकार वाला जिसमें ३ से ५ अंक और एक-एक अंक में कितने ही दृश्य; एकांकी का अर्थ ही एक अंक वाला, दृश्य भी यथा-संभव कम। एक-दृश्य एकांकी सर्वोत्तम माना जाता है।

नाटक में मानव जीवन की विशालता का प्रदर्शन और विवेचन, एकांकी में केवल जीवन का एक पहलू, जीवन की एक घटना वा समस्या। एकांकी जीवन की एक झाँकी मात्र।

नाटक की कथा मंथरगति से चलती है, उसमें प्रासंगिक कथा-वस्तु भी गुथी रहती है, नाटक कार का ध्यान सीधा केन्द्र-विन्दु पर नहीं पड़ता, किन्तु

एकांकी में मतलब भर की बात होती है, कथा में तीव्रता होती है, पात्र-संख्या सीमित होती है।
वर्तमान युग में दोनों का विकास, किन्तु नाटक की अपेक्षा एकांकी अधिक लोक-प्रिय। आधुनिक लोक-जीवन अत्यधिक व्यस्त, अत: संक्षिप्तता के गुण के कारण एकांकियों का प्रचलन अधिक।
उपसंहार—दोनों के मूल-आधार और उद्देश्य में अन्तर न होते हुए भी दोनों की रचना-शैली में अन्तर, एकांकी की विविधता, रेडियो, नाटक आदि। आज का युग नाटकों का नहीं, एकांकी का है।

(२२) दाशमिक सिक्का-प्रणाली

भूमिका—विचार-विनिमय और वस्तु-विनिमय के लिए माध्यम की आवश्यकता, वस्तु-विनिमय के दो रूप—वस्तु के आदान-प्रदान द्वारा और मुद्रा के द्वारा।
भारत में मुद्रा का इतिहास वैदिक काल के निष्क और पण से प्रारंभ, विभिन्न राज्य-कालों एवं युगों में विभिन्न मुद्राएं सोने, चांदी एवं तांबे की, विभिन्न प्रान्तों में विभिन्न मुद्राएं प्रचलित, रूप, रंग, आकार, शुद्धता, तोल आदि में पृथक्-पृथक्, विनिमय में कठिनाइयाँ, अंग्रेजी शासन काल में मुद्रा-प्रणाली में सुधार, अंग्रेजी सरकार के सामने ९९४ प्रकार के सिक्के भारत में प्रचलित थे, उन्होंने सब को अमान्य कर सर्वत्र एक मुद्रा का प्रसार किया जो तोल, आकृति, शुद्धता में समान। रुपया, आना और पाई तथा पैसा अब तक प्रचलित थे, कागज के नोट भी प्रचलित, इस सुधार से व्यापार-विनिमय में सुविधाएं, सब को लाभ।
सन् १९४६ ई० में दाशमिक प्रणाली के महत्त्व पर विचार। १९५५ ई० में तत्सम्बन्धी विधेयक पारित, जिससे दशमलव-सिक्का-प्रणाली को प्रचलित करने का अधिकार मिला, अप्रैल सन् १९५७ में कानूनी तौर पर प्रचलित इस प्रणाली में केवल दो सिक्के—रुपया और पैसा (जो नया पैसा उस समय तक कहलायेगा जब तक कि पुराने पैसों का चलन बन्द न होगा), पैसा रुपये का अब चौसठवां भाग नहीं, सौवां भाग है। इसमें आना जैसा कोई सिक्का नहीं। दशमलव प्रणाली में सिक्के—एक नया पैसा, दो-पैसा,

पांच-पैसा, दस-पैसा, पच्चीस-पैसा (चवन्नी आजकल की और नये रुपये का चौथा भाग), पचास पैसा (अठन्नी, रुपये का आधा भाग) कुछ समय तक पुराने सिक्कों के साथ-साथ नये सिक्के भी चलेंगे, कुछ समय पश्चात् पुराने सिक्कों के बन्द होने पर केवल नये सिक्के ही प्रचलित रहेंगे।

४. लाभ-विश्व की सरलतम प्रणाली, हिसाब-किताब में और लेन-देन में आसानी, गणना और आँकड़े जोड़ने में सरलता, संसार के मुद्रा-प्रचलित १४० देशों में से १०५ देशों में दाशमिक प्रणाली प्रचलित है।

५. हानियाँ-वर्तमान में दोनों प्रकार के सिक्कों के प्रचलन से असुविधा, पुरानी मशीनों का बेकार होना, नई मशीनों की कमी।

६. उपसंहार-सरकार और जनता के सहयोग से प्रणाली सफल होगी। नये सिक्कों का उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। जनता को इस प्रणाली से झुंझलाना एवं घबराना न चाहिए।

(२३) अनिवार्य सैनिक शिक्षा

१. भूमिका—वर्तमान युग विज्ञान का युग—वर्तमान राष्ट्रों के बीच युद्धायुधों एवं सैन्य-शक्ति की प्रतिस्पर्द्धा। आत्म-रक्षा के लिए सैनिक शिक्षा की आवश्यकता।

२. युद्ध मानव की सहजात प्रवृत्ति, शस्त्र-युद्ध के न होने पर शास्त्र-युद्ध और शीत-युद्ध चलते रहते हैं।

३. प्राचीन काल में शास्त्र-विद्या के साथ-साथ शस्त्र-विद्या का प्रचलन। आज के युग में भी इसकी आवश्यकता।

४. सैनिक शिक्षा का महत्त्व—वर्तमान युद्ध-साधनों में परिवर्तन के कारण, आन्तरिक उपद्रवों के शमनार्थ, विश्व-शान्ति की रक्षा के लिए एवं आत्म-रक्षार्थ।

५. विद्यार्थी-जीवन में सैनिक शिक्षा की आवश्यकता। विद्यार्थी-जीवन में ही बालकों में राष्ट्र-प्रेम उत्पन्न किया जा सकता है, उनको नियमित एवं अनुशासित जीवन व्यतीत करना सिखाया जा सकता है।

६. सैनिक शिक्षा से लाभ—छात्रों में अनुशासन-वृद्धि, नियम-पालन, स्वास्थ्य-

सुधार, निर्भीकता, समानता एवं सहयोग की भावना का विकास, स्वतंत्रता-प्रेम।

७. भारत की विदेशी नीति और सैनिक शिक्षा—आत्म-रक्षार्थ, न कि आक्रमणात्मक युद्धों के लिए सैनिक शिक्षा की आवश्यकता। पड़ोसी राष्ट्रों के आक्रमणों से बचने एवं उनका मुकाबला करने के लिए दृढ़ सैन्य-शक्ति आवश्यक।

८. सैनिक शिक्षा की अनिवार्यता पर विचार—सैनिक शिक्षा बलात् न दी जाय, केवल इच्छुक एवं उत्सुक छात्रों को ही इसके लिए चुना जाय।

९. उपसंहार।

(२४) विज्ञापन-कला

१. भूमिका—आज का युग विज्ञापन का युग है, उन्नति और प्रगति का एक मात्र आधार विज्ञापन। समस्त व्यापार-व्यवसाय विज्ञापन पर आश्रित।

२. विज्ञापन एक कला है, इसका समुचित शिक्षण आवश्यक, आजकल विश्वविद्यालयों में वाणिज्य-विभाग के अन्तर्गत विज्ञापन-शिक्षण भी दिया जाता है।

३. विज्ञापन का क्षेत्र—जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञापन, जन-साधारण की विज्ञापन में रुचि, विज्ञापन कला में निपुण व्यक्तियों की सर्वत्र मांग।

४. विज्ञापन की विधियाँ—विज्ञप्तियों द्वारा, समाचार-पत्रों द्वारा, रेडियो द्वारा, प्रदर्शनियों द्वारा, सार्वजनिक स्थानों में पोस्टर आदि लगाकर, लाउडस्पीकर द्वारा, जुलूस निकालकर, सिनेमा द्वारा, प्रचार द्वारा, अन्य उपयुक्त साधनों द्वारा।

५. विज्ञापन में जन-रुचि और कलात्मकता का ध्यान रखा जाता है, विज्ञापन को प्रभावोत्पादक बनाया जाता है। विज्ञापन जितना आकर्षक, उतना ही अधिक लाभ।

६. विज्ञापन व्यापार-व्यवसाय वा क्रय-विक्रय तक ही सीमित नहीं, प्रत्येक कार्य में सफलता प्राप्त करने का प्रमुख साधन। विज्ञापन द्वारा विवाह, मित्रता, मेलजोल, जन्म-मरण सम्बन्धी सूचना, प्रचार आदि।

७. विज्ञापन से लाभ—व्यापार-व्यवसाय में उन्नति, योग्य और उपयुक्त

वस्तुओं और व्यक्तियों की प्राप्ति, सार्वजनिक प्रचार मे सुगमता, विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों की स्थापना में सहायता, जीविका के साधन जुटाने में सहायता, ज्ञान-वृद्धि आदि ।

विज्ञापन से हानियाँ—झूठे विज्ञापन, झूठा प्रचार, अश्लील और गन्दे विज्ञापनों का दूषित प्रभाव, अनावश्यक वस्तुओं का क्रय आदि ।

उपसंहार—विज्ञापन सच्चे होने चाहिए, उनमें सुरुचि और सद्भावना का ध्यान रखा जाना चाहिए ।

(२५) भिखारियों की समस्या

भूमिका—सरकार के सामने अनेक समस्याओं में से एक, भिखारी देश के लिए एक भारी बोझा ।

भिखारियों के विभिन्न स्वरूप, उनके माँगने के विभिन्न ढंग ।

भारत के वर्तमान भिखारी और उनकी संभावित संख्या ।

भिक्षा-वृत्ति के अनेक कारण—लोगों में दान-पुन्य की भावना, दरिद्रता, बेकारी, विकलांग होना, कुछ जातियों का व्यवसाय के रूप में भिक्षा-वृत्ति को अपनाना ।

भिक्षा-वृत्ति से आत्म-पतन, भारत के लिए एक महान् कलंक, इसका दूर किया जाना अत्यावश्यक ।

भिक्षा-वृत्ति को रोकने के उपाय—भिक्षा-वृत्ति एक अपराध माना जाय, धार्मिक अन्ध-विश्वास दूर किया जाय, सम्पत्ति का समान वितरण किया जाय, समर्थ और स्वस्थ भिखारियों को काम में लगाया जाय, असमर्थ, वृद्ध और विकलांग भिखारियों के लिए अनाथाश्रमों की स्थापना की जाय, उद्योग-धन्धों का विस्तार किया जाय आदि ।

भारत सरकार और भिक्षा-वृत्ति—सरकार भिक्षा-वृत्ति को दूर करने में प्रयत्नशील, कुछ राज्यों में भिक्षा-वृति पर रोक, भीख मांगना कानूनी अपराध, सरकार शिक्षा-प्रसार और गृह-उद्योगों का विस्तार कर रही है, सरकार इस कार्य में जनता का हार्दिक सहयोग चाहती है ।

उपसंहार—भिखारियों की समस्या एक जटिल समस्या, इसका हल केवल कानून ही नहीं है, दानी और भिखारी दोनों के दृष्टिकोण में परिवर्तन

लाने से ही समस्या का समुचित हल। भारत भिखमंगी के कलंक को धो डालना चाहता है।

(२६) निःशस्त्रीकरण और भारत

१. भूमिका—आदि काल से मानव की युद्ध-प्रियता, लड़ना मानव की एक सहजात प्रवृत्ति, युद्ध से ही अनेक समस्याओं का हल प्राप्त।

२. वर्तमान युग में शस्त्रास्त्रों की होड़, आज के युग की दो ही विशेषतायें—शस्त्रीकरण और सैन्य-संगठन। विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के बीच भय और अविश्वास।

३. विश्व की तनाव-पूर्ण स्थिति, विश्व का पूंजीवादी और साम्यवादी दो गुटों में बँटना, आधुनिकतम अणु-आयुधों से सुसज्जित, विरोधी-प्रचार : शीत-युद्ध।

४. विश्व-शान्ति के लिए निःशस्त्रीकरण की आवश्यकता, तृतीय विश्व-युद्ध का अर्थ महाविनाश और प्रलय।

५. निःशस्त्रीकरण के सम्बन्ध में अब तक किये गये प्रयत्न, विभिन्न आयोगों की स्थापना, किन्तु दोनों गुटों में गतिरोध, इसलिए असफलता।

६. भारत की विदेश-नीति, तटस्थता और शान्ति-प्रियता, विश्व-शान्ति के कार्यों में भारत का योगदान।

७. निःशस्त्रीकरण और भारत—भारत ने नाटो, सीटो, बगदाद पैक्ट आदि सैनिक-सन्धियों को बुरा बताया है, वह स्वयं न किसी गुट में है और न किसी सैनिक-सन्धि से बँधा हुआ, भारत शीत-युद्ध और प्रचार-युद्ध को रोकने का बराबर प्रयत्न करता रहा है।

८. निःशस्त्रीकरण और पञ्चशील—पञ्चशील एक ऐसा मार्ग है जो दोनों गुटों को मान्य हो सकता है। सह-अस्तित्व के न मानने पर सह-विनाश निश्चित।

९. उपसंहार—विश्व-हित के लिए निःशस्त्रीकरण आवश्यक।

(२७) विज्ञान और मानव-जाति का भविष्य

१. भूमिका—आधुनिक युग में विज्ञान की उन्नति चरम सीमा पर। विज्ञान के अदभुत और चमत्कार-पूर्ण आविष्कार—विभिन्न यंत्र, विद्युत,

तार, टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन, विभिन्न औषधियाँ और टीके, दूरवीक्षण यंत्र, सूक्ष्मदर्शक यंत्र, राकेट आदि।

विज्ञान द्वारा मानव-जाति को सहायता—यातायात और संवाद-प्रेषण के विकसित साधन, रोगों से रक्षा, उत्पादन-वृद्धि, मूल्यों में कमी, शक्ति में वृद्धि आदि।

विज्ञान द्वारा मानव-जाति का कल्याण—दृष्टि-कोण में परिवर्तन, अन्ध-विश्वासों की समाप्ति, बुद्धि-विकास, ज्ञान-वृद्धि, विचारों का आदान-प्रदान, संस्कृति और सभ्यता का विस्तार, सुख-पूर्ण जीवन, स्वर्ग-तुल्य आनन्द।

विज्ञान द्वारा विश्व-विनाश का भय—महा शक्तिशाली और भयंकर शस्त्रास्त्रों का निर्माण प्रक्षेपणार्थ, परमाणु बम, उद्जन बम, नेत्रजन बम, मैगाटन बम; विश्व का दो विरोधी गुटों में विभाजन; अन्तर्राष्ट्रीय प्रति-स्पर्द्धा; पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के कारण तीव्र सामाजिक असन्तोष, चारों ओर अनास्था, अविश्वास और भय का वातावरण; किसी भी समय महा भयंकर विस्फोट की आशंका।

मानव-जाति का भविष्य असमंजस में—एक ओर चाँद-सितारों की सैर का आनन्द और ग्रहों को बसाने की योजना और दूसरी तरफ एक क्षण में विश्व-विनाश का भय।

उपसंहार—विज्ञान के सदुपयोग की आवश्यकता।

(२८) राष्ट्र-निर्माण में युवकों का योगदान

भूमिका—युवक राष्ट्र की सम्पत्ति, देश के सच्चे सिपाही और प्रहरी, राष्ट्र के भावी कर्णधार, राष्ट्र-निर्माण में युवकों का महत्वपूर्ण स्थान।

स्वतन्त्र देश में और प्रधानतः नवोदित लोक-तन्त्र में युवकों का विशेष महत्व।

राष्ट्र-प्रेम का विकास यौवन-काल में ही सम्भव—शिवाजी, राणा प्रताप, नेताजी, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, नेहरू जी आदि के देश-प्रेम, महान् त्याग और बलिदान के उदाहरण।

नवयुवकों का स्वतन्त्रता-संग्राम में एवं राष्ट्रीय आन्दोलनों में दिया गया उत्साह-पूर्ण सक्रिय योग।

५. देश-नेताओं का काम केवल योजनायें बनाना एवं पथ-निर्देशन करना हैं, युवक ही उन योजनाओं को उत्साह और उमङ्ग के साथ क्रियान्वित करते हैं ।
६ वर्तमान युवकों में विचार-स्वातन्त्र्य, प्रगति शीलता, राष्ट्र-प्रेम, अन्तर्राष्ट्रीय भावना और कल्पना-शीलता के दर्शन होते है, किन्तु भारतीय संस्कृति के आधार पर आगे बढ़ना श्रेयस्कर ।
७. युवकों को आलस्य, मादक पदार्थो का सेवन, पश्चिमी सभ्यता का अन्धानुकरण, फैशन-प्रियता, साम्प्रदायिकता, राजनीतिक दलवन्दी, अनुशासन-हीनता आदि दुर्गुणों से दूर रहना चाहिए ।
८. राष्ट्र-निर्माण मे युवकों का कर्त्तव्य—राष्ट्रोत्थान के प्रत्येक कार्य में योग देना, विकास-योजनाओं में सक्रिय भाग लेना, भारत की स्वतन्त्रता और अखण्डता की रक्षा करना, आर्थिक विकास के लिए श्रमदान करना, उच्च शिक्षा प्राप्त कर एवं योग्य बनकर राष्ट्रीय पदों पर आरूढ़ होकर न्याय करना, भ्रष्टाचार रोकना, कुप्रथाओं का अन्त करना, जनता की विचार-धारा को युगानुकूल बनाना ।
९. युवकों के प्रति सरकार का कर्त्तव्य – सरकार युवकों को योग्य बनाने में हर प्रकार से उनकी सहायता करे, उन्हें सुविधायें दे ।
१०. उपसंहार – देश के नव-निर्माण में नवयुवकों का विशेष हाथ होना आवश्यक ।

(२९) पुस्तकालयों का महत्व

१. भूमिका—पुस्तकालय शब्द का अर्थ । वह स्थान जहाँ पुस्तकों का एक बड़ी संख्या में क्रय-विक्रय की दृष्टि से नहीं, उपयोग की दृष्टि से संग्रह किया गया हो ।
२. पुस्तकालयों के प्रकार—निजी पुस्तकालय, स्कूल या कालेज पुस्तकालय, सार्वजनिक पुस्तकालय, सरकारी पुस्तकालय, विश्व-विद्यालय पुस्तकालय, चलते-फिरते पुस्तकालय ।
३. पुस्तकालयों की आवश्यकता – विविध विषयों की विविध पुस्तकों की एक स्थान पर उपलब्धि के लिए, ज्ञान-पिपासा शान्त करने के लिए, लोगों में

पठन-पाठन की रुचि बढ़ाने के लिए, पुस्तकों के सम्बन्ध में लोकमान्य तिलक का कथन—

"मैं नरक में भी पुस्तकों का स्वागत करूंगा। पुस्तकों में वह शक्ति है जहां वे होंगी, वहां आप ही स्वर्ग बन जावेगा।"

पुस्तकालयों के साथ वाचनालय—विभिन्न पत्र-पत्रिकायें।

पुस्तकालयों और वाचनालयों का प्रबन्ध और व्यवस्था।

पुस्तकालयों से अनेक लाभ—सब प्रकार के नवीन-प्राचीन ग्रन्थों की उपलब्धि, शोध और अनुसंधान कार्य में महती सहायता, ज्ञान-वृद्धि, निर्धन एवं अध्ययनशील छात्रों के लिए एक वरदान. नवीन पुस्तकों की रचना में महती सहायता, जन-साधारण में अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न करना, समय का सदुपयोग और मनोरंजन, कला और संस्कृति का विकास, चिन्तन और मनन शक्ति में वृद्धि।

पुस्तक ज्ञान के श्रोत, सच्चे मित्र, ज्ञान की अक्षय निधि, विचार एवं भावनाओं के भण्डार।

उपसंहार—देश और समाज की उन्नति के लिए पुस्तकालयों की महत्ता, प्रसार की आवश्यकता।

(३०) चुनाव-आन्दोलन

भूमिका—लोक-तन्त्र में चुनाव अनिवार्य—संसद्, विधान-सभा, नगर-पालिका आदि के लिए चुनाव-आन्दोलन।

चुनाव प्रजातान्त्रिक भावना का चिह्न, प्रत्येक नागरिक को अपनी भावनाओं के अनुसार प्रतिनिधि चुनने का अधिकार।

निश्चित अवधि (कार्य-काल) के अनन्तर चुनाव-आन्दोलन, आन्दोलन की तैयारी और चहल-पहल। निर्वाचन स्थल का दृश्य।

चुनाव से लाभ—देश के शासन में प्रत्येक नागरिक का अप्रत्यक्ष हाथ, जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व, योग्य व्यक्तियों का चुनाव, जन-सेवा की भावना का उदय और प्रसार।

चुनाव में विभिन्न दलों का भाग लेना, अपने-अपने प्रतिनिधि चुनने का

प्रयत्न करना, कितने ही उम्मीदवार खड़े होना, अपने पक्ष में करना।

६. चुनाव से हानियाँ—जातीयवाद और साम्प्रदायिकता को प्रश्रय, दलवन्दी का प्राबल्य, आन्दोलन में लाखों रुपयों का पानी की तरह बहाना, लोगों से झूठे वादे करना, नारेबाजी, प्रोपेगेन्डा, विभिन्न दल वालों के बीच मनोमालिन्य।

७. चुनाव में विरोधी दल का निर्माण भी आवश्यक, विरोधी दल सत्तारूढ़ दल पर अंकुश रखता है, उसके द्वारा किए गये गलत और अनियमित कार्यों की आलोचना करता है।

८. सुझाव—चुनावों को सफल बनाना चाहिए, जनता में राजनीतिक जागृति उत्पन्न करनी चाहिये, जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व होना चाहिए

९. लोक-तन्त्र की सफलता सही चुनाव पर निर्भर है। स्वार्थी और धूर्त लोगों के चुनाव में विजयी होने से एवं सत्तारूढ़ होने से भ्रष्टाचार फैलने का भय।

१०. उपसंहार—नवीन जन-सेवी उम्मीदवारों के पहुँचने से राष्ट्र का कल्याण।

अध्याय नवां

अनुवाद-कला

एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करना कोई सरल कार्य नहीं है। साहित्य एवं भाषा-सम्बन्धी ज्ञान की अपेक्षा तो है ही, साथ ही अनुवाद-कला में भी दक्ष होना चाहिए। मूल लेखक के स्वतंत्र और मौलिक भावों और विचारो को अन्य भाषा में इसके शब्द-प्रयोग और मुहावरों का ध्यान रखते हुए अनुवाद करना वस्तुतः एक कला है। अनुवाद-कला के लिए योग्यता और अभ्यास दोनों की आवश्यकता है।

अनुवाद प्रायः दो प्रकार से किया जाता है। जो अनुवाद अक्षरशः किया जाता है, जिस में मूल लेखक के प्रत्येक शब्द का अनुवाद करना होता है, वह शब्दानुवाद कहलाता है। भावानुवाद में मूल भाषा के भावों और विचारों को अनुवादक अपनी भाषा की लेखन-शैली में प्रस्तुत कर देता है। शब्दानुवाद में अनुवादक को यह अधिकार नहीं होता कि वह मूल भाव के किसी अंश को छोड़ दे, किन्तु भावानुवाद में मूल लेखक के भावों और विचारों को केवल भाषान्तरित कर देना है, अवतरण के पूरे रूप का अनुवाद वांछनीय नहीं है।

जब तक स्पष्ट तथा भावानुवाद का उल्लेख न हो तब तक अनुवाद से शब्दानुवाद का ही तात्पर्य समझना चाहिए। शब्दानुवाद करते समय केवल शब्दों पर ही ध्यान न दिया जाय, प्रत्युत मूल भाव या विचार ऐसे शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाना चाहिए जिससे वह ज्यों का ज्यों दूसरी भाषा में प्रकट हो जाय। अनुवाद में मूल भाव की रक्षा करते समय भाषा के प्रचलित रूप एवं प्रवाह का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। अनुवाद करते समय भाषा-विशेष का ध्यान रखते हुए यदि वाक्यों को तोड़ना पड़े, वा भाव स्पष्ट करने के लिए अपनी ओर से कुछ जोड़ना पड़े तो कोई आपत्ति नहीं है। अनुवाद इतना सुन्दर होना चाहिए कि वह स्वयं एक स्वतंत्र रचना जान पड़े। अनुवाद में भी अनुवादक की मौलिकता आजानी चाहिए।

हमने प्रस्तुत अध्याय मे आङ्गल भाषा एवं संस्कृत भाषा से अनुवाद करने के लिए कुछ अवतरण दिये है, साथ ही, अनुवाद किस प्रकार और कैसे करना चाहिए, हमनें दोनों ही भाषाओं के कुछ अवतरण आदर्श अनुवाद के रूप मे सामने रखे है जिनके अध्ययन से विद्यार्थी वर्ग लाभ उठाये ।

आदर्श अनुवाद आङ्गल भाषा से

(1)

Patriotism can be expressed not only in battle field. . Many men how signalized their love of country in the field of literature. In our country, Balmiki, Kalidas, Tulsi etc. of the ancient and Ravindra Nath Tagore of the modern age are famous. A rich man also can express patriotism by sacrificing his riches. Lord Buddha, to speak the truth, was a true patriot. When he saw the degenerated condition of the people, he left his princely pleasures, cut himself away from his parents, wife and children, and led a life of Sanyas, to do good to his country and brethren.

अनुवाद—देश-भक्ति केवल युद्ध-क्षेत्र मे ही प्रकट नही की जा सकती है । अनेक व्यक्तियो ने अपने देश-प्रेम को साहित्य के क्षेत्र मे प्रदर्शित किया है । हमारे देश मे प्राचीन युग के वाल्मीकि, कालिदास, तुलसी आदि एवं वर्तमान युग के रवीन्द्रनाथ ठाकुर प्रसिद्ध है । एक धनवान मनुष्य भी अपनी सम्पत्ति का त्याग कर देश-भक्ति प्रकट कर सकता है । सच पूछो तो, भगवान बुद्ध एक सच्चे देश-भक्त थे । जब उन्होने जन-साधारण की पतित दशा देखी, तब उन्होने अपने राजसी आनन्दों का त्याग कर दिया, अपने माता-पिता, पत्नी एवं बच्चो से अपना सम्बन्ध हटा लिया तथा अपने देश और बन्धुओं का भला करने के लिए सन्यास जीवन ग्रहण कर लिया ।

(2)

Indra approached him in the disguise of a Brahmin. Sitting on the bank of the Ganges near the Brahmin, he frequently took up sand from the bank and threw it into water full of waves. Having seen him doing this, Bhargave gave up his vow of silence and asked him through curiosily as to what he was doing. Being

pressed exceedingly, Indra replied. I am building a bridge on the Ganges for people to cross it.' Then Bhargava said, "Oh! what a great folly is this! Can a bridge be ever built by sand which can be carried away?" Indra replied, "knowing this as you do, why are you bent upon acquiring knowledge by vows and fasting without learning and studying?"

अनुवाद—इन्द्र ब्राह्मण-वेश में उसके समीप गया। ब्राह्मण के निकट गंगा-तट पर बैठ कर वह बार-बार तट से मिट्टी लेकर तरंग-परिपूर्ण जल में डालने लगा। उसको यह कार्य करते देख कर भार्गव ने अपनी मौन रहने की प्रतिज्ञा त्याग दी और उसने उससे उत्सुकता वश पूछा कि वह क्या कर रहा है। अत्यधिक विवश किये जाने पर इन्द्र ने उत्तर दिया, "मैं लोगों के आरपार जाने के लिए गंगा पर एक पुल बना रहा हूँ"। तब भार्गव ने कहा, "अहा! यह कैसी मूर्खता है! क्या कभी उस मिट्टी द्वारा जो बहाई लेजाई जा सकती है, पुल बनाया जा सकता है?" इन्द्र ने प्रत्युत्तर में कहा, "यह जानते हुए जैसा कि तुम करते हो, तुम बिना सीखे और अध्ययन किये व्रत-उपवासों से ज्ञान प्राप्त करने पर क्यों तुले हुए हो?

(3)

During the long centuries of the Hindu and Mohammedan rules the security of property was imperfectly maintained. The result was that the accumulation of wealth became an impossibility except among rulers. Unless there is some certainty of enjoying tomorrow what we keep in store today. Providence for the future is useless, and is soon dispensed with. During the last days of the Mohammedan rule insecurity had become so great, that people remained in a temper of despair, and there was hardly any inducement for thrift and industry.

अनुवाद—हिन्दू और मुसलमान शासन की बहुत सी शताब्दियों में सम्पत्ति की रक्षा उचित रूप से नहीं होती थी। इसका परिणाम यह था कि शासकों के अतिरिक्त दूसरे लोगों के लिए धन-संचय असंभव हो गया था, हम जो कुछ अपने भंडार में आज रखते है, यदि कल उसके आनन्द लेने का निश्चय न हो तो

भविष्यत् के लिए प्रबन्ध करना व्यर्थ है और ऐसा प्रबन्ध करना शीघ्र ही त्याग दिया जाता है। मुसलमानी शासन के अन्तिम दिनों में सम्पत्ति की रक्षा इतनी कठिन हो गई थी कि लोग हताश रहते थे और मितव्ययिता तथा उद्योग के लिए कोई उत्साह न था।

(4)

An interesting tale is related about Birbal. Once Akber asked his courtiers, "Which is the best weapon in time of emergency ?" one said,—"A sword,' another, 'a spear' and so on." Birbal said, "your Majesty ! Presence of mind has no rival" The next day, while Birbal was coming to the court, an elephant was let loose by the emperor's order. The eminent man was in imminent danger. A puppy was lying by Birbal caught the animal by the leg and threw it at the advancing black giant. The elephant was confused, turned tail and ran away. The great man thus proved that ready wit is really the best weapon and that *one* who does not lose *one's* presence of mind is perhaps the bravest individual.

अनुवाद—बीरबल के बारे में एक मनोरंजक कहानी कही जाती है। एक बार अकबर ने अपने राज्य-सभासदों (दरबारियों) से पूछा—'आकस्मिक संकट-काल में कौन सा आयुध सर्वोत्तम है' ? एक ने कहा 'तलवार', दूसरे ने कहा 'भाला' इत्यादि" । बीरबल ने कहा—'श्रीमन् ! समयानुकूल सूझ अपना प्रतिद्वन्द्वी नहीं रखती हैं, दूसरे दिन जब बीरबल दरबार में आ रहा था, सम्राट् की आज्ञा से एक हाथी खुला छोड़ दिया गया। प्रसिद्ध व्यक्ति आसन्न विपत्ति (भय) में था। एक पिल्ला समीप ही लेटा पड़ा था। बीरबल ने पशु की टांग पकड़ ली और उसको आगे बढ़ते हुए काले राक्षस की तरफ फेंक दिया। हाथी घबरा गया, वह मुड़ गया और भाग गया। महान् मनुष्य ने इस प्रकार प्रमाणित कर दिया कि तत्काल बुद्धि ही वास्तव में सर्वोत्तम आयुध है तथा वह व्यक्ति जो समयानुकूल सूझ को नहीं खोता है, कदाचित् सबसे वीर है।

(5)

When man first come, he must have been surrounded by many huge animals, and he must have lived in fear of them

Today man is master of the world and he makes the animals do what he likes. Some he tames like the horse; the cow, the elephant, the dog, the cat and so many others; some he eats; and some like the lion and the tiger, he shoots for pleasure. But in those days he was not the master but a poor hunted creature himself, trying to keep away from the great beasts. Gradually, however, man raised himself and became more and more powerful till he became stronger than any animal.

अनुवाद—जब मनुष्य प्रथम बार आया, तब वह अवश्यमेव बहुत से दीर्घाकार जन्तुओं से घिरा हुआ होगा एवं वह उन से भयभीत रहता होगा। आज मनुष्य संसार का स्वामी है और वह जानवरों से जो चाहता है, करवा लेता है। कुछ को, जैसे घोड़ा, गाय, हाथी, कुत्ता, बिल्ली तथा अन्य बहुतों को वह पालता है; कुछ को वह खाता है; और और कुछ को, जैसे शेर, बघेरे को, वह मनोरंजन के लिए शिकार करता है। लेकिन उन दिनों में वह स्वामी नहीं था, किन्तु बड़े पशुओं से अपने आपको बचाने का प्रयत्न करता हुआ स्वयं दूसरों से पीछा किया जाता हुआ एक दीन प्राणी था। किन्तु शनैः शनैः मनुष्य ने अपने-आप को उठाया और जब तक वह जानवर से अधिक बलवान न बन गया, तब तक वह अधिकाधिक शक्ति-शाली बनता गया।

(6)

Nobody likes falling ill But how many people make a constant effort to avoid illness? Most of the people leave the matter of their health to chance, taking notice only when disease overtakes them, and that too not until they are bed ridden, and incapacitated from their work. What is more tragic is that besides being utterly careless about taking pains to under stand the laws of health and observe them in preventing disease, they actually expect illness and there by invite it. But is it in your power to check disease? Certainly. Those who believe that their is some diety, whose pleasure or anger determines health and disease for us, are still living in mediaeval ages.

अनुवाद—बीमार पड़ना कोई भी नहीं चाहता है, किन्तु कितने लोग ऐसे हैं जो बीमारी से दूर रहने के लिए निरन्तर प्रयत्न करते हैं? अधिकांश

लोग अपने स्वास्थ्य की बात अवसर पर छोड़ देते है, वे केवल तब ध्यान देते जब बीमारी उन्हें आ दबाती है और वह भी उस समय तक नहीं जब तक कि वे बिस्तर पर न पड़ जायें और अपने कार्य के करने मे असमर्थ न हो जायें। इससे भी अधिक कष्ट कर यह है कि स्वास्थ्य के नियमो को समझने के लिए कष्ट उठाने और बीमारी को रोकने मे उनका पालन करने में पूर्णतः असावधान होने के अतिरिक्त वे यथार्थ मे बीमारी की आशा करते है और इस तरह उसे निमंत्रण देते है। किन्तु क्या बीमारी को रोकना तुम्हारी शक्ति मे है ? निःसंदेह। वे लोग जो यह विश्वास करते है कि कोई देवता है जिस की प्रसन्नता या क्रोध हमारे स्वास्थ्य और बीमारी का कारण बनता है, अभी तक मध्य युग मे रह रहे है।

(7)

Then Surbhi came to test the merits of Vikramarka on the Earth. She assumed the form of a very feeble cow and having herself fallen into mud raised a pitious cry while the king was passing by the way Having seen her in that state, the king who felt pity for her strove hard to relieve her. While he was trying to extricate her, the sun set. When darkness thickened the king stood there alone, bent upon protecting the cow from a tiger until the sun rose, Having observed mercy and other great, virtues of the king, the cow was much pleased and asked him to choose a desired boon.

अनुवाद—तब सुरभि विक्रमार्क के गुणो की परीक्षा लेने के लिए पृथ्वी पर आई। उसने एक अति दुर्बल गाय का रूप धारण किया और उसने स्वयं को कीचड़ मे गिरा कर उस समय एक करुण-पूर्ण क्रन्दन किया जब कि राजा उस मार्ग मे जा रहा था। उसको उस अवस्था में देख कर राजा ने, जिसका हृदय उसके लिए दया से भर गया था, उसको कष्ट-मुक्त करने के लिए कठोर प्रयत्न किया। जब वह उसे बाहर निकालने का यत्न कर रहा था, सूर्य अस्त हो गया। अंधकार के घना होने पर राजा सूर्योदय न हो तब तक बाघ से गाय की रक्षा करने पर तुला हुआ वहाँ अकेला खड़ा रहा। राजा की दया एवं उसके अन्य गुणो को देख कर गाय अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने उसको एक अभीप्सित वर माँगने को कहा।

(8)

The best friend a man has in this world may turn against him, and become his enemy. His son or daughter whom he has reared with loving care, may prove ungrateful. Those who are nearest and dearest to him, those whom he trusts with his happiness and his good name, may become traitors to their faith. The money that a man has, he may lose. It flies away from him perhaps when he needs it most. The one absolutely unselfish friend that man can have in this selfish world, the one that never deserts him, the one that near proves ungrateful or treacherous, is his dog.

अनुवाद—इस संसार मे मनुष्य जिसको अपना सर्वोत्तम मित्र समझता है, वह उसके विरुद्ध होकर उसका शत्रु बन सकता है। उसका पुत्र या पुत्री जिसका लालन-पालन उसने स्नेह-पूर्ण चिन्ता के साथ किया है, कृतघ्न प्रमाणित हो सकते है। वे जो उसके निकटतम एवं प्रियतम है, वे जिनका विश्वास वह अपने सुख और अपने अच्छे नाम मे करता है, विश्वासघाती बन सकते है। मनुष्य उस धन को जो उसके पास है, खो सकता है। वह उसके पास से कदाचित् उस समय भाग जाता है जब कि उसको उसकी महती आवश्यकता होती है। इस स्वार्थ-परिपूर्ण संसार मे मनुष्य का जो सर्वथा निःस्वार्थ मित्र बन सकता है, जो न कभी उसे त्यागता है और जो न कभी कृतघ्न या धोखेबाज सिद्ध होता है, वह उसका कुत्ता है।

(9)

If it is true that knowledge is power, then we are bound also to admit that the creators of new knowledge, the makers of original research, must become the masters of those who are merely borrowers of knowledge. So as as our universities were content with merely importing to India, knowledge of varions kinds which had originated in Europe, we were intellectually a debtor nation. Our best writers were mere initators or translators. Therefore, if we wish to be self-reliant in art and science, if we wish to be independent thinkers, we must qualify ourselves to be givers and not merely takers.

अनुवाद—यदि यह सत्य है कि ज्ञान शक्ति है तो हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि नवीन ज्ञान के उद्‌भाव को (एवं) मौलिक अनुसंधान-कर्त्ता का उन लोगों पर आधिपत्य होना चाहिए जो ज्ञान को केवल ऋण के रूप ग्रहण करते हैं। जब तक हमारे विश्व विद्यालयों को युरोप में प्रादुर्भूत विवि प्रकार के ज्ञान का भारत मे आयातमात्र करने से संतोष था, तब तक हम बौद्धिक रूप में एक ऋणी राष्ट्र थे। हमारे सर्वश्रेष्ठ लेखक अनुकरण-कर्ता अथवा अनुवादक मात्र थे। इसलिए यदि हम कला और विज्ञान में आत्म-निर्भर होने की इच्छा रखते हैं, यदि हम स्वतंत्र विचारक बनना चाहते हैं तो हमें केवल ग्राहक-मात्र न रह कर प्रदाता बनने की विशेषता प्राप्त करनी चाहिए।

अभ्यासार्थ हिन्दी अनुवाद के लिये

(1)

The Prime Minister Shri Nehru, said that he would not like students to become merely book worms. They should develop an integrated personality and do well in every field, in their studies and other activities. They had to devnelop both their mind and body and try to become first-rate men. He further said that it was the first and foremost duty of the youth to create an atmosphere in their universities and outside where they themselves kept to the right path and also prevented others from doing wrong.

Vocabulary:—Book-worms=किताबी कीड़े। Integrated personality=पूर्ण व्यक्तित्व। First-rate=श्रेष्ट। Atmosphere=वातावरण। Prevented=रोकें।

(2)

There is a tendency in students to read in bed. The Chief danger that results from the habit is to the eyes, partly, because the light used is frequently insufficient and so pleaced as to dazzle them and, partly, because it is difficult to hold the book so that full benefit is obtained from the use of both eyes. Again there is generally a temptation to hold the book too close to the eyess, and this of itself tends to induce Myopia.

Vocabulary:—Tendency=प्रवृत्ति। Results=उत्पन्न होता है। Partly=कुछ। Frequently insufficient=बहुधा अपर्याप्त।

…zle=बाँधिया देना। Temptation=लोभ। Induce=उत्पन्न करना। Myopia=अल्पदृष्टि।

(3)

Tea is perhaps the most popular and widely used drink in the world. Many millions of people drink tea every day of their lives. In England, in the United States of America, in China, in Australia, and in many other well-known countries of the world tea is drunk every day by everybody. It is one of the necessities of life. Tea, as far as we know, first came from China, where it always has been, and still is, the most popular of drinks. In India and Pakistan tea is not drunk very much, except on the North-West Frontier, where every one drinks it and is very fond of it.

Vocabulary—Popular=सर्वप्रिय। Drink=पेय।

(4)

When Ram accompanied by Lakshmana and Sita, set out on his journey to the forest, the people of Ayodhya followed them as far as the banks of the river Tamasa. When it grew dark, all the people slept on beds of leaves. At day-break, Ram arose from his bed of leaves and seeing the people still asleep, said to his brother—'Behold these people devoted to us and unmindful of their own interests, sleeping beneath these trees. They have vowed to take us back and will never leave us. Let us, therefore gently mount the Chariot and take our departure.'

Vocabulory—Accompanied by=साथ। Behold=देखो। Devoted=भक्त। Unmindful=उदासीन। Interests=स्वार्थ। Mount=चढ़ना। Chariot=रथ।

(5)

What will not the child do for his mother? Therefore, it is essential that the mother should be a worthy mother. Worthy mother will produce worthy sons. And when sons move heaven and earth for their mother it is but natural to expect that women should be worthy of so much effort and secrifice. Abraham Lincoln's mother burnt the mid-night oil not on books but on keeping her children going. She was wise, hard-working and

honest. Above all, she was brave. Her son Aby also becam brave, honest, wise and industrious because his mother taught him to be so.

Vocabulary—Essential=आवश्यक । Worthy=योग्य । Move heaven and earth=भरसक प्रयत्न करना । Expect=आशा करना । Sacrifice=त्याग । Industrious=उद्योगी, परिश्रमी ।

(6)

Though Sir Ashutosh was such an important figure in public affairs, he never gave up his simple way of life. Being of a very affectionate Character, he was especially devoted to his mother and to his daughter, Kamala Devi. He took no importance in his career without first explaining it to his mother and making sure that she understood and approved of what he was doing. Once, when the Viceroy asked him to go to Europe, the old lady refused to allow him to go. Nothing that the Viceroy could say made any difference; Ashutosh would not go against his mother's wishes.

Vocabulary—Important figure=महत्वपूर्ण व्यक्ति । Public affairs=सार्वजनिक कार्य । Devoted=भक्त । Approve=स्वीकृति देना । Difference=अन्तर ।

(7)

In the beginning of the century there took place in England what was known as the industrial Revolution. Upto this time most of the people in the British Isles had made their living by farming. The manufactures were small and were generally done by men and women in their own homes. But now a great change took place. The power of steam was discovered, the first steam engines were made and machinery was invented to do a great part of the work which before people had done with their own hands. Factories were built where the machinary was put up and the people came to live in towns to be near the factories, instead of living and working in their country cottage as before.

Vocabulary—Industrial Revolution=औद्योगिक क्रांति । Living=आजीविका । Manufactures=दस्तकारी के कार्य । Put up=स्थापित करना ।

(8)

The best friend a man has in this world may turn against him, and become his enemy. His son or daughter that he has reared with loving care, may prove ungrateful. Those who are nearest and dearest to him, those whom he trusts with his happiness and his good name, may become traitors to their faith. The money that a man has, he may lose, It flies away from him perhaps when he needs it most. The one absolutely unselfish friend that man can have in this selfish world, the one that never deserts him, the one that never proves ungrateful or treacherous, is his dog.

Vocabulary:—Turn against=विरुद्ध हो जाना। Rear=पोषण करना। Ungrateful=कृतघ्न। Traitors=धोखे बाज। Absolutely=पूर्णतः। Unselfish=निःस्वार्थ। Desert=छोड़ना। Treacherous=धोखे बाज।

(9)

Make the best use of life, because if you make a bad use of it, you will suffer for ever. Place the best possible examples before yourself. Let the best minds of the world mould your life and form your Character. Try to set a good example for others. Let your actions be such that people should remember you and love you after your death. Thus your future depends on the use you make of this life. Life is a big and golden opportunity. It will never again be offered to you. Make, therefore, the best use of it; rank among the immortals of the world.

Vocabulary:—Place=रखो। Mould=ढालना। Opportu-nity=अवसर। Rank=स्थान प्राप्त करो। Immortals=अमर।

(10)

The first danger to democracy is the poverty and ignorance of the people. The hungry can fall an easy prey to slavery if promised bread. Freedom is not the first requirement of man. It is necessary for him to live before he can live well.. An ancient

wisdom says, 'A man to thrive must keep alive. Poverty is a', the root of social, political and economic backwarduess. Ignorance is the result of poverty and cannot be helpful to the development of democracy. An ignorant man has no idea of rights and duties, cannot develop right sense of values of balanced judgment.

Vocabulary:—Ignorance=अज्ञान। Prey=शिकार। Thrive=उन्नत या स्वास्थ्य—परिपूर्ण होना। Development=विकास। Balanced judgment=संतुलित न्याय व निर्णय।

(11)

There is much work for each one to do in India. We have to fight poverty and disease, ignorance and illiteracy. People are to be taught clean habits of living. Small curtesies and decencies of life are generally ignored; yet they are important. schools and hospitals for the poor are to be built. Adult edu.ation goes a degging for volunteers. Tolerance and charity are to be inculcated. We have to fight hatred and ignorance. We have to give a new sense of responsibility and freedom to our countrymen.

Vocabulary—Poverty=गरीबी। Ignorance=अज्ञान। Illiteracy=निरक्षरता, अशिक्षा। Curtesies and decencies=सभ्यता और सज्जनता। Tolerance=सहिष्णुता। Hatred=घृणा।

(12)

We all know difference between good and bad manners between habits which are rude and habits which are gentle, and we know what a difference they make in society. And for us who have to live in society, and to lead public lives among men the cultivation of gentle manners is very important indeed. For the estimation which we shall hereafter have among men, and our influence over them will depend very much on the manners we possess. If we behave like a vulgar man, we shall be treated like a vulgar man. If we behave like a gentleman, we shall be treated like a gentleman.

Vocabulary—Cultivation=निर्माण । Estimation=आदर । Behave=वर्ताव करना । Vulgar=गवार ।

(13)

Money has its dangers. One great danger is pride. Money often makes men proud. Rich people think themselves better than their fellows, when really they have no merit at all, except the power which money gives them, Sometimes people because they are rich, become so vain that they think their very faults to be virtues, their foolishness to be wisdom. They deem themselves to be above God's law as well as man's. If money makes us vain and collous, then the less money we have, the better.

Vocabulary—Merit=महत्त्व, गुण । Vain=घमण्डी । Deem=समझना । Collous=कठोर, निर्लज्ज ।

(14)

Acharya Vinoba Bhave follows Mahatma Gandhi's religious way of life and bears some physical resemblance to him. The Acharya's day begins at 3 a. m. with an hour and a half of prayer and meditation before starting the day's walk. He is a prodigious walker, averaging five miles an hour at a steady pace, By the noon he will have reached his destination. Only than do the Acharya and his followers have their austere breakfast—vegetarian, of course, and with no tea or coffee.

Vocabulary—Resemblance=समानता । Meditation=ध्यान । Prodigious=विचित्र । Steady=स्थिर । Destination=गन्तव्य स्थान । Austere=संयमपूर्ण । Vegetarian=शाकाहारी ।

(15)

From her father Sarojini Naidu inherited catholicity of views, freedom from Communal prejudice, high intellect and appreciation of a good man's worth, however, lowly his station

in life might be. From her mother she inherited the gifts of poetry, grace and a benevolent nature. The father wanted her to be a seientest, the mother would like her to take to literature and poetry and in the end the mother's influence prevailed and she became a poet and published three volumes of poetry in exquisite English.

Vocabulary—Inherited=प्राप्त किया । Catholicity= सहिष्णुता, विश्व-बन्धुत्व की भावना । Communal Prejudice= साम्प्रदायिक पक्षपात । Benevolent=उदार । Exquisite= उत्तम ।

आदर्श अनुवाद संस्कृत भाषा से

सकलेषु प्राणिषु मनुष्य एव श्रेष्ठो खलु, परं मनुष्योऽपि पशु एव यदि तस्मिन् धर्मो नास्ति । पशुना सार्धं मनुष्यस्य तुलना यदि क्रियेत तदा अनेकाः प्रवृत्तयः तत्र समानाः दृश्यन्ते, परं पशौ धर्मो नास्ति यथा विद्वांसः कथयन्ति 'धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः' । किन्तु धर्मस्य किं स्वरूपं यतः विभिन्नेषु धर्मशास्त्रेषु तस्य विभिन्नं लक्षणं प्रतिपाद्यते । केचित् वाह्याचरणमेव धर्मः, केचित् आत्म-स्वभावो धर्मः, अपरे च केवलं कर्तव्यमेव धर्म इति आमनन्ति । अत्र नास्ति कोऽपि संदेहः यत् धर्मस्य आत्मना सह सम्बन्धः, न च शरीरेण समम् । ये वाह्यवस्तुषु धर्मं कल्पयन्ति, ते वाह्याचरणमेव धर्मं स्वीकुर्वन्ति । काले काले च ईदृक् धर्मः जनानां विवादस्य कलहस्य च कारणो भवति यतः सर्वसम्प्रदायानां वाह्याचरणं समानं न भवति ।

अनुवाद—सब प्राणियों में वस्तुतः मनुष्य ही श्रेष्ठ है, किन्तु मनुष्य भी पशु ही है यदि उसमें धर्म नहीं है । मनुष्य की तुलना यदि पशु से की जाय तो दोनों में अनेक प्रवृत्तियाँ समान दिखाई देती हैं, किन्तु पशु में धर्म नहीं है जैसाकि विद्वान् कहते हैं 'धर्मविहीन पशुओं के समान हैं' । परन्तु धर्म का क्या स्वरूप है, क्योंकि विभिन्न धर्मशास्त्रों में उसका विभिन्न लक्षण बताया गया है । कुछ वाह्य आचरण को ही धर्म मानते हैं, कुछ आत्म-स्वभाव को धर्म मानते हैं तथा अन्य जन केवल कर्तव्य को ही धर्म मानते हैं । इसमें तो कोई भी संदेह नहीं है कि धर्म का सम्बन्ध आत्मा से है न कि शरीर से । जो लोग वाहरी वस्तुओं में धर्म की कल्पना करते हैं, वे बाह्य आचरण को ही धर्म स्वीकार करते हैं ।

समय-समय पर ऐसा धर्म मनुष्यों के विवाद और कलह का कारण बन जाता है, क्योंकि सब सम्प्रदायों का बाह्याचरण समान नहीं होता है।

(२)

मानवसमाजस्य कृते कविः अधिकः श्रेयस्करः अथवा वैज्ञानिकः। कविः युगस्य निर्माता भवति। सः समाजाय चेतनां ददाति। वाल्मीकि, कालिदास, रूसो, वाल्टेयर इत्यादीनां कविता अद्यापि प्रेम्णा आदरं लभन्ते। कविरेव बुद्धि उत्पादयति जगति वैज्ञानिकान् अपि स एवं बुद्धिं ददाति। कविः सृजनस्य चेष्टां करोति वैज्ञानिको विनाशस्य। वैज्ञानिकः केवलं भौतिकं जगदेव जानाति, सः तद् आध्यात्मिकं जगत् विस्मरति यत् प्रत्येकस्य मानवस्य हृदये व्याप्तम्। एतत् आध्यात्मिकं जगत् कविः स्पृशति, स मानवमात्रं ध्येयं कृत्वा कवितां लिखति। तस्य स्थानं राज्ञः रंकस्य च हृदये समानम्। विभिन्न प्रकारैः बम्बैः सर्वनाशे समुत्पन्ने कवेर्वाणी एव विश्वेऽस्मिन् शांतेः स्थापनां करोति। अतः मानव-समाजस्य कृते वैज्ञानिकस्य अपेक्षया कविः अधिकः श्रेयस्करो भवति।

अनुवाद—मानव-समाज के लिए कवि अधिक कल्याणकारी है वा वैज्ञानिक। कवि युग का निर्माता होता है। वह समाज को चेतना देता है। वाल्मीकि, कालिदास, रूसो, वाल्टेयर इत्यादि की कविता आज भी प्रेम से आदर प्राप्त करती हैं। कवि ही संसार में बुद्धि उत्पन्न करता है, वही वैज्ञानिक को भी बुद्धि देता है। कवि सृजन की चेष्टा करता है, वैज्ञानिक विनाश की। वैज्ञानिक केवल भौतिक जगत् को जानता है, वह उस आध्यात्मिक जगत् को भूल जाता है जो प्रत्येक मानव के हृदय में व्याप्त है। इस आध्यात्मिक जगत् को कवि छूता है, वह मानवमात्र को ध्येय बनाकर कविता लिखता है। राजा और रंक (दोनों) के हृदय में उसका स्थान समान रूप से है। विभिन्न प्रकार के बमों द्वारा सर्वनाश हो जाने पर कवि की वाणी ही संसार में शान्ति की स्थापना करती है। इसलिए मानव-समाज के लिए वैज्ञानिक की अपेक्षा कवि अधिक कल्याणकारी होता है।

(३)

संसारेऽस्मिन् नानाः पुरुषाः नानागुणसम्पन्नाः दृश्यन्ते। प्रत्येकस्य पुरुषस्य जीवनोद्देश्यमपि भिन्नं एव। परं प्रत्येकः शिक्षितो वाऽशिक्षितो वा सुखं प्राप्तुं

अभिलषति, आनन्दावाप्तये यत्नं करोति परं न जानाति यत् कुत्र सौख्यनिवासम्॥ केषांचित् मते तु इन्द्रियाणां तृप्तिरेव सुखम्, परं किं इन्द्रियाणां तृप्तिर्जायेत ? न। असंभवमिदम्। यथा यथा वयं तानि संतुष्टानि कुर्मः तथा तथैव तानि उग्रतराणि असंतुष्टानि च भवन्ति। अतः इन्द्रियतृप्तौ सुखं न। अन्येषां मते धनमेव सुखमूलम्, परं ते न जानन्ति यत् सौख्यस्य न कोऽपि सम्बन्धः धनेन सह। वयं पश्यामः यत् धनेन आप्लाविताः जनाः दरिद्रेभ्यः अधिकतरं उद्विग्नाः सन्ति। अपरे च केचित् स्वास्थ्यमेव धनं तच्च सुखं मानन्ति, परं स्वस्थेन मस्तिष्केन विना केवलं स्वस्थशरीरं अस्मान् सुखयितुं न शक्नोति। अतएव संतोष एव सौख्यम्।

अनुवाद—इस संसार में अनेक पुरुष अनेक गुणों से सम्पन्न दिखलाई देते हैं। प्रत्येक पुरुष के जीवन का उद्देश्य भी भिन्न ही है किन्तु शिक्षित हो वा अशिक्षित, प्रत्येक सुख पाने की अभिलाषा करता है, आनन्द की प्राप्ति के लिए यत्न करता है, परन्तु (वह) नहीं जानता है कि सुख का निवास कहाँ है? कितने ही लोगों के मत में तो इन्द्रियों की तृप्ति ही सुख है, पर क्या इन्द्रियों की तृप्ति होती है? नहीं। यह असंभव है। जैसे-जैसे हम इनको संतुष्ट करते हैं, वैसे-वैसे ये उग्रतर और असन्तुष्ट होती हैं। इसलिए इन्द्रिय-तृप्ति में सुख नहीं है। अन्य लोगों की राय में धन ही सुख का मूल है, किन्तु वे नहीं जानते हैं कि सुख का धन से कोई भी सम्बन्ध नहीं है। हम देखते है कि धन से आप्लावित जन दरिद्रों की अपेक्षा अधिक बेचैन रहते हैं। कितने ही अन्य जन स्वास्थ्य को ही धन और उसको ही सुख मानते हैं, किन्तु स्वस्थ मस्तिष्क के बिना केवल स्वस्थ शरीर हमको सुख नहीं पहुँचा सकता है। इसलिए संतोष ही सुख है।

(४)

पुरा सूर्यवंशप्रदीपः सगरो नाम धरणीधरः शताश्वमेधयज्ञं आरेभे। 'समाप्ते च यज्ञे सगरः इन्द्रपदवी लभेत' इत्याशंकया सुरेन्द्रः भयभीतो जातः। ततः स सगरयज्ञस्य सफलसमाप्तौ विघ्नरोपणाय प्रयत्नो बभूव। इन्द्रः अश्वं अपहृत्य पातालं गतः तत्र च समाधि-मग्नस्य महर्षिकपिलस्य आश्रम-सन्निधौ तं तुरंगं प्रस्थापयामास। अथ तुरंगान्वेषणे संलग्नाः सगरसुताः अश्वखुरचिह्नानि अनुसरन्तः वसुन्धरां विदारयन्तश्च महर्षिकपिलस्य आश्रमसमीपे आजग्मुः। तत्र ते अश्वं वीक्ष्य रोषारुणलोचनाः बभूवुः। 'अयं पाखंडी दुरात्मा अश्वापहारी तदेव वध्यः' इति उच्चैस्वरैः गर्जयन्तः ते तं ऋषिं प्रहरणाय अधावन्।

अनुवाद—प्राचीनकाल में सूर्यवंश के दीपक सगर नाम के राजा ने शताश्वमेधयज्ञ आरंभ किया। 'यज्ञ के समाप्त होने पर सगर इन्द्र-पदवी प्राप्त कर लेगा' इस आशंका से इन्द्र डर गया। इसके अनन्तर उसने सगर के यज्ञ की सफलता-पूर्ण समाप्ति में विघ्न डालने का प्रयत्न किया। इन्द्र घोड़ा चुरा कर पाताल ले गया और वहाँ उसने उस घोड़े को समाधि में लीन महर्षिकपिल के आश्रम के समीप बाँध दिया। तदनन्तर घोड़े की खोज में लगे हुए सगर के पुत्र घोड़े के पद-चिह्नों का अनुसरण करते हुए और पृथ्वी को चीरते हुए महर्षिकपिल के आश्रम के समीप आ गये। वहाँ घोड़ा देख कर उनके नेत्र क्रोध के मारे लाल हो गये। 'यह पाखंडी, दुरात्मा घोड़े का चुराने वाला है, इसलिए (यह) मारने योग्य है' इस प्रकार उच्च स्वर से गर्जना करते हुए वे उस ऋषि को मारने के लिए दौड़े।

(५)

समुद्रस्य महती महिमा। सगरस्य पवित्रे अश्वे कपिल द्वारा रसातले नीते सति तस्य अन्वेषणाय वसुधां खनद्भिः सगर-सुतैः एषः विवर्धितः। अनेन कारणेनैव एव समुद्रः सागरनाम्ना विश्रुतः विश्वे। सूर्यकिरणाः अस्मात् जलं अपकर्षन्ति तज्जलं च मेघस्वरूपे परिवर्तयन्ति, येन अस्माकं वसुन्धरा शस्यश्यामला भवति। समुद्रे बहूनि रत्नानि परिपुष्टिं प्राप्नुवन्ति। रत्नाकरात् सर्वानन्दप्रदः चन्द्रः संजातः। विष्णुवत् एषः रत्नाकरः अनेकाम् अवस्थां भजते। विष्णुर्यथा दिव्यतेजसा दशदिशो व्याप्य तिष्ठति, समुद्रोऽपि तथा स्वमहिम्ना दशसु दशासु विस्तार प्राप्य संतिष्ठते।

अनुवाद—समुद्र की बड़ी भारी महिमा है। सगर के पवित्र घोड़े को कपिल द्वारा पाताल में ले जाये जाने पर उसकी खोज के लिए सगर-पुत्रों द्वारा पृथ्वी के खोदे जाने के कारण यह वृद्धि को प्राप्त हुआ। इसी कारण से यह समुद्र सागर नाम से संसार में प्रसिद्ध है। इससे सूर्य की किरणें जल खींचती हैं और उस जल को मेघ के रूप में बदल देती है जिससे हमारी पृथ्वी अनाज से हरी-भरी होती है। समुद्र में बहुत से रत्न पुष्टि को प्राप्त करते हैं। समुद्र से सब को आनन्द देने वाला चन्द्रमा उत्पन्न होता है। विष्णु के समान यह समुद्र अनेक अवस्थाओं (रूपों) को प्राप्त होता है। जिस प्रकार विष्णु

दिव्यतेज से दशों दिशाओं में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार समुद्र भी अपनी महिमा द्वारा दशों दिशाओं में विस्तार प्राप्त कर स्थित है।

(६)

को न जानाति संस्कृतस्य माहात्म्यम्। भारतवर्षे याः याः भाषा अस्मद्देशस्य विभिन्नभागेषु उच्चार्यन्ते, ताः सर्वाः संस्कृतस्य महत् ऋणं धारयन्ति। या हिन्दी भाषा भारतस्य राष्ट्रभाषागौरवेन विभूषिता तस्या अपि सम्यक् ज्ञानं संस्कृतभाषाया अध्ययनं विना न भवति। जर्मन विद्वान् जैकोवी महोदयः संस्कृतशास्त्रं प्रति एतादृश आकृष्टचेता आसीत् यत् तेन कथितं 'यदि ईश्वरेच्छया मे पुनर्जन्म भवेत् तर्हि भवेत् तत् भारतवर्षे ब्राह्मण कुले च येन अहं संस्कृतं सुतरां पठानि' इति। अनेन उदाहरणेन दूरस्थानां विदुषां अपि संस्कृतं प्रति प्रेम ज्ञायते।

अनुवाद—संस्कृत की महिमा कौन नहीं जानता है। भारतवर्ष में जो-जो भाषाएं हमारे देश के विभिन्न भागों मे बोली जाती है, वे सब संस्कृत के महान् ऋण को धारण करती है। हिन्दी भाषा जो भारत की राष्ट्रभाषा के गौरव से विभूषित है, उसका भी संस्कृत भाषा के अध्ययन बिना भले प्रकार ज्ञान नहीं होता है। जर्मन विद्वान् जैकोबी महोदय संस्कृतशास्त्र के प्रति इतने आकृष्टचित्त थे कि उनके द्वारा कहा गया—'यदि ईश्वर की इच्छा से मेरा पुनर्जन्म हो तो वह भारतवर्ष में और ब्राह्मण कुल में हो जिससे मैं संस्कृत अच्छी तरह पढ़ूँ' इस उदाहरण से दूरस्थ विद्वानों का भी संस्कृत के प्रति प्रेम जाना जाता है।

(७)

अस्मिन् संसारे न कोऽपि एतादृशो मनुजो विद्यते यः एकाकी एव वस्तु वांछति। अन्येषां सहयोगं विना कोऽपि किमपि कार्यं कर्तुं न शक्नोति जगतः सर्वाणि कार्याणि संगतिमेव आश्रयन्ति। यथा हि अस्माकं भोजनाय कश्चित् अन्नं वपति, कश्चित् लुनाति, कश्चित् विक्रीणीते, कश्चिच्च पाचयति पश्चात् वयं भक्षयामः। अनेन उदाहरणेन ज्ञातमिदं यत् सर्वाणि कार्याणि संगेनैव सिद्धयन्ति। मनुष्यस्य चरित्रं शिक्षापेक्षया संसर्गादेव अधिकतरं उन्नतं अवनतं वा भवति। तथाहि केनापि उक्तं—'संसर्गजाः दोषगुणाः भवन्ति'। अतः सर्वदा पुरुषस्य चरित्रं दृष्ट्वा एव संगतिः कार्या।

अनुवाद—इस संसार में कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं है जो अकेला ही रहना चाहता हो। दूसरों के सहयोग के विना कोई भी किसी कार्य को नहीं कर सकता है। संसार के समग्र कार्य संगति का ही आश्रय करते हैं। जिस प्रकार हमारे भोजन के लिए कोई अन्न बोता है, कोई काटता है, कोई बेचता है और कोई पकाता है, पीछे हम खाते है। इस उदाहरण द्वारा यह ज्ञात हो गया कि सब कार्य सहयोग से ही सिद्ध होते हैं। मनुष्य का चरित्र शिक्षा की अपेक्षा संसर्ग से ही अधिक उन्नत वा अवनत होता है। इसी प्रकार किसी के द्वारा कहा गया है—'दोष और गुण संगति से ही उत्पन्न होते हैं'। इसलिए सदा पुरुष का चरित्र देखकर ही संगति करनी चाहिए।

(८)

एकदा सर्वे देवाः स्वस्ववाहनम् आरुह्य भगवन्तं शंकरं उपागच्छन्। गणपतिरपि स्ववाहनं मूषकं आरुह्य आगच्छत्। सः मूषकः भवानीवाहनं सिंह दृष्ट्वा भयात् तत्याज स्वस्थानम्, येन गणपतिः पृथिव्यां अपतत्। इदं दृष्ट्वा देवाः किंचित् स्मितमकुर्वन्, परं चन्द्रमा उच्चस्वरेण जहास। तं हसन्तं दृष्ट्वा गणपतिः क्रुद्धः आसीत् शशाप च तम् 'भो चन्द्र त्वं सुन्दरोऽसि अतः त्वं गर्वितोऽसि। गच्छ, अद्य प्रभृति यः कोऽपि प्राणी त्वद्दर्शनं करिष्यति सः कलंकयुक्तो भविष्यति'। यदा सर्वे देवाः प्रार्थनां अकुर्वन् तदा गणपतिः क्रोधं त्यक्त्वा अवदत्—'शापः अपरिवर्तनीयो ऽस्ति अयं दिवसः गणेश चतुर्थी इति नाम्ना प्रथितो भविष्यति। अस्मिन् दिवसे यः कोऽपि प्राणी चन्द्रदर्शनं करिष्यति सः निष्कलंकोऽपि कलंकयुक्तो भविष्यति'।

अनुवाद—एक बार सब देवता अपने-अपने वाहनों पर सवार होकर भगवान शंकर के पास गये। गणेशजी भी अपने वाहन चूहे पर चढ़कर आये। भवानी के वाहन सिंह को देख कर भय के कारण उस चूहे ने अपना स्थान छोड़ दिया, जिससे गणेश जी पृथ्वी पर गिर गये। यह देख कर देवताओं को किंचित् हँसी आ गई, किन्तु चन्द्रमा उच्चस्वर (जोर) से हँसा। उसको हँसता हुआ देखकर गणेश जी क्रुद्ध हो गये और उसको उन्होंने शाप दे दिया—'अरे! चन्द्रमा! तू सुन्दर है, इसलिए तुझे गर्व हो गया है। जा, आज से जो कोई भी प्राणी तेरा दर्शन करेगा वह कलंकी होगा'। जब सब देवताओं ने प्रार्थना

की तब गणेश जी ने क्रोध त्याग कर कहा—'शाप बदला नहीं जा सकता है, यह दिन गणेश-चतुर्थी इस नाम से प्रसिद्ध होगा। इस दिन जो कोई भी प्राणी चन्द्र-दर्शन करेगा, वह निष्कलंक भी कलंक पूर्ण बन जायगा'।

(९)

'धर्म कुरु। इदं जीवनं धर्माय अस्ति। धर्मेण लोके सुखं परलोके च मोक्षं लभ्यते' इति सर्वेषु शास्त्रेषु लिखितं विद्वद्भिश्च कथितम्। सत्यास्तेयदान-परोपकारादीनि धर्मस्य अंगानि। एतानि सर्वाणि लोक-कल्याणाय प्रवर्तन्ते। सर्वेषां उद्देश्यं लोक-कल्याणम्। सामान्यतः प्रथमं आत्म-कल्याणाय प्रवृत्तिः भवति तदनन्तरं लोक-कल्याणाय च। परं शनैः शनैः मानवस्य प्रवृत्तिः लोक-कल्याणे स्थिरा भवति। परं सः आत्मानं कदापि न विस्मरति आत्मकल्याणात् लोककल्याणं उद्भवति लोक कल्याणात् च धर्मोऽभिजायते।

अनुवाद—'धर्म कर। यह जीवन धर्म के लिए है। धर्म से लोक में सुख और परलोक मे मोक्ष प्राप्त होता है' यह सब शास्त्रों में लिखा हुआ एवं विद्वानं द्वारा कहा गया है। सत्य, अचौर्य, दान, परोपकार आदि धर्म के अंग हैं ये सब लोक-कल्याण के लिए हैं। सब का उद्देश्य लोक कल्याण है। साधारण तया पहले आत्म-कल्याण के लिए प्रवृत्ति होती है, तदनन्तर लोक-कल्याण के लिए। किन्तु धीरे-धीरे मानव की प्रवृत्ति लोक-कल्याण मे स्थिर हो जाती है, किन्तु वह अपने को कभी नहीं भूलता है। आत्म-कल्याण से लोक-कल्याण उत्पन्न होता है और लोक-कल्याण से धर्म।

(१०)

महाकविः कालिदासः भगवत्याःभारत्याः कविवरेषु शीर्षस्थानीयोऽस्ति। अद्यावधि न अजनि तस्य कवेः प्रतिद्वन्द्वी निखिलविश्वे। नात्र कोऽपि संशयः यत् कालिदासः आदि कवि-वाल्मीकिम् अन्तरेण भारतवर्षस्य अद्वितीयः कविः। वयं तु तम् निखिल विश्वस्य अन्यतमम् कविम् मन्यामहे। स्वदेशीयाः विदेशीयाश्च बहवः पंडिताः अपि एतत् मतमेव स्वेषां विमलमानसेषु धारयन्ति। वस्तुतस्तु तस्य महाकवेः कविता सर्वांगसुन्दरी सुन्दरी इव सहृदयानां हृदय-प्रासादेषु विराजते। उपमा-क्षेत्रे कालिदासः अद्वितीयः—'उपमा कालिदासस्य' इति विश्व-विश्रुता उक्तिः।

अनुवाद—महाकवि कालिदास भगवती भारती के कविवरों में शीर्षस्थान रखता है। आज तक भी इस कवि का प्रतिद्वन्द्वी सम्पूर्ण संसार में पैदा नहीं हुआ। इसमे कोई भी संशय नही है कि आदिकवि वाल्मीकि को छोड़कर कालिदास भारतवर्ष का अद्वितीय कवि है। हम तो उसे सम्पूर्ण विश्व का अन्यतम कवि मानते है। स्वदेश एवं विदेश के बहुत से पंडित भी अपने निर्मल चित्त में इसी मत को धारण करते है। वास्तव में इस महाकवि की कविता सर्वागसुन्दरी सुन्दरी की तरह सहृदय जनों के हृदय-प्रासाद में विराजती है। उपमा के क्षेत्र में कालिदास अद्वितीय है—'उपमा कलिदास की' यह उक्ति विश्व-विख्यात है।

अभ्यासार्थ हिन्दी-अनुवाद के लिए संस्कृत भाषा के अवतरण

(१)

अस्मिन् संसारे माता मातृभूमिश्च द्वे एव एते सर्वोत्तमे स्तः। बालकस्योपरि मातुः यादृशं प्रेम भवति, न तादृशं कुत्रापि दृष्टुं शक्यते। माता बालकस्य कृते सर्वस्वं अपि त्यक्तुं शक्नोति। मातुः सर्वदा एव एषा इच्छा भवति यद् बालकः सदा सुखी समृद्धो गुणगणैः विभूषितश्च भवेत्। सा स्वीयं कष्टजातं नैव चिन्तयति, तस्याः समक्षं सर्वदा बालकस्य सुखचिन्ता एव भवति। अतएव पुत्रस्य अपि मातुः उपरि असाधारणं प्रेम भवति। बालकस्य कृते माता एव सर्वस्वं भवति। अत एव मनुष्यैः मातृपूजा मातृभक्तिश्च सर्वदा करणीया।

शब्दार्थः—यादृशं=जैसा। तादृशं=वैसा। समक्षं=सामने। करणीया=करनी चाहिए।

(२)

बाल्यकाले विशेषतः बालकस्य उपरि संसर्गस्य प्रभावः भवति। बालको यादृशैः बालकैः सह संगतिं करिष्यति तादृश एव भविष्यति। अतः बाल्यकाले दुर्जनैः सह संगतिः कदापि न करणीया। दुर्जनानां संसर्गेण बहवो हानयो भवन्ति। दुर्जनस्य संसर्गेण मनुष्यः चरित्रहीनः भवति, तस्यः विचाराः दूषिताः भवन्ति, बुद्धि क्षीयते, तस्य शरीरं क्षीणं निर्बलं च भवति। तस्य कीर्तिः

नश्यति, सर्वत्र अनादरः भवति। अतः स्वयशो वृद्धये सुखस्य शान्तेश्च प्राप्त्यै सर्वैः अपि सत्संगतिः करणीया, दुर्जन संगतिश्च हेया।

शब्दार्थ—विशेषतः=खासतौर से। संसर्गस्य=संगति का। क्षीयते=नष्ट होती है। हेया=छोड़ देनी चाहिए।

(३)

सत्यभाषणेन मनुष्यः निर्भीकः भवति। सत्य भाषणेन तस्य तेजो यशः कीर्तिः विद्या गौरवं च वर्धते। यः सत्यं वदति, स सर्वेभ्यः पापेभ्योऽपि निवृत्तः भवति। यदा स कस्मिश्चित् पापे प्रवर्तते तदा स चिन्तयति यद् अहं सत्यमेव वदिष्यामि अतः सर्वेषां दृष्टिषु हीनः भविष्यामि, अतः स पापाद् विरमति। वस्तुतः सत्य भाषणं जीवने सर्वोत्तमं तपः वर्तते। यः कश्चित् सत्यं वदति तस्य जीवनं सफलं भवति। ये च सत्यं परित्यज्य असत्यं भजन्ते ते महापातकं कुर्वन्ति।

शब्दार्थ—निर्भीकः=निडर। कस्मिश्चित्=किसी। विरमति=अलग होता है।

(४)

यद्यपि संसारे बहूनि वस्तूनि सन्ति, परन्तु विद्या एव सर्वश्रेष्ठं धनं अस्ति। अत एव उच्यते—"विद्याधनं सर्वधन-प्रधानम्"। विद्यया मनुष्यः स्वीयं कर्तव्यं जानाति। विद्यया एव मनुष्यः जानाति यत् कः धर्मः, कः अधर्मः, किं कर्तव्यं, किं अकर्तव्यम्, किं पुण्यं, किं पापं, किं कृत्वा लाभः भविष्यति, केन कार्येण वा हानिः भविष्यति। विद्या सर्वेषु धनेषु श्रेष्ठं अस्ति। विद्यया एव मनुष्यः सर्वत्र संमानं प्राप्नोति।

शब्दार्थ—उच्यते=कहा जाता है। स्वीयं=अपना,।

(५)

स्त्रीणां कृते शिक्षाया महती आवश्यकता एतस्मात् कारणात् वर्तते यत् ता एव समये प्राप्ते मातरो भवन्ति। यथा मातरो भवन्ति तथैव सन्ततिः भवति। यदि माता अशिक्षिता, विद्याशून्या च भवति तस्याः पुत्राः पुत्र्यः च तथैव ज्ञान-रहिताः भवन्ति। यदि च नार्यः शिक्षिताः भवन्ति ताः स्वपुत्राणां पालनं, रक्षणं सम्यक् तया कुर्वन्ति। यदि पुरुषः विद्वान् स्त्री च विद्याशून्या भवति तदा तयोः दाम्पत्य जीवनं सुखकरं न भवति।

शब्दार्थ—कृते=लिए। सन्ततिः=सन्तान। नार्यः=स्त्रियां। सम्यक्तया=अच्छी तरह से।

(६)

कर्तव्य पालनं जीवनस्य आधार-शिला भवति। संसारस्य प्रत्येकं वस्तु स्वकर्तव्य-पालनं करोति। सूर्यः निरन्तरं प्रकाशते, वायुः चलति धरा च प्राणिमात्रं धारयति। सर्वे स्व-स्वकर्तव्यस्य पालनं कुर्वन्ति। जीवनं सुखपूर्णंकर्तुं प्रत्येक मनुष्यस्य कर्तव्यानि निश्चितानि सन्ति। कर्तव्य पालनं अपि मनुष्यस्य कर्तव्यं अस्ति। कर्तव्य-पालनेन एव सदा उन्नतिः भवति। अतः कर्तव्य-पालने कदापि आलस्यं न करणीयम्।

शब्दार्थ—निरंतरं=लगातार। धरा=पृथ्वी। धारयति=धारण करती है।

(७)

रामायणं संस्कृत साहित्यस्य सर्वोत्तमं महाकाव्यं अस्ति। अस्य रचयिता ऋषिः वाल्मीकिः अस्ति। अस्मिन् ग्रन्थे मर्यादा पुरुषोत्तमस्य रामस्य जीवन-चरित्रम् वर्णितम् अस्ति। इदम् आदिकाव्यं अपि कथ्यते। अस्मिन् ग्रन्थे भारतीय संस्कृतेः सुन्दरतमं रूपं वर्णितम्। अस्य भाषा परिष्कृता प्रसाद-गुणयुक्ता च अस्ति। काव्येषु अयं ग्रन्थः सर्वश्रेष्ठः कथ्यते। अस्मिन् करुण रसस्य प्राधान्यं अस्ति। रामायणेन वाल्मीकेः कीर्तिः अद्य अपि अजरा अमरा च अस्ति।

शब्दार्थ—रचयिता=बनाने वाले। अपि=भी। सुन्दरतमं=सब से सुन्दर। परिष्कृता=शुद्ध। प्रसाद गुण युक्ता=सरल।

(८)

सर्वे जनाः सुखं इच्छन्ति। सुखंच धनेन एव प्राप्तुं शक्यते। अतः धनोपार्जनस्य महती आवश्यकता भवति। अद्यत्वे कुत्रापि गच्छामः तत्र धनस्य महत्वं पश्यामः। धनेन विना विद्योपार्जनं कर्तुं न शक्यते, जीविका निर्वाहश्च न भवति। यस्य समीपे धनं नास्ति तस्य कश्चित् अभिलाषः न पूर्तिं एति। यस्य समीपे च धनं भवति स एव सुखेन शेते, स एव संसारे विद्वान् दानी वक्ता च कथ्यते। यस्य समीपे धनं भवति तस्य एव मित्राणि अपि भवन्ति नतु निर्धनस्य।

शब्दार्थ—अद्यत्वे=आजकल। कश्चित्=कोई। शेते=सोता है। एति=प्राप्त होती है।

(९)

संस्कृत भाषा विश्वस्य सर्वासु भाषासु प्राचीनतमा सर्वोत्तम साहित्य युक्ता च

तदनन्तरम् ते परमेश्वरं स्मरन्ति । स्वास्थ्यरक्षार्थं ते व्यायामं प्राणायामं च कुर्वन्ति । प्रातरेव ते पूर्वाधीतान् पाठान् अनुशीलयन्ति । ततस्ते भोजनं कृत्वा पाठशालां गच्छन्ति । शालायां ते ध्यानपूर्वकं पाठान् पठन्ति, शिक्षकस्य च शिक्षां शृण्वन्ति । अन्तर्वेलायां ते विरमन्ति क्रीडन्ति वा । ततः सर्वं दैनिकं कर्म समाप्य ते स्वगृहाणि प्रत्यागच्छन्ति, एवं प्रतिदिनं शालायां पठन्तो व्यायामं च कुर्वन्तो विद्यार्थिनः सुखं जीवन्ति, बलं, बुद्धिं तेजो यशश्च याप्नुवन्ति ।

शब्दार्थ—ब्राह्म मुहूर्ते=शीघ्र प्रातः काल । समुत्थाय=उठकर । पूर्वाधीतान्= पहले पढ़े हुए । अन्तर्वेलायाम्=खेलघंटी में । विरमन्ति=विश्राम करते हैं । प्रत्यागच्छन्ति=लौट आते हैं ।

year Examination of the three year Degree course, 1961

HINDI

Time:—3 Hours M. M.—100

१. 'आचार शास्त्र' से आप क्या समझते हैं ? समाज में इसकी आवश्यकता सिद्ध करते हुए इसके कुछ नियम बताइये। १२

अथवा

"मधुरता और सहानुभूति से प्रेम की उत्पत्ति होती है तथा अविचारपूर्ण उपहास से घृणा की।" उक्त कथन की अपने पढ़े हुए उदाहरणों द्वारा संक्षेप में पुष्टि कीजिये।

अथवा

"अतिथि-सत्कार में दिव्य गुण है, अपूर्व शक्ति है, इसकी महती महिमा अमूल्य है।" उक्त कथन की उपयुक्त उदाहरणों द्वारा पुष्टि कीजिये।

२. (क) श्रेष्ठ एकांकी के गुण बताते हुए निम्नलिखित एकांकियों में से किसी एक पर अपने विचार प्रकट कीजिये :— १०

जज का फैसला; अधिकार का रक्षक; सत्य का मंदिर।

अथवा

'एक दिन' नामक एकांकी के लेखक का नाम लिखिये और बताइये कि लेखक ने इसके द्वारा आपका ध्यान किन बातों की ओर आकर्षित किया है।

(ख) अपनी पाठ्य-पुस्तक मे संगृहीत किन्हीं आठ एकांकियों के तथा उनके लेखकों के नाम लिखिये। ८

अथवा

अपनी पाठ्य-पुस्तक के एकांकियों के आधार पर निम्नलिखित पात्रों मे से किन्हीं चार का संक्षिप्त परिचय दीजिये। उत्तर एक पृष्ठ से अधिक न हो।

शीला, वीरसिंह, राजनाथ, मणिभद्र, आबाजी सोनदेव, धवलकीर्ति।

३. (क) "अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान बहुधा हमारे संकुचित व्यवहारों का सुधार करता है।" उक्त कथन की अपनी पढ़ी हुई कहानी के आधार पर पुष्टि कीजिये। १२

अथवा

माखनलाल चतुर्वेदी, सुदर्शन तथा भगवतीचरण वर्मा में से किसी एक कहानी पर अपने विचार प्रकट कीजिये।

(ख) 'समाज और धर्म' नामक निबन्ध मे लेखक ने क्या विचार प्रकट किये हैं ? संक्षेप में लिखिये। १२

अथवा

'रामलीला' अथवा 'अमरनाथ के पथ पर' नामक लेख से आपको क्या अनुभव प्राप्त होता है ? लगभग दो पृष्ठों में लिखिये।

४. (क) निम्नलिखित मे से किन्ही तीन के चार चार पर्यायवाची शब्द लिखिये :— ४

(i) यमुना, (ii) विष्णु, (iii) समुद्र, (iv) पृथ्वी, (v) हाथी, (vi) सोना।

(ख) निम्नलिखित शब्द-युग्मों में से किन्ही चार का अन्तर स्पष्ट कीजिये :— ४

(i) अविराम और अभिराम। (ii) अनल और अनिल (iii) जलद और जलज। (iv) प्रसाद और प्रासाद। (v) वित्त और वृत्त (vi) शर और सर।

(ग) निम्नलिखित वाक्यों मे से किन्ही तीन को शुद्ध रूप मे लिखिये :—३

(i) सच्चा मित्र जीवन में कोई एक ही विरला होता है।

(ii) नवल बाबू कल यहां से मोटरों मे रवाना होकर गये हैं।

(iii) जब श्री सुशीलादेवी ने सभापत्नी का आसन ग्रहण किया तो सब ने जोर से तालियाँ बजाई।

(iv) सिंह की पुकार सुनते ही मेरा घोड़ा जोर जोर से चिल्लाने लगा।

(v) वे हर समय मूर्खो की तरह ही आपस में लड़ते रहे।

(vi) आज इस भवन पर नेताजी ने झण्डा उड़ाया है।

(घ) निम्नलिखित मुहावरों में से किन्ही चार का अर्थ बताते हुए वाक्यों मे प्रयोग कीजिये :— ४

(i) हाथ फैलाना। (ii) हाथ मलना। (iii) कान खड़े होना। (iv) गंगा नहाना। (v) कलम तोड़ना। (vi) आंधी के आम। (vii) आस्तीन का सांप।

५. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर लगभग चार पृष्ठों में निबन्ध लिखिये :— २५

(i) देशभक्ति, (ii) विद्यार्थी जीवन, (iii) विज्ञान के चमत्कार, (iv) अनिवार्य सैनिक शिक्षा, (v) कुटीर उद्योग, (vi) श्रमदान।

६. निम्नलिखित अवतरण का शुद्ध हिन्दी में अनुवाद कीजिये :— १०

When Rama, accompanied by Lakshmana and Sita, set out on his journey to the forest, the people of Ayodhya followed them as far as the banks of the river Tamasa. When it grew dark, all the people slept on beds of leaves, At daybreak, Rama arose from his bed of leaves and seeing the people still asleep, said to his brother—'Behold these people, devoted to us and unmindful of their own interests, sleeping beneath these trees. They have vowed to take us back and will never leave us. Let us, therefore, gently mount the chariot and take our departure.' Then Sumantra, at the command of Rama, yoked the horses to the chariot and they all departed.

अथवा

बाल्यकाले विशेषतो बालकस्योपरि संसर्गस्य प्रभावो भवति। बालको यादृशैः बालकैः सह संगतिं करिष्यति तादृश एव भविष्यति। अतो बाल्यकाले दुर्जनैः सह संगतिः कदापि न करणीया। दुर्जनानां संसर्गेण बहवो हानयो भवन्ति। यथा—दुर्जन-संसर्गेण मनुष्योऽसद्वृत्तो भवति, दुर्विचारयुक्तो भवति, तस्य बुद्धिर्दूषिता भवति, अतः बुद्धिः क्षीयते, दुर्व्यसनग्रस्तो भवति, अतस्तस्य शरीरं क्षीणं निर्बलं च भवति, तस्य कीर्तिः नश्यति, सर्वत्रानादरो भवति, सर्वत्राप्रतिष्ठाभाजनं च भवति।

First year Examination of the three year Degree course,

GENERAL HINDI

Time -3 Hours M. M. —100

१. आत्म-संयम प्राप्त करने के लिए मनुष्य को किन किन संयमों की साधना करनी पड़ती है, उन पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

'सम-वयस्क' से आप क्या समझते हैं? ऐसे व्यक्तियों के प्रति आप का कैसा आचरण होना चाहिए, संक्षेप में बतलाइये।

अथवा

'जो तो कूँ काँटा बुवै, ताहि बोइ तू फूल' इस कथन का अभिप्राय समझाते हुए बतलाइये कि इसे आचरण में कैसे सार्थक किया जा सकता है।

२. (क) 'मान-मन्दिर' के लेखक का क्या नाम है? इस एकांकी पढ़ने से आप में जिन भावनाओं का उद्रेक होता है उन पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

"धवलकीर्त्ति! तुमने अपने नाम को धवल ही रहने दिया।" सिद्ध कीजिये कैसे?

(ख) कहानी और एकांकी नाटक में क्या भेद है, संक्षेप में लिखिये।

अथवा

'शिवाजी का सच्चा स्वरूप' एकांकी में लेखक ने आप का ध्यान शिवाजी के चरित्र की किस विशेषता की ओर आकर्षित किया है, स्पष्ट कीजिये।

३. (क) 'प्राचीन भारत की एक झलक' लेख से प्राचीन भारत के बारे में आप की क्या धारणा बनती है, उस पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

'अमरनाथ के पथ पर' लेख में आप को कौन कौन से दृश्य प्रभावित करते हैं, संक्षेप में उन दृश्यों का रेखा-चित्र प्रस्तुत कीजिये।

(ख) 'कच्चा रास्ता' कहानी से आप के विचारों पर क्या प्रभाव पड़ता है, संक्षेप में लिखिये।

अथवा

'हार की जीत' कहानी में किस की हार और किस की जीत हुई और कैसे ? सहित उत्तर दीजिये ।

४. (क) निम्नलिखित शब्द-युग्मों में से किन्ही तीन का अन्तर स्पष्ट जिये :— ३

(i) शंकर और संकर (ii) सर्वदा और सर्वथा । (iii) लक्ष और क्ष्य (iv) भुवन और भवन । (v) अनल और अनिल । (vi) बलि और बली । vii) पानी और पाणि । (viii) प्रणाम और प्रमाण ।

(ख) नीचे लिखे मुहावरों में से किन्ही चार का अर्थ बतलाते हुए वाक्यों प्रयोग कीजिये :— ४

(i) ढाक के तीन पात, (ii) भाड़ झोंकना, (iii) भंडा फोड़ना, (iv) या डुबोना, (v) हाथ साफ करना, (vi) घी के दीपक जलाना ।

(ग) नीचे लिखे शब्दों में से किन्ही चार के विलाम शब्द लिखिये :— २
मुक्त, सुकर, साधारण, आकाश, उत्थान, आय, उदय, अपना ।

(घ) नीचे लिखे शब्दों में से किन्ही चार के तीन तीन पर्यायवाची शब्द ३

किरण, तम, दूध, देवता, लक्ष्मी, शरीर, संसार ।

(ङ) नीचे लिखे वाक्यों में से किन्ही तीन को शुद्ध रूप में लिखिये :— ३
(i) राम अथवा श्याम कोई आयेंगे ही । (ii) शिष्य ने गुरु का दर्शन (iii) उनकी सौजन्यता पर कौन मुग्ध नहीं होगा । (iv) अनेकों वहाँ एकत्रित हुए थे । (v) राम की उपेक्षा श्याम श्रेष्ठ है ।

नीचे लिखे विषयों में से किसी एक विषय पर चार पृष्ठों का निबन्ध — २५

विद्यार्थी और अनुशासन । (ख) शासन में विकेन्द्रीकरण । (ग) के साधन । (घ) महिला शिक्षा ।

चे लिखे अवतरण का शुद्ध हिन्दी में अनुवाद कीजिये :— १०

Minister, Shri Nehru, said that he would not like become merely book-worms. They should develop an ersonality and do well in every field, in their studies,

debating societies and other activities They had to develop bo their mind and body and try to become first rate men. He furthe said that it was the first and foremost duty of the youth to creat an atmosphere in their universities and outside where the themselves kept to the right path and also prevented others fro doing wrong.

अथवा

स्वतन्त्रे भारते अस्मिन् हिन्दी भाषायाः महत्त्वं तु स्पष्टमेवास्ति। वर्तमानकाले आङ्गलभाषायाः स्थाने एषा हिन्दी भाषैव स्थापिता भविष्यति। राजकीयकार्यालयाना भाषापि एषा भाषा एव भविष्यति। परं संस्कृत-भाषाया ज्ञानमन्तरेण वयं हिन्दी भाषाया सम्यक्ज्ञानमपि कर्तुं न शक्नुमः। अतः अस्ति महती आवश्यकता संस्कृतभाषायाः स्वतन्त्रे युगेऽस्मिन्। न आङ्गलभाषा ताहशी आवश्यकता। गौणरूपेणैषा भाषाऽपि प्रचलिता स्यात् परं संस्कृतभा न अस्माभिरुपेक्षणीया।